Exercise- 1

बुबाई के समय वह बराबर किसानों के लड़को के साथ रहते थे। धान की कटाई के समय भी वह छोटा-सा हसिया लिये खेत पर मौजूद रहते थे। धान के पौधों से वह खडाऊं बनाते थे और अपने पहनने के लिए कपड़ा भी बुन लेते थे। मछली पकड़ना और तरह-तरह की चिड़ियों को पालना भी उनके ही सुपुर्द था। घर के घोड़े के लिए घास खोदने को कागावा ही भेजे जाते थे और यह काम उनको पसन्द भी था।

घोड़ो से उनको प्यार था। कागावा अपनी धुन के पक्के थे। जो अच्छे विचार उनके मन में आते , उन पर अमल करने के लिए वह तुरन्त तैयार हो जाते। कहीं पर एक बिल्ली का बच्चा मोरी में डूब रहा था। कागावा उसे उठा लाये और नहला कर उसको अपने कमरे में रख लिया। एक मरियल कुत्ते को , जो न घर का था न घाट का , उन्होने अपनी देखरेख में ले लिया। जब दूसरे विधार्थियों ने इस पागलपन का विरोध किया तो उन्होने कहा , किसी सुन्दर और हट्टे-कट्टे कुत्ते को तो चाहे जो प्रेम कर सकता हैं, पर इस अभागे कुत्ते की चिन्ता कौन करेगा? कुत्ते और बिल्ली तक तो गनीमत थी, पर कागावा ने तो कमाल ही कर दिया।

वह रास्ते चलते एक भिखारी को अपने कमरे में ले आये और उसे अपने साथ रहने के लिए जगह दे दी। यही नहीं, वे उसे अपने पास से ही भोजन भी कराने लगे, मानों वह उनका सगा भाई ही हो। मई 1814 में उनका विवाह हुआ, बसंती देवी जब उनके यहाँ आई, उसने देखा, छः 5 फुट लम्बी और छः फुट चौड़ी एक कोठरी में ही उनका घर था और कागावा ने जिसे अपना परिवार कह कर परिचय कराया थ, उसमें एक भी आदमी उनका सगा-संबंधी नही था। 70 साल का एक बूढा और उसकी 60 साल की बुढ़िया थी, जिन्हें कोई दूसरी जगह न मिलने पर कागावा ने कोठरी दे दी थी।

और सदस्यों में अधेड उम्र की एक स्त्री थी। जो कागावा के घर में आने के पहले दर-दर की ठोकरें खाती फिरती थी। इसके अलावा एक भिखारिन और एक 11 साल का लड़का भी था। कागावा को जो थोडे से रुपये मिलते थे, उनमें से भी कुछ दान कर देते थे , यहाँ तक कि अपने जूते और कपड़ा भी दे डालतेथे। अपने से भी गरीब विधाथिर्यो की सेवा करने के लिए वे सदा तैयार रहते थे। टाल्स्टाय रूस के एक बड़े महात्मा हो गये है।

कागावा ने उनकी किताबो को पढ़ा। इन किताबो में टाल्स्टाय ने लोगों को अहिंसा पर चलने की सलाह दी थीं। उन दिनो रूस और जापान में लड़ाई हो रही थी। कालेज की एक सभा में कागावा ने लड़ाई का विरोध किया और दोनो पक्षो को शान्ति से रहने की बात कही। इसका नतीजा यह हुआ कि उनके साथी विधाथिर्यो ने उनको देश का दुश्मन कहकर बदनाम करना शुरू किया और उनसे सारे संबंध तोड़ लिए। विधाथिर्यो को आशा थी कि कागावा दब जायगें , पर वे दबने वाले नहीं थे। इस पर अंत में विद्यार्थियों ने एक जाल रचा।

रात के समय कागावा को भरमा कर कालेज के बाहर खेल के मैदान में ले गये और वहाँ बीस विद्यार्थियों ने मिलकर उनकी खूब मरम्मत की। जिस समय उन पर घूसों की बौंछार हो रही थीं,

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

Exercise- 2

चाहे मानसून समय से पहले आए, समय पर आए या देर से आए। अभी हमें अतिवृष्टि की कहानियां सिर्फ पहाड़ों से सुनने को मिल रही हैं। यही पानी जब नदियों के जरिये नीचे आएगा , तो बाढ़ बनकर मैदानी इलाकों को परेशान करेगा। जो बारिश हमारे जीवन का आधार है और जिसके लिए साल भर प्रार्थनाए करते हैं , वही बारिश जब आती है , तो अक्सर हमें उससे फायदा कम मिलता है और नुकसान ज्यादा हो जाता है। कहा जाता है कि कुदरत के आगे किसी का बस नहीं चलता, लेकिन हम इतना तो कर ही सकते हैं कि कुदरत के रुझान को समझते हुए ऐसे तरीके अपनाएं कि आपदा के समय हमारा नुकसान कम से कम हो। यही ऐसा काम है, जो देश में कहीं नहीं किया जा रहा। अगर भूस्खलन की आशंका वाले क्षेत्रों की ठीक से पहचान कर ली जाए और आबादी को वहां से दूर बसा दिया जाए, तो बहुत से जान माल के नुकसान से बचा जा सकता है। ऐसी बहुत से चीजें की जा सकती हैं। पिछले कई साल से वर्षा जल के अधिकतम उपयोग पर चर्चा हो रही है , लेकिन हकीकत यही है कि वर्षा का ज्यादातर जल अब भी नालों और नदियों से बहकर समुद्र में जा मिलता है। न उसका इस्तेमाल जल संकट के समाधान के लिए हो पाता है और न ही भूमिगत जल को रिचार्ज करने के लिए। इसी तरह इन दिनों आपदा प्रबंधन की चर्चा भी काफी होती रहती है। आपदा प्रबंधन का पाठ एक विषय के तौर पर बच्चों को पढ़ाया भी जाने लगा है। लेकिन दिक्कत है कि यह पाठ हमारे नीति-नियामकों को कभी नहीं पढ़ाया जा सका। हर बार जब आपदा आती है , तो इसके प्रबंधन की तैयारियों की पोल भी खुल जाती है। जैसा कि हमने पिछले दो दिनों में देखा भी कि आपदा आ जाने के बहुत बाद इमरजेंसी फोन नंबर की घोषणा हुई , जबकि यह काम बहुत पहले ही हो जाना चाहिए था। हर बार की तरह आपदा प्रबंधन विभाग की बजाय सीमा सुरक्षा बल के जवानों ने ही लोगों की मदद की। भारतीय रुपये के कमजोर होने की खबर इन दिनों अखबारों में नियमित स्तंभ-सी बन गई है। हर रोज डॉलर के मुकाबले रुपये की कीमत का नीचे आ जाना सिर्फ रुपये का मामला नहीं है, कहीं न कहीं इसमें कमजोर होती भारतीय अर्थव्यवस्था की झलक भी देखी जा सकती है। वैसे यह भी बताते चलें कि डॉलर के मुकाबले गिरावट सिर्फ रुपये में नहीं दिख रही , दुनिया की कई दूसरी मुद्राएं भी इस मोर्चे पर गोता लगा रही हैं। लेकिन सच यह भी है कि जितनी गिरावट इस समय भारतीय रुपये में दिख रही है , उतनी किसी अन्य मुद्रा में नहीं दिख रही। किसी भी मुद्रा में गिरावट का पहला और सबसे बड़ा कारण होता है विदेश व्यापार का घाटा। यानी हम जितना आयात कर रहे हैं, उतना निर्यात नहीं कर पा रहे। दूसरे शब्दों में कहें , तो हम जितनी विदेशी मुद्रा खर्च कर रहे हैं, उससे कहीं कम कमा पा रहे हैं। जाहिर है कि विदेशी मुद्रा कम होगी , तो उसकी कीमत बढ़ेगी ही, यानी उसके मुकाबले रुपया नीचे आएगा ही। लेकिन विदेश व्यापार घाटा कोई नई चीज नहीं है , न जाने कब से यह हमारी अर्थव्यवस्था का एक सच बना हुआ है। ऐसे में, अचानक क्या हो गया कि रुपया इतनी तेजी से नीचे आ रहा है ? दरअसल, पिछले कई वर्षो तक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष निवेश के रूप में विदेशी मुद्रा लगातार देश में आती रही। उस दौरान विदेशी मुद्रा की कमी न पड़ने की वजह से रुपया भी काफी कुछ स्थिर रहा। लेकिन विदेशी निवेश का यह स्नोत अब सूखने लग गया है। विदेशी निवेश में आई इस कमी के ढेर सारे कारण हैं। अगर विश्वव्यापी आर्थिक मंदी जैसे बड़े कारण को छोड़ भी दें, तो एक कारण यह है कि दुनिया भर के निवेशकों को अब भारत में वे संभावनाएं

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

Exercise- 3

तीन तलाक के मुद्दे पर सर्वोच्च न्यायालय में बहस जारी है और पूरी दुनिया की नजरें इस ऐतिहासिक न्यायिक कार्यवाही पर लगी हुई हैं। धर्मनिरपेक्ष भारत में महिलाओं को धर्म के नाम पर उनके वाजिब संवैधानिक अधिकारों से महरूम रखने की चली आ रही रवायतों के खिलाफ यह जंग से कम नहीं है।

यह जंग मजहब और हुकूमत के बीच में नहीं हो रही है बल्कि इंसानियत के दायरे को हर मजहब के दायरे से ऊपर रखने के लिए हो रही है। भारत में हर व्यक्ति को निजी तौर पर अपने यकीन के मुताबिक किसी भी मजहब को मानने का हक है मगर इसका मतलब यह कहीं नहीं निकलता कि उस मजहब के मानने वाले दूसरे लोग उसे अपनी मर्जी के मुताबिक उस मजहब में बनाई गई रवायतों पर चलने के लिए मजबूर करें।

भारतीय संविधान में धर्म पूरी तरह निजी मामला है। चाहे हिन्दू हो या मुसलमान , किसी को भी यह अधिकार संविधान नहीं देता है कि वह इनके समाज की गढ़ी गई रवायतों का पाबन्द हो। किसी भी समाज के व्यक्ति को निजी आधार पर अपनी जिन्दगी अपने ढंग से जीने का हक संविधान में मिला हुआ है।

अतः किसी भी मुस्लिम महिला को इस बात के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता कि मुसलमान होने की वजह से वह तीन तलाक की हुक्मबरदारी में रहे। भारत के एक शहरी होने के मुताबिक वह संविधान की राह पकड़ कर अपना वह हक मांग सकती है जो उसे मर्द के बराबर के हुकूक अता करता है।

यह हुकूमत का मजहब में दखल नहीं हो सकता बल्कि मजहब का हुकूमत को कानून से बेपरवाही बरतने का पयाम जरूर हो सकता है। दीगर सवाल यह है कि किसी महिला के मुसलमान होने से उसके कानूनन हक कैसे बदल सकते हैं? औरतों को जो हक कानून से मिले हुए हैं उनमें बदलाव कैसे आ सकता है ? क्या मुसलमान होने से किसी औरत को कुदरत से मिले हुए फनो में फर्क पैदा हो सकता है?

मगर मजहबी रवायतों के नाम पर उसके साथ फर्क उसकी उस हस्ती को नकारने के अलावा और कुछ नहीं है जो संविधान ने उसे दी हुई है और वह यह है कि उसके हक मर्द से कमतर नहीं हैं। इसलिए मजहब को बीच में लाने की जो लोग कोशिश कर रहे हैं , वे औरत के हौंसले को तोलना चाहते हैं और दिखाना चाहते हैं कि मजहब के नाम पर उसकी हस्ती कमजोर ही लिख दी गई है।

क्या सितम है कि इस्लामी मुल्कों में औरत वजीरे आजम के औहदे पर बैठ सकती है मगर भारत में अपनी किस्मत को खुद नहीं लिख सकती। उसे हर कदम पर ताकीद की जाती है कि वह कौन से कपड़े पहने, किस तरह अपनी जिन्दगी के फैसले ले और किस फन को हासिल करे या न करे। मुल्ला और कथित उलेमा उसके हर कदम की पैमाइश करेंगे और बतायेंगे कि उसकी मजहब में क्या हैसियत है।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

तो इसका अर्थ सिर्फ इतना है कि पूरी व्यवस्था में या तो कोई बड़ी खामी है या कोई बड़ी लापरवाही। यह भी हो सकता है कि ऐसे बड़े आयोजनों के लिए प्रशासनिक तंत्र को महीनों पहले से कड़ी ट्रेनिंग दी जाए और ऐसे इंतजाम भी किए जाएं कि यह तंत्र आयोजन के दौरान लगातार सक्रिय रहे। जब संचार के इतने ज्यादा साधन नहीं थे , उस दौर में ऐसे हादसों के बहुत ज्यादा उदाहरण नहीं मिलते। संचार के इस युग में ऐसे हादसों का होना सचमुच शर्मनाक है। बढ़ती आबादी भारत जैसे देशों की समस्या है। दुनिया के कई देशों, खासकर पश्चिम के लिए यह कोई बहुत बड़ी समस्या नहीं है। जापान जैसे देशों में तो मृत्यु दर और जन्म दर , दोनों ही तेजी से घट रही हैं। वहां समस्या यह है कि बूढ़ों की संख्या बहुत ज्यादा है और बच्चों की संख्या बहुत कम। पश्चिमी देशों में स्थिति इतनी बुरी नहीं है, लेकिन हालात इसी तरफ बढ़ रहे हैं। एशिया और अफ्रीका के ज्यादातर देश ही हैं , जो आबादी बढ़ने से परेशान हैं और इस पर नियंत्रण के लिए अपने बहुत-से संसाधन और अपनी बहुत-सी ऊर्जा खर्च करते हैं। और इन्हीं देशों की वजह से पूरी दुनिया की कुल जमा आबादी भी बढ़ रही है। लेकिन एक चीज है, जो बढ़ती आबादी के इन आंकड़ों को मात देने जा रही है। वह चीज है , मोबाइल फोन की संख्या। इंसान की आबादी और मोबाइल फोन की संख्या का अंतर बहुत तेजी से घट रहा है। ताजा आंकड़े बताते हैं कि आबादी की तुलना में मोबाइल फोन की संख्या 87 फीसदी तक पहुंच गई है। अनुमान है कि इस साल के अंत तक दुनिया में मानव आबादी से ज्यादा मोबाइल फोन होंगे। और सन 2017 तक तो इनकी संख्या मानव आबादी की 140 फीसदी होगी। यानी औसतन पांच लोगों के परिवार के पास कम से कम सात मोबाइल फोन तो होंगे ही। दिलचस्प बात यह है कि दुनिया में सबसे ज्यादा मोबाइल फोन चीन में हैं और उसके बाद भारत का नंबर आता है। अमेरिका इस मामले में तीसरे नंबर पर है। हमारे देश के ताजा आंकड़े बताते हैं कि देश में इस समय 89 करोड़ से भी ज्यादा सक्रिय मोबाइल फोन हैं , जबकि देश की आबादी 1.26 अरब के आस-पास है। यानी औसत के हिसाब से हम यह मान सकते हैं कि देश में जितने भी वयस्क लोग हैं , उनमें से ज्यादातर के पास मोबाइल फोन है। पर क्या वास्तव में ऐसा है ? हमें पता है कि यह सच नहीं है। देश में अब भी दूर-दराज के बहुत से इलाके ऐसे हैं, जहां मोबाइल फोन के सिग्नल नहीं पहुंचते। इन इलाकों की आबादी कितनी भी कम क्यों न हो, पर उनके लिए अब भी मोबाइल फोन रखने का कोई अर्थ नहीं है। यह सच है कि मोबाइल फोन की तकनीक पिछले कुछ साल में काफी तेजी से सस्ती हुई है, जिसकी वजह से बहुत गरीब लोगों के हाथों में भी मोबाइल फोन पहुंच गए हैं। मोबाइल फोन अब शहरी ही नहीं, ग्रामीण जीवन का भी एक जरूरी हिस्सा बन गए हैं। लेकिन ये अभी इतने भी सस्ते नहीं हुए कि गरीबी की रेखा के नीचे जीने वाले करोड़ों परिवारों के सभी वयस्क सदस्यों के हाथों में ये पहुंच सकें। यह जरूर है कि आपको शहरों और कस्बों में ऐसे लोग मिल जाएंगे , जो एक से ज्यादा फोन रखते हैं और इनकी वजह से ही औसत गड़बड़ा जाता है। इसे हम मोबाइल फोन की विषमता या गैर-बराबरी भी कह सकते हैं (कंप्यूटर और इंटरनेट के मामले में इसे डिजिटल डिवाइड भी कहा जाता है)- यानी एक तरफ ऐसे लोग हैं , जिनके पास एक से ज्यादा मोबाइल फोन हैं और दूसरी तरफ, ऐसे लोग हैं, जिनके लिए मोबाइल फोन अब भी एक सपना बना हुआ है। यह हालत कम या ज्यादा दुनिया के उन सभी देशों की है, जिन्हें हम विकासशील देश कहते हैं

Exercise- 5

ऊपर आ जायंगेे तब कहीं सबेरा होगा। अभी पहर से ऊपर रात हैं। हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का एक बाग था। पतझड़ शुरु हो गई थी। बाग में पत्तियो को ढेर लगा हुआ था। हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियों बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ। रात को कोई मुझें पत्तियों बटोरते देख तो समझे, कोई भूत है। कौन जाने, कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रह जाता।

उसने पास के अरहर के खेत मे जाकर कई पौधें उखाड़ लिए और उनका एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिये बगीचे की तरफ चला। जबरा ने उसे आते देखा , पास आया और दुम हिलाने लगा। हल्कू ने कहा-अब तो नहीं रहा जाता जबरू। चलो बगीचे में पत्तियों बटोरकर तापें।

गरम हो जायेंगे, तो फिर आकर सोयेंगे। अभी तो बहुत रात है। जबरा ने कूँ-कूँ करें सहमति प्रकट की और आगे बगीचे की ओर चला। बगीचे में खूब अँधेरा छाया हुआ था और अंधकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था। वृक्षों से ओस की बूँदे टप-टप नीचे टपक रही थीं।

एकाएक एक झोंका मेहँदी के फूलों की खूशबू लिए हुए आया। हल्कू ने कहा-कैसी अच्छी महक आई जबरू। तुम्हारी नाक में भी तो सुगंध आ रही हैं? जबरा को कहीं जमीन पर एक हडडी पड़ी मिल गई थी। उसे चिंचोड़ रहा था। हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियों बटोरने लगा। जरा देर में पत्तियों का ढेर लग गया था। हाथ ठिठुरे जाते थें।

नगें पांव गले जाते थें। और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था। इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा। थोड़ी देर में अलावा जल उठा। उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थें , मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर सँभाले हुए हों।

अन्धकार के उस अनंत सागर मे यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता , मचलता हुआ जान पड़ता था। हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था। एक क्षण में उसने दोनों पांव फैला दिए , मानों ठंड को ललकार रहा हो, तेरे जी में आए सो कर। ठंड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था।

उसने जबरा से कहा-क्यों जब्बर , अब ठंड नहीं लग रही है ? जब्बर ने कूँ-कूँ करके मानो कहा-अब क्या ठंड लगती ही रहेगी ? पहले से यह उपाय न सूझा , नहीं इतनी ठंड क्यों खातें। जब्बर ने पूँछ हिलायी। अच्छा आओ, इस अलाव को कूदकर पार करें। देखें , कौन निकल जाता है। अगर जल गए बचा, तो मैं दवा न करूँगा।

जब्बर ने उस अग्नि-राशि की ओर कातर नेत्रों से देखा। मुन्नी से कल न कह देना , नहीं लड़ाई करेगी। यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 6

कभी उसके सींगों को पकड़ कर कूदता हुआ नीचे उतर जाता तो कभी उसके ऊपर यमराज की तरह एक छड़ी लेकर सवारी कर लेता। भारतीय मिथक परम्पराओं में यमराज की सवारी भैंसा बतलाई जाती है। उसी वन के एक वृक्ष पर एक यक्ष रहता था। उसे छेड़खानी बिल्कुल पसन्द न थी। उसने कई बार बंदर को दंडित करने के लिए भैंसा को प्रेरित किया क्योंकि वह बलवान और बलिष्ठ भी था।

किंतु भैंसा ऐसा मानता था कि किसी भी प्राणी को चोट पहुँचाना शीलत्व नहीं हैय और दूसरों को चोट पहुँचाना सच्चे सुख का अवरोधक भी है। वह यह भी मानता था कि कोई भी प्राणी अपने कर्मों से मुक्त नहीं हो सकता। कर्मों का फल तो सदा मिलता ही है। अतः बंदर भी अपने बुरे कर्मों का फल एक दिन अवश्य पाएगा। और एक दिन ऐसा ही हुआ जबकि वह भैंसा घास चरता हुआ दूर किसी दूसरे वन में चला गया।

संयोगवश उसी दिन एक दूसरा भैंसा पहले भैंसा के स्थान पर आकर चरने लगा। तभी उछलता कूदता बंदर भी उधर आ पहुँचा। बंदर ने आव देखी न ताव। पूर्ववत् वह दूसरे भैंसा के ऊपर चढ़ने की वैसी ही धृष्टता कर बैठा। किंतु दूसरे भैंसा ने बंदर की शरारत को सहन नहीं किया और उसी तत्काल जमीन पर पटक कर उसकी छाती में सींग घुसेड़ दिये और पैरों से उसे रौंद डाला।

क्षण मात्र में ही बंदर के प्राण पखेरु उड़ गये। कभी हिमालय के घने वनों में एक हाथी रहता था। उसका शरीर चांदी की तरह चमकीला और सफेद था। उसकी आँखें हीरे की तरह चमकदार थीं। उसकी सूंड सुहागा लगे सोने के समान कांतिमय थी। उसके चारों पैर तो मानो लाख के बने हुए थे।

वह अस्सी हजार गजों का राजा भी था। वन में विचरण करते हुए एक दिन सीलवा ने एक व्यक्ति को विलाप करते हुए देखा। उसकी भंगिमाओं से यह स्पष्ट था कि वह उस निर्जन वन में अपना मार्ग भूल बैठा था। सीलवा को उस व्यक्ति की दशा पर दया आयी। वह उसकी सहायता के लिए आगे बढ़ा।

मगर व्यक्ति ने समझा कि हाथी उसे मारने आ रहा था। अतः वह दौड़कर भागने लगा। उसके भय को दूर करने के उद्देश्य से सीलवा बड़ी शालीनता से अपने स्थान पर खड़ा हो गया , जिससे भागता आदमी भी थम गया। सीलवा ने ज्योंही पैर फिर आगे बढ़ाया वह आदमी फिर भाग खड़ा हुआ और जैसे ही सीलवा ने अपने पैर रोके वह आदमी भी रुक गया तीन बार जब सीलवा ने अपने उपक्रम को वैसे ही दो हराया तो भागते आदमी का भय भी भाग गया।

वह समझ गया कि सीलवा कोई खतरनाक हाथी नहीं था। तब वह आदमी निर्भीक हो कर अपने स्थान पर स्थिर हो गया। सीलवा ने तब उसके पास पहुँचा कर उसकी सहायता का प्रस्ताव रखा। आदमी ने तत्काल उसके प्रस्ताव को स्वीकार किया। सीलवा ने उसे तब अपनी सूँड के उठाकर पीठ पर बिठा लिया और अपने निवास-स्थान पर ले जाकर नानाप्रकार के फलों से उसकी आवभगत की।

अंततः जब उस आदमी की भूख-प्यास का निवारण हो गया तो सीलवा ने उसे पुनः अपनी पीठ पर बिठा कर उस निर्जन वन के बाहर उसकी बस्ती के करीब लाकर छोड़ दिया।

SONI TYPING TUTOR

चार महीने बाद यह पाया गया कि जिन नौजवानों को चलना-फिरना और खड़े रहना था , उनके खून में चीनी और लिपिड, यानी चर्बी का स्तर सबसे बेहतर था। आम कामकाज में थोड़ी सक्रियता दिखाना डायबिटीज और हृदय रोगों से बचाव के लिए जिम जाने से बेहतर तरीका है। इसका मतलब यह नहीं कि दूसरे व्यायाम से कोई फायदा नहीं है। जाहिर है, जोड़ों की मजबूती या मांसपेशियों की ताकत बढ़ाने के लिए अलग से व्यायाम जरूरी होंगे। सलमान खान की तरह बॉडी बनाने के लिए और भी ज्यादा व्यायाम की जरूरत होगी, लेकिन आम सेहत के लिए रोजमर्रा के कामकाज में सक्रिय रहना ही बेहतर है। आमतौर पर आजकल सलाह यही दी जाती है कि दिन में बस आधे घंटा तक व्यायाम करना सेहत के लिए जरूरी है , लेकिन इससे बेहतर सलाह यह होगी कि आप अपना काम खुद करें, दिन भर कुरसी पर न बैठे रहें। अगर घर में बगीचा हो , तो उसमें कुछ काम करें, लिफ्ट की बजाय सीढ़ियां इस्तेमाल करें और पास के बाजार तक पैदल जाएं। ऐसे ही एक और शोध में महिलाओं के तीन समूह बनाए गए। एक समूह को हफ्ते में दो दिन व्यायाम करने को कहा गया , दूसरे समूह को चार दिन और तीसरे समूह को हफ्ते में छह दिन उतना ही व्यायाम करने को कहा गया। कुछ दिनों बाद जब जांच की गई, तो यह पाया गया कि तीनों ही समूहों की महिलाओं को कुछ फायदा हुआ , लेकिन रोजाना कैलोरी की खपत चार दिन व्यायाम करने वाले समूह की सबसे ज्यादा थी , दो दिन व्यायाम करने वाले समूह की उनसे कम थी और छह दिन व्यायाम करने वाले समूह की कैलोरी की खपत तो कम हो गई थी। इसकी एक वजह तो यह थी कि जब शरीर व्यायाम करके थक जाता है , तो बाकी वक्त में गतिविधियां कम हो जाती हैं, यानी व्यायाम करने के बाद थके हुए आदमी का आराम कुछ ज्यादा हो जाता है और कैलोरी की खपत बढ़ने की बजाय कम हो जाती है। शोधकर्ताओं ने यह भी पाया कि शरीर में थकान के लक्षण न हों , तब भी व्यक्ति यह सोचता है कि व्यायाम में एक घंटा खर्च कर दिया , इसलिए समय बचाने के लिए वह सीढ़ियों की बजाय लिफ्ट ले लेता है और पैदल चलने की बजाय कार से जाना पसंद करता है। यह भी देखा गया कि अक्सर व्यायाम करने वालों का वजन घटने की बजाय बढ़ गया , क्योंकि एक घंटा व्यायाम करने के बाद उन्होंने मान लिया कि अब 23 घंटे आराम करने और कुछ भी खाने की छूट है। इसीलिए लोगों के जिम जाने से अक्सर जिम के मालिकों को फायदा होता है। केंद्र सरकार को यह लगता है कि खाद्य सुरक्षा अधिनियम 'गेम चेंजर' बन सकता है, देश की गरीब जनता को भुखमरी और कुपोषण से निकालने में और अगले आम चुनाव में वोट दिलवाने में भी। सरकार इस नियम को संसद के बजट सत्र में पास करवाना चाहती है और इसीलिए उसने तमाम राज्यों की लगभग सारी शर्तें मान ली हैं। राज्यों की आपत्तियां मुख्यतः दो मुद्दों पर थीं , राज्य नहीं चाहते कि वे केंद्र सरकार की शर्तों पर इस कानून पर अमल करें , वे अपने तरीके से उसमें बदलाव की छूट चाहते थे, इसके अलावा वे अनाज का मौजूदा कोटा बनाए रखना चाहते थे। वे यह भी चाहते हैं कि इस अधिनियम को लागू करने में जो अतिरिक्त खर्च आए , वह केंद्र सरकार उन्हें दे। केंद्र सरकार का कहना है कि इस मद में उसके 20,000 करोड़ रुपये अतिरिक्त खर्च होंगे। सरकार की मौजूदा आर्थिक स्थिति जैसी है और बजट घाटा जिस तरह नियंत्रण के बाहर जा रहा है, उसमें ये 20,000 करोड़ रुपये काफी भारी पड़ेंगे

Exercise- 8

अक्सर कहते हैं जहां ईश्वर भी नहीं होता वहां मां होती है। वो मां जो खुद गीले में सोकर बच्चे को सूखे में सुलाती है। अपने दूध से बच्चे को सींचती है। अंगुली पकड़ कर बच्चे को चलना सिखाती है , बच्चे को संस्कार देती है, बच्चे की प्रथम गुरु होती है। आज नैट का जमाना है।

हर चीज तुम्हें गूगल पर मिलती है पर अभी तक मां की जगह गूगल नहीं ले सका , न कभी ले सकेगा। मां की दुआ और आह कभी खाली नहीं जाती। पुत्र कुपुत्र हो सकता है , माता कुमाता कभी नहीं होती। मां की ममता के आगे कोई कुछ नहीं। यही साबित कर दिया मां आयशा ने जिसका बेटा आतंकी बन गया था। उसे मां की ममता ने एक आम इन्सान बना दिया और उसे वापस मुख्यधारा में ला दिया।

कहते हैं सुबह का भूला अगर शाम को घर वापस आ जाए तो उसे भूला नहीं कहते। कश्मीर के माजिद इरशाद खान को भी भूला नहीं कहना चाहिए। बीस साल के माजिद की कहानी भी कश्मीर घाटी के उन युवकों से मिलजी-जुलती है जो भटक चुके हैं। माजिद के बारे में सोशाल साइट्स पर बराबर इत्तेला आ रही थी कि वह खूंखार आतंकवादी संगठन लश्कर से जुड़ चुका है।

मासूम और आकर्षण से भरा यह गोरा-चिट्टा युवक आतंकवादी बन गया था यह पढ़कर हैरानी भी हो रही थी और एके-47 के साथ बराबर उसके वीडियो वायरल हो रहे थे। यह युवक गजब का फुटबॉलर था। जो काम कर्फो न कर सका वो एक मां ने कर दिखाया।

उसकी मां (आयशा) जो हमेशा अपने बेटे के आतंकी बन जाने की खबरों से बड़ी दुःखी थी और रोती रहती थी ने आखिरकार सोशल साइट्स पर अपनी करणामयी गुहार बेटे के नाम लगाते हुए कहा कि बेटा घर लौट आओ, अपने आप को पहचानो, मेरे आंसुओं की कीमत को समझो।

मां के आंसू देखकर बेटे का दिल पसीज उठा और उसने श्रीनगर में सैनिक और पुलिस अधिकारियों के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। दरअसल इस युवक के पिता को भी दिल का दौरा पड़ चुका था लेकिन मां के आंसू अब घर वापस ले आए। आत्मसमर्पण से पहले उसने अपनी मां से कहा कि मैं बहादुरी भरा फैसला लेने जा रहा हूं और आतंक का रास्ता छोड़कर घर वापस लौट रहा हूं।

यह युवक ग्रेजुएशन कर रहा है और अपने एक दोस्त यावर नासीर के एन्काउंटर में मारे जाने से दुखी था। उसकी आखरी विदाई में जब वह शामिल हुआ तो वह भावनाओं में बहकर भटक गया था।

ऐसी कहानियां अक्सर बॉलीवुड फिल्मों में देखने को मिलती है परंतु हकीकत में कश्मीर के फलसफे पर इस हृदय स्पर्शी कहानी का दर्द पूरा देश महसूस कर रहा है और मैं व्यक्तिगत रूप से यही कहना चाहूंगी कि घाटी के कई युवक बहक चुके हैं तो उन्हें राष्ट्रधारा में लौट आना चाहिए।

जो हाथ जम्मू-कश्मीर की एक अलग पहचान है , जो हाथ कश्मीरी शोले और दुशाले की कढ़ाई के लिए मशहूर हैं, जो हाथ पत्थरों पर बड़ी गजब की कलाकारी करते हैं

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 9

सारे बदन पर पट्टियां बंधी थीं। वह मेरी तरफ देखकर मुस्कराया। उसके गालों पर आंसू बहने लगे। धीमी आवाज में उसने कहा , मां, मुझे माफ करो। पुलिस के आदमी ने पैसे ले लिये हैं। तुम किन पैसों की बात कर रहे हो , कोलूशा? मैंने पूछा। वह बोला , अरे, वे पैसे, जो लोगों ने और एनोखिन ने मुझे दिये थे। मैने पूछा , उन्होंने तुम्हें पैसे क्यों दिये ? उसने कहा, इसलिए उसने धिरे से आह भरी। उसकी आंखें तश्तरी जैसी बड़ी हो रही थीं।

कोलूशा। मैंने कहा, यह क्या हुआ कि तुमने घोड़े आते हुए नहीं देखे। उसने साफ आवाज में हका , मां मैंने घोड़े आते देखे थे, लेकिन मेरे ऊपर से निकल जायंगे तो लोग मुझे जयादा पैसे देंगे, और उन्होंने दिये भी। ये उसके शब्द थे। मैं सब कुछ समझ गई , सब कुछ समझ गई कि उस फरिश्ते लाल ने ऐसा क्यों किया , लेकिन अब तो कुछ भी नहीं किया जा सकता था। अगले दिन सबेरे ही वह मर गया।

आखिरी सांस लेने तक उसकी चेतना बनी रही और वह बार-बार कहता रहा डैडी के लिए यह खरी लेना, वह खरीद लेना और मां अपने लिए भी , जैसे कि उसके सामने पैसा-ही पैसा हो। वास्तव में सैंतालिस रूबल थे। मैं एनोखिन के पास गयी लेकिन मुझे कुल जमा पांच रूबल दिये और वे भी गड़बड़ा कर उसने कहा, लड़के ने अपने को घोड़े के बीच झोंक दिया। बहुत-से लोगों ने देखा।

इसलिए तुम किस बात की भीख मांगने आई हो ? मैं फिर कभी घर वापस नहीं गई। भैया , यह है सारी दास्तान। कब्रिस्तान में खामोशी और सन्नटा छाया था। सलीब , रोगी-जैसे पेड़, मिट्टी के ढेर और कब्र पर इतने दुखी भाव से गुमसुम बैठी वह स्त्री और मैं मृत्यु और इन्सानी दुख के बारे में सोचने लगा। लेकिन आसमान साफ था और धरती पर सूर्य ढलती गर्मी की वर्षा कर रहा था।

मैंने अपनी जेब से कुछ सिक्के निकाले और उस स्त्री को ओर बढ़ा दिये , जिसे तकदीर ने मार डाला था, फिर भी वह जिये जा रही थी। उसने सिर हिलया और बहुत ही रुकते-रुकते कहा , भाई, तुम अपने को क्यों हैरान करते हो। आज के लिए मेरे पास बहुत हैं। अब मुझे ज्यादा की जरूरत भी नहीं है। मैं अकेली हूं-दुनिया में बिलकुल अकेली। उसने एक लम्बी सांस ली और फिर मुंह पर वेदना से उभरी रेखाओं के बीच अपने पतले होंठ बन्द कर लिये।

योशिजो सीमेंट के थैले खाली कर रहा था। अपने शरीर के अधिकतर अंगों को वह किसी तरह सीमेंट की धूल से बचाये हुए था , लेकिन उसके केशों और मूछों पर एक मोटी पपड़ी जम गयी थी। वह अपनी नाक साफ करके सिमेंट की उस पपड़ी को निकालने के लिए अकुल रहा था , जिसके कारण नासापुटों के भीतर बाल सलाख-से कड़े हो गये थे , लेकिन सीमेंट घोलने का यन्त्र हर मिनट में दस खेप तैयार करके फेंक रहा था और उसे भरते रहने में ढ़ील की कोई गुंजाइश नहीं थी। योशिजो का काम का दिन 11 घंटे का था।

इसके दौरान उसे एक बार भी ढंग से नाक साफ करने का अवसर न मिलता। जब थोड़ी देर की दोपहर की छुट्टी में उसे भूख लगी होती तो वह जल्दी-जल्दी किसी तरह कौर निगलता रहता।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

Exercise- 10

वह देश पर राज करते थे। देश के लोगों पर राज करते थे। लोगों के दिलों पर राज करते थे। जो दिलों पर राज करता है, वही बड़ा है। ये कहानियां इस बात की गवाह है। हजरत मुहम्मद इस्लाम के पैगम्बर थे। पैगम्बर ईश्वर का सन्देश लानेवाला होता है। उन्होंने एक ईश्वर की पूजा का प्रचार किया। उन्होंने अरबों को एक कौम बनाया। उनके उपदेशों का सार था एक ईश्वर की पूजा करो। सब भाई-भाई हैं। कोई न ऊंचा है , न नीचा। बुरे कामों से बचो। नेक कामों में लगो। इसी का नाम उन्होंने इस्लाम रखा। इसका मतलब है अपने को भगवान को सौंप देना।

उस जमाने के लोग बड़े खराब थे। इन बातों का विरोध करते थे। वे बहुत से देवी-देवताओं को मानते थे। आपस में लड़ते रहते थे। बुरे-बुरे काम करते , शराब पीते, जुआ खेलते, लड़कियों को मार डालते, पशु-बलि और नरबलि चढ़ाते। कुछ लोग तो अपने बेटों की बलि भी चढ़ा देते थे छूआछूत भी थी। ये सब लोक कबीलों में बंटे हुए थे।

मक्के में उन दिनों सबसे बड़ा कबीला कुरैश का था। उनका सरदार मक्के पर राज करता था। वही काबे का रखवाला था। ये लोग नए धर्म के विरोधी थे। सब बराबर हैं ये इस बात को नहीं मानते थे। शुरु में उन लोगों ने मुहम्मदसाहब को लालच दिया , पर वह नहीं माने। इस पर वे मोहम्मद साहब और उनके साथियों को सताने लगे।

हजरत उमर भी कुरैश थे। बहुत बहादुर थे। उनका डीलडौल बड़ा ऊंचा था। हजारों आदमियों में अलग दिखाई दे जाते। वह भी मुहम्मदसाहब के खिलाफ थे , लेकिन उनके बहनोई सईद मुसलमान हो चुके थे। उनके साथ उमर की बहन फातिमा भी मुसलमान हो गई थी। कई दूसरे लोग भी मुसलमान हो गये थे।

उनमें उनके घराने की एक दासी थी। उमर मुसलमानों के बैरी थे। वह उस दासी को खूब मारते थे। मारते-मारते थक जाते तो कहते, जरा दम ले लूं तो फिर मारुंगा। वह दूसरे लोगों को भी सताते थे , लेकिन नये धर्म का नशा बड़ा तेज था। जिस पर चढ़ जाता था , उतरता नहीं था। उमर बड़े परेशान हुए।

एक भी आदमी धर्म नहीं छोड़ता। आखिर उन्होंने मुहम्मदसाहब को मार डालने का फैसला किया। न रहेगा बांस, न बजेगी बांसुरी। बस, कमर में तलवार बांधी और घर से निकल पडे। राह में एक साथी मिल गये। इनके तेवर चढ़े देखे तो पूछा किधर जा रहे हैं ? जवाब दिया, मुहम्मद का फैसला करने। साथी ने कहा, पहले घर की खबर लो। तुम्हारी बहन और बहनोई दोनों इस्लाम को मान चुके है। उमर तुरन्त लौट पड़े।

उसी तरह बहन के घर पहुंचे। बहन कुरान पढ़ रही थी। आहट पाकर चुप हो गई। कुरआन छिपा दीया लेकिन आवाज उमर के कानों में पड़ चुकी थी। पूछा , क्या पढ़ रही थी? बहन ने जवाब दिया, कुछ नहीं। बोले, मैं सुन चुका हूं। तुम दोनों मुसलमान हो गये हो। यह कहकर वह बहनोई की तरफ झपटे। वह उनको मारना चाहते थे। बहन बचाने दौड़ी। उमर ने उसका चेहरा भी लहूलुहान कर दिया।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 11

शेष जीवन का आनंद उठाते रहे। वर्षों पहले हिमालय की किसी कन्दरा में एक बलिष्ठ शेर रहा करता था। एक दिन वह एक भैंसे का शिकार और भक्षण कर अपनी गुफा को लौट रहा था। तभी रास्ते में उसे एक मरियल-सा सियार मिला जिसने उसे लेटकर दण्डवत् प्रणाम किया।

जब शेर ने उससे ऐसा करने का कारण पूछा तो उसने कहा , सरकार मैं आपका सेवक बनना चाहता हूँ। कुपया मुझे आप अपनी शरण में ले लें। मैं आपकी सेवा करुँगा और आपके द्वारा छोड़े गये शिकार से अपना गुजर-बसर कर लूंगा। शेर ने उसकी बात मान ली और उसे मित्रवत् अपनी शरण में रखा।

कुछ ही दिनों में शेर द्वारा छोड़े गये शिकार को खा-खा कर वह सियार बहुत मोटा हो गया। प्रतिदिन सिंह के पराक्रम को देख-देख उसने भी स्वयं को सिंह का प्रतिरुप मान लिया। एक दिन उसने सिंह से कहा, अरे सिंह ! मैं भी अब तुम्हारी तरह शक्तिशाली हो गया हूँ।

आज मैं एक हाथी का शिकार करुँगा और उसका भक्षण करुँगा और उसके बचे-खुचे माँस को तुम्हारे लिए छोड़ दूँगा। चूँकि सिंह उस सियार को मित्रवत् देखता था , इसलिए उसने उसकी बातों का बुरा न मान उसे ऐसा करने से रोका। भ्रम-जाल में फँसा वह दम्भी सियार सिंह के परामर्श को अस्वीकार करता हुआ पहाड़ की चोटी पर जा खड़ा हुआ।

वहाँ से उसने चारों और नजरें दौड़ाई तो पहाड़ के नीचे हाथियों के एक छोटे से समूह को देखा। फिर सिंह-नाद की तरह तीन बार सियार की आवाजें लगा कर एक बड़े हाथी के ऊपर कूद पड़ा। किन्तु हाथी के सिर के ऊपर न गिर वह उसके पैरों पर जा गिरा। और हाथी अपनी मस्तानी चाल से अपना अगला पैर उसके सिर के ऊपर रख आगे बढ़ गया। क्षण भर में सियार का सिर चकनाचूर हो गया और उसके प्राण पखेरु उड़ गये।

हिमालय के वन में निवास करते एक सन्यासी ने हाथी के एक बच्चे को अकेला पाया। उसे उस बच्चे पर दया आयी और वह उसे अपनी कुटिया में ले आया। कुछ ही दिनों में उसे उस बच्चे से मोह हो गया और बड़े ममत्व से वह उसका पालन-पोषण करने लगा।

प्यार से वह उसे ठ सोमदन्त पुकारने लगा और उसके खान-पान के लिए प्रचुर सामग्री जुटा देता। एक दिन जब सन्यासी कुटिया से बाहर गया हुआ था तो सोमदन्त ने अकेले में खूब खाना खाया। तरह-तरह के फलों के स्वाद में उसने यह भी नहीं जाना कि उसे कितना खाना चाहिए। वहाँ कोई उसे रोकने वाला भी तो नहीं था। वह तब तक खाता ही चला गया जब तक कि उसका पेट न फट गया।

पेट फटने के तुरन्त बाद ही उसकी मृत्यु हो गयी। शाम को जब वह सन्यासी वापिस कुटिया आया तो उसने वहाँ सोमदन्त को मृत पाया। सोमदन्त से वियोग उसके लिए असह्य था। उसके दु:ख की सीमा न रही। वह जोर-जोर से रोने-बिलखने लगा। सक्क (शक्रय इन्द्र) ने जब उस जैसे सन्यासी को रोते-बिलखते देखा तो वह उसे समझाने नीचे आया। सक्क ने कहाँ , हे सन्यासी ! तुम एक धनी गृहस्थ थे।

Exercise- 12

यह एहसास सपने देखने वालों को भी था कि इन्हें हकीकत में बदलने की कवायद लंबी होगी , रास्ता आसान नहीं होगा और तकलीफों से भरा होगा। वे जानते थे कि आजादी अपने साथ नई और काफी बड़ी चुनौतियों को लेकर आएगी। यही वजह है कि आजादी के बाद विभाजन के दर्द को सहने , और साथ ही देश को एक बनाए रखने के लिए उस दौर के लोगों ने काफी खून-पसीना भी बहाया था। इस उम्मीद के साथ कि नवजात आजादी के तत्काल बाद की तकलीफें खुशहाली के नए भविष्य का रास्ता तैयार करेंगी।

लेकिन आज 66 साल बाद लगता है कि तकलीफों का यह सिलसिला कुछ ज्यादा ही लंबा खिंच गया। तमाम क्षेत्रों की ढेर सारी तरक्की के बावजूद सबकी खुशहाली की वह मंजिल अब भी बहुत दूर लगती है। इस बीच राजनीतिक भ्रष्टाचार से लेकर आम आदमी की सुरक्षा जैसी बहुत सी तकलीफें भी हमने साथ जोड़ ली हैं। अर्थव्यवस्था अब भी पूरी तरह अपने पांवों पर नहीं खड़ी है। चालू खाते के घाटे से लेकर महंगाई और बेरोजगारी जैसे न जाने कितने संकटों से हम जूझ रहे हैं। घटने-बढ़ने के तमाम तर्कों के साथ गरीबी बदस्तूर जारी है। इस बीच देश की सीमाओं पर घटने वाली अनहोनी घटनाओं की खबरें भी लगातार आ रही हैं। आतंकवाद तो खैर एक बड़ी समस्या है ही। देश के भीतर के सामाजिक , राजनीतिक दबाव भी कुछ कम नहीं हैं। देश के लगभग हर कोने में एक नया प्रदेश बनाने की मांग उठ ही रही है। फिर पर्यावरण में बदलाव से लड़ने का काम कितना अहम है, इसे हम उत्तराखंड की त्रसदी से समझ ही चुके हैं। जिस संसद से सबसे ज्यादा उम्मीद की जा सकती थी , वह अपना कामकाज तक ठीक से नहीं चला पा रही। ऐसी तमाम समस्याओं के बावजूद अच्छी बात यह है कि हमारे पास उम्मीद की कई किरणें भी हैं। हमारी न्यायपालिका तमाम खामियों के बावजूद कई तरह के बाहरी दबावों से मुक्त है। चुनाव आयोग के रूप में हमारे पास ऐसी संस्था है , जिस पर हम गर्व कर सकते हैं। अपनी सरकार खुद चुनने की जनता की आजादी पर कोई खतरा नहीं है और यह जनता खुली अराजकता को बार-बार नकार चुकी है। दामिनी कांड और कुछ अन्य मौकों पर यह भी साफ हो गया कि जनता सरकार को सही राह चुनने को बाध्य करने की ताकत भी रखती है। आज स्वतंत्रता दिवस पर जरूरत है, ऐसी उम्मीदों को बढ़ाने की और तमाम निराशाओं को लगातार कम करने की। याद रखें कि हर आंख का हर आंसू पोछना अब भी हमारा सपना और संकल्प है। यही सबसे बड़ी चुनौती भी है। स्वतंत्रता दिवस के मौके पर हर साल झंडों की बिक्री बढ़ जाती है , ऐसा दूसरा मौका गणतंत्र दिवस का होता है। जब से झंडा फहराने के बारे में नियमों में संशोधन करके उन्हें उदार बनाया गया है , तब से आम लोगों में झंडा फहराने का उत्साह बढ़ा है , और लगभग तभी से देश में आम तौर पर चीन में बने हुए झंडे ही बिकते हैं। स्वतंत्रता दिवस के बाद गणेश चतुर्थी का त्योहार आएगा और चीन में बनी गणेश मूर्तियां बाजारों में बिकने लगेंगी। दिवाली आएगी, तो देश के तमाम घर चीन में बनी बिजली के बल्बों की लड़ियों से सज जाएंगे। चीन के झंडे इसलिए बाजार में छाए हैं , क्योंकि वे सस्ते होते हैं , दुकानदारों को अच्छा मुनाफा मिलता है और ग्राहकों को भी वे सस्ती कीमत पर मिलते हैं। यह सिर्फ भारत में नहीं, दुनिया के तमाम देशों में हो रहा है

दर्शनशास्त्र की मौत की बात इसी सिलसिले का एक नया अध्याय भर है। स्टीफन हॉकिंग की बात से न दर्शनशास्त्र का बाल बांका होगा और न ही भौतिकशास्त्र की महिमा में कोई चार चांद लगेंगे। याद कीजिए दो साल पहले जापान में आई सुनामी को , और फिर सोचिए उत्तराखंड में आई प्रलय को , जिसे हिमालय की सुनामी कहा जा रहा है। यह ठीक है कि किन्हीं दो हादसों की आपस में तुलना नहीं की जा सकती , तुलना की भी नहीं जानी चाहिए। लेकिन दुनिया में हुए किसी भी बड़े हादसे से हम अपनी तैयारियों के लिए बहुत कुछ सीख जरूर सकते हैं। जापान में हुआ हादसा भी बहुत बड़ा था। हजारों लोगों की जानें गई थी। साढ़े तीन लाख लोगों को विस्थापित करना पड़ा था। इन्फ्रास्ट्रक्चर वगैरह का नुकसान तो बहुत ही बड़ा था। जाहिर है कि हादसे से गुजरे लोग उसके बहुत सारे दुख अब भी नहीं भूल सके होंगे। लेकिन यह भी सच है कि जब जापान की सुनामी की भयावह तस्वीरों की यादें हमारे दिमाग में ताजा थीं , तभी पता चला कि जापान में सब कुछ सामान्य हो गया है। लोगों को बचाने से लेकर विस्थापित करने का काम तो हुआ ही , सड़कों वगैरह का निर्माण भी तुरंत ही शुरू हो गया। अब जरा उत्तराखंड को देखें। हादसा गुजरे हुए पांच दिन हो चुके हैं , लेकिन लगता है कि हम अब भी हर रोज न जाने कितने हादसों से गुजर रहे हैं। रुद्रप्रयाग और चमोली जिले से आने वाली हर खबर सिहरन पैदा करने वाली एक नई कहानी कह रही है। ये कहानियां व्यवस्था के निकम्मेपन की पोल भी खोलती हैं। बेशक यह हादसा कुदरत का एक कहर था , जो हमारी कई गलतियों के कारण और भी भयावह हो गया। लेकिन इससे निपटने के लिए जिस पैमाने पर काम होना चाहिए था , वह अभी कहीं नहीं दिख रहा। पांच दिन में जितने तीर्थयात्रियों को बचाया गया है, उससे कहीं ज्यादा लोग अब भी भूखे-प्यासे वहां फंसे हैं। इसके अलावा, स्थानीय निवासी भी हैं, जिनकी फिलहाल कोई सुध भी नहीं ले रहा। हैरत तो इस बात की है कि हर साल लाखों लोग इन तीर्थयात्राओं पर जाते हैं , लेकिन कितने लोग, कौन लोग, कहां गए इसका कहीं कोई रिकॉर्ड तक नहीं रखा जाता। इसलिए हमें अभी पूरे तौर पर पता ही नहीं है कि कितने लोग कहां फंसे हुए राहत का इंतजार कर रहे हैं। यह जरूर है कि 20 हेलीकाप्टरों के अलावा सेना और आईटीबीपी के जवान दिन-रात लोगों को बचाने का काम कर कर रहे हैं। उनकी कोशिशों और उनके जज्बे में कोई मीन-मेख नहीं निकाला जा सकता। लेकिन हमें यह तो स्वीकार करना ही होगा कि लोगों की संख्या और समस्या की गंभीरता को देखते हुए इससे कहीं ज्यादा संसाधन लगाने की जरूरत थी। इस बीच कुछ ऐसी खबरें भी आ रही हैं, जो स्थानीय प्रशासन की आपराधिक लापरवाही को उजागर करती हैं। इन खबरों में बताया गया है कि उत्तराखंड में आपदा प्रबंधन के नाम पर कोई तैयारी ही नहीं थी। सरकार ने इसके लिए छह साल पहले जो संस्था बनाई थी, उसकी आज तक कोई बैठक ही नहीं हुई और इसके बही-खाते सही न होने के कारण केंद्र सरकार ने इसके लिए पैसा देना भी बंद कर दिया था। यह हाल उस राज्य का है, जो भूगोल और पर्यावरण की दृष्टि से काफी संवेदनशील है। खैर, फिलहाल जरूरत है लोगों को बचाने की और पुनर्निर्माण में मदद की। मदद के लिए कई लोग आगे भी आ रहे हैं। केंद्र सरकार के अलावा , कई राज्य सरकारों ने भी मदद की घोषणा की है। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी लोगों से मदद की अपील की है। यहां एक बार फिर जापान पर लौटते हैं।

तमिलनाडु को छोड़ दें, तो बाकी देश और दुनिया में यह फिल्म दिखाई जा रही है और इसे लेकर वहां कोई विवाद भी नहीं है। यह फिल्म मूलतः तमिल में बनी है और तमिलनाडु में ही नहीं दिखाई जा रही। इन सारे तथ्यों से कमल हासन के दर्द को समझा जा सकता है। उनका कहना है कि इस फिल्म में उन्होंने अपने पूरे जीवन की पूंजी लगा दी है और इसके विवादों में फंसने का अर्थ है दिवालिया हो जाना। दिवालिया हो जाने का उनका यह डर बहुत कुछ फिल्म रिलीज के नए गणित से भी जुड़ा है। आजकल किसी भी फिल्म को एक साथ ढेर सारे सिनेमाघरों में रिलीज किया जाता है, जहां वह पहले दो हफ्ते में ही अपनी पूरी लागत वसूल लेती है। कमल हासन को यह विश्वास तो है कि उनकी फिल्म सारे विवादों से बाहर निकल आएगी, लेकिन तब तक यह समय उनके हाथ से निकल चुका होगा। क्योंकि उसके बाद कई और फिल्में रिलीज के लिए तैयार होंगी और ज्यादातर प्रमुख सिनेमाघर उनके लिए पहले ही बुक हो चुके होंगे। यानी विश्वरूपम की संभावनाएं खत्म भले न हों, पर कम तो हो ही जाएंगी। एक कलाकार के तौर पर कमल हासन इस सबसे इतने आहत हुए हैं कि वह देश छोड़कर जाने की बात कह रहे हैं। उन्होंने यहां तक कह दिया कि जैसे मकबूल फिदा हुसैन को देश छोड़कर बाहर बसना पड़ा, उसी तरह मुझे भी विदेश में जाकर रहने पर मजबूर होना पड़ सकता है। कमल हासन के इस बयान को अगर हम उनकी भावनात्मक परेशानी का नतीजा मान लें और कुछ देर के लिए फिल्म के नफे-नुकसान के मामले को भी दरकिनार कर दें, तो भी उनकी फिल्म पर सिर्फ कुछ संगठनों के एतराज के बाद पाबंदी लगा देना उन मूल्यों के खिलाफ है, जिस पर हमारा लोकतंत्र खड़ा है। इसमें अभिव्यक्ति की आजादी का एक अहम मुद्दा तो खर है ही, पर यह मामला उससे कहीं आगे जाता है। इस फिल्म पर पाबंदी के लिए जिस तरह से विवाद खड़ा किया गया, वह सिर्फ एक डर का माहौल ही पैदा करता है। और हम यह जानते हैं कि डर का माहौल कलात्मक अभिव्यक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन होता है। यह खतरा इसलिए भी है कि जिस संगठन ने यह विवाद खड़ा किया था, वह तमिलनाडु में सत्ताधारी गठजोड़ का महत्वपूर्ण हिस्सा है। आपत्तिजनक फिल्में जनता तक न पहुंचें, इसे लेकर देश में बाकायदा एक संस्थागत व्यवस्था है, जिसे हम सेंसर बोर्ड कहते हैं। एक बार जब सेंसर बोर्ड फिल्म को पास कर देता है, तो इसका अर्थ है कि फिल्म को विशेषज्ञों के पैनल ने अच्छी तरह जांच-परख लिया है। खुद सुप्रीम कोर्ट भी यह कह चुका है कि अगर सेंसर बोर्ड ने फिल्म को पास कर दिया है, तो किसी सरकार को उसे रोकने का अधिकार नहीं होना चाहिए। दिलचस्प बात यह है कि तमिलनाडु में जिन लोगों ने फिल्म पर पाबंदी लगाई, उन्होंने इसे देखने की जरूरत तक नहीं समझी। बात सिर्फ तमिलनाडु की नहीं है, पूरे देश में यही हो रहा है। शाहरुख खान को लेकर हुआ विवाद हमारे सामने है और अब पश्चिम बंगाल सरकार ने सलमान रश्दी के कोलकाता प्रवेश पर पाबंदी लगा दी है। जिस दिन हम सहिष्णुता की बात करने वाले महात्मा गांधी का बलिदान दिवस मना रहे हैं, खुद को गांधीवादी कहने वाली सरकारों की असहिष्णुता की खबरें मिल रही हैं। इस बार यह उम्मीद पुख्ता थी कि रिजर्व बैंक ब्याज दरों में जरूर कमी करेगा। रिजर्व बैंक ने रेपो रेट 0.25 प्रतिशत कम करके उनकी उम्मीदों को पूरा किया। इसके अलावा रिजर्व बैंक ने कैश रिजर्व रेशो (सीआरआर) में भी अनपेक्षित रूप से कमी कर दी।

Exercise- 15

पठानों का विरोध कर पाने की हिम्मत नहीं हुई। तभी मेरी बगल में बैठे दुबले बाबू ने मेरे बाजू पर हाथ रख कर कहा-आग है , देखो आग लगी है। गाड़ी प्लेटफार्म छोड़ कर आगे निकल आई थी और शहर पीछे छूट रहा था। तभी शहर की ओर से उठते धुएँ के बादल और उनमें लपलपाती आग के शोले नजर आने लगे। दंगा हुआ है। स्टेशन पर भी लोग भाग रहे थे। कहीं दंगा हुआ है। शहर में आग लगी थी। बात डिब्बे-भर के मुसाफिरों को पता चल गई और वे लपक-लपक कर खिड़कियों में से आग का दृश्य देखने लगे।

जब गाड़ी शहर छोड़ कर आगे बढ़ गई तो डिब्बे में सन्नाटा छा गया। मैंने घूम कर डिब्बे के अंदर देखा, दुबले बाबू का चेहरा पीला पड़ गया था और माथे पर पसीने की परत किसी मुर्दे के माथे की तरह चमकरही थी। मुझे लगा , जैसे अपनी-अपनी जगह बैठे सभी मुसाफिरों ने अपने आसपास बैठे लोगों का जायजा ले लिया है।

सरदार जी उठ कर मेरी सीट पर आ बैठे। नीचे वाली सीट पर बैठा पठान उठा और अपने दो साथी पठानों के साथ ऊपर वाली बर्थ पर चढ़ गया। यही क्रिया शायद रेलगाड़ी के अन्य डिब्बों में भी चल रही थी।

डिब्बे में तनाव आ गया। लोगों ने बतियाना बंद कर दिया। तीनों-के-तीनों पठान ऊपरवाली बर्थ पर एक साथ बैठे चुपचाप नीचे की ओर देखे जा रहे थे। सभी मुसाफिरों की आँखें पहले से ज्यादा खुली-खुली, ज्यादा शंकित-सी लगीं। यही स्थिति संभवतः गाड़ी के सभी डिब्बों में व्याप्त हो रही थी। कौन-सा स्टेशन था यह? डिब्बे में किसी ने पूछा। वजीराबाद, किसी ने उत्तर दिया। जवाब मिलने पर डिब्बे में एक और प्रतिक्रिया हुई। पठानों के मन का तनाव फौरन ढीला पड़ गया। जबकि हिंदू-सिक्ख मुसाफिरों की चुप्पी और ज्यादा गहरी हो गई।

एक पठान ने अपनी वास्कट की जेब में से नसवार की डिबिया निकाली और नाक में नसवार चढ़ाने लगा। अन्य पठान भी अपनी-अपनी डिबिया निकाल कर नसवार चढ़ाने लगे। बुढ़िया बराबर माला जपे जा रही थी। किसी-किसी वक्त उसके बुदबुदाते होंठ नजर आते , लगता, उनमें से कोई खोखली-सी आवाज निकल रही है। अगले स्टेशन पर जब गाड़ी रुकी तो वहाँ भी सन्नाटा था। कोई परिंदा तक नहीं फड़क रहा था। हाँ, एक भिश्ती, पीठ पर पानी की मशकल लादे , प्लेटफार्म लाँघ कर आया और मुसाफिरों को पानी पिलाने लगा।

लो, पियो पानी, पियो पानी। औरतों के डिब्बे में से औरतों और बच्चों के अनेक हाथ बाहर निकल आए थे। बहुत मार-काट हुई है , बहुत लोग मरे हैं। लगता था , वह इस मार-काट में अकेला पुण्य कमाने चला आया है। गाड़ी सरकी तो सहसा खिड़कियों के पल्ले चढ़ाए जाने लगे। दूर-दूर तक , पहियों की गड़गड़ाहट के साथ , खिड़कियों के पल्ले चढ़ाने की आवाज आने लगी। किसी अज्ञात आशंकावश दुबला बाबू मेरे पासवाली सीट पर से उठा और दो सीटों के बीच फर्श पर लेट गया। उसका चेहरा अभी भी मुर्दे जैसा पीला हो रहा था। इस पर बर्थ पर बैठा पठान उसकी ठिठोली करने लगा-ओ बेंगैरत, तुम मर्द ए कि औरत ए? सीट पर से उट कर नीचे लेटता ए।

1916 ई. में गांधीजी को राजकुमार शुक्ल के द्वारा चंपारण में आमंत्रित किया गया। 1917 ई. में गांधीजी चंपारण आये. राजेन्द्र प्रसाद , डॉ अनुग्रह नारायण सिंह , आचार्य कृपलानी और अन्य महत्त्वपूर्ण नेताओं के सहयोग से उन्होंने चंपारण की दयनीय स्थिति का जायजा लिया।

बड़ी संख्या में किसान निलहों (बागान मालिकों) के अत्याचारों की शिकायत लेकर गांधीजी के शरण में पहुँचे. गांधीजी ने किसानों को अहिंसात्मक और असहयोगात्मक रवैया अपनाने का आग्रह किया। इससे किसानों में उत्साह का नया संचार हुआ और उनके बीच एकता बढ़ी. चंपारण आन्दोलन - सरकार गांधीजी की लोकप्रियता को देखकर चिंतित हो उठी. उन्हें जबरन गिरफ्तार कर लिया गया और बिना सर-पाँव के आधार पर उनपर मुकदमा चलाया जाने लगा. लेकिन गांधीजी को शीघ्र ही छोड़ दिया गया।

किसानों केशिकायतों की जाँच के लिए सरकार ने एक समिति बनाई. इस समिति में गांधीजी को भी एक सदस्य के रूप में रखा गया। समिति की सिफारिशों के आधार पर चंपारण कृषि अधिनियमबना. इस अधिनियम के जरिये तिनकठिया-प्रणाली को खत्म कर दिया गया। किसानों को इससे बहुत बड़ी राहत मिली। किसानों में नई चेतना जगी और वे भी राष्ट्रीय आन्दोलन को अपना समर्थन देने लगे. आज हम भारत का विभाजनकैसे हुआ और इसके पीछे क्या कारण थे , क्या सच्चाई थी, यह जानने की कोशिश करेंगे।

कैबिनेट मिशन योजना के अंतर्गत भारत में कांग्रेस ने मुस्लिम लीग के साथ सहयोग कर एक अंतरिम सरकारका गठन किया , लेकिन मुस्लिम लीग इस अंतरिम सरकार में रहकर भी केवलव्यवधान डालने का कार्य करती रही. उससे सहयोग की अपेक्षा रखना भी शुद्ध मूर्खता थी क्योंकि वह तो पाकिस्तान के निर्माण के लिए कटिबद्ध हो चुकी थी। पूरे देश में साम्प्रदायिकता की आग फैली हुई थी और अशांति तथा अराजकता मची हुई थी।

भारत की विषम साम्प्रदायिक समस्या का हल करने के लिए और कैबिनेट योजना की रक्षा के लिए ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने लन्दन में एक सम्मलेन का आयोजन किया, लेकिन फिर भी कांग्रेस तथा लीग में समझौता नहीं हो पाया. भारत की परिस्थिति ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण से बाहर हो रही थी तब उसने भारत को भारतीयों के हाल पर ही छोड़ना उचित समझा. ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने घोषणा की कि जून 1948 के पहले भारतीयों के हाथ में सत्ता सौंप दी जायेगी. इस बात पर भारत के तत्कालीन वायसराय इस घोषणा से सहमत नहीं थे

अतः उन्होंने त्यागपत्र दे दिया और लॉर्ड माउंटबेटन अंतरिम वायसराय बनकर भारत आये. माउंटबेटन योजना वायसराय लार्ड माउंटबेटन भारत के नेताओं से बातचीत कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भारत का विभाजनहर हाल में होकर रहेगा. हालाँकि महात्मा गांधी ने माउंटबेटन से मिलकर इस विभाजन को रोकने का काफी प्रयत्न किया लेकिन वे असफल रहे। लॉर्ड माउंटबेटन लन्दन गए और वहां के अधिकारीयों से बातचीत कर यहाँ लौटे तथा 3 जून, 1947 को एक योजना प्रकाशित की जो माउंटबेटन योजना के नाम से जानी जाती है।

झारखंड के सिमडेगा जिले के एक गांव में भूख से एक 11 वर्षीय बच्ची का मरना भारत के विकास की कहानी का सच बयान करता ऐसा दस्तावेज है जिसमें भारत और इंडिया का अन्तर स्पष्ट हो जाता है। हमने बड़े-बड़े शहरों में वाहनों की अन्धाधुन्ध कतारें लगाकर जो भी तरक्की की है, उसे यह घटना चुनौती देते हुए ऐलान करती है कि हमारे विकास की कहानी ऐसे विकट विरोधाभासों से भरी हुई है जिसमें अंतिम पायदान पर बैठे हुए आदमी के पास इसकी हवा पहुंचने में बहुत बाधाएं हैं।

यह पूरी तरह बेसबब है कि किसी गरीब आदमी को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से केवल इसीलिए राशन न मिल पाए कि उसके पास आधार कार्ड नहीं है।

राशन कार्ड को आधार कार्ड से जोड़ने की प्रक्रिया गरीबी की सीमा रेखा से नीचे रहने वाले व्यक्ति के लिए किस प्रकार जरूरी बनाई जा सकती है? असल सवाल यह है कि जब राज्य सरकार अपने राज्य में बांटे गए राशन कार्डों के हिसाब से केन्द्रीय संभरण मंत्रालय से अनाज का कोटा उठा लेती है तो वह उसका वितरण लाभार्थियों को करने से किस प्रकार रोक सकती है और वह भी यह तर्क देकर कि राशन कार्ड का आधार कार्ड से जुड़ा होना जरूरी बना दिया गया है जबकि संभरण मंत्री श्री राम विलास पासवान का कहना है कि ऐसा कोई नियम अभी तक नहीं बनाया गया है कि राशन कार्ड और आधार कार्ड को जोड़कर राशन की सप्लाई सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से की जाएगी।

जाहिर तौर पर यह राज्य की रघुबर दास सरकार की लापरवाही का ऐसा नमूना है जिससे इस सरकार की पूरी कार्यप्रणाली का जायजा लिया जा सकता है। यह स्वयं मुख्यमंत्री रघुबर दास के लिए शर्म का कारण हो सकता है क्योंकि वह भी एक अत्यन्त गरीब घर में जन्मे हैं और मजदूर आन्दोलन से उपजे नेता हैं।

उनके शासन का मुखिया रहते यदि उनके राज्य में किसी व्यक्ति की मौत भूख की वजह से होती है तो यह उस भारत के माथे पर कलंक के अलावा और कुछ नहीं है जो स्वयं को परमाणु शक्ति सम्पन्न बना चुका है और अंतरिक्ष विज्ञान में विकसित देशों के समकक्ष आने की बातें कर रहा है। इसका अर्थ यह भी है कि खुली बाजार व्यवस्था के बीच हम जिस आर्थिक तरक्की का गुणगान करते नहीं थकते उसकी हकीकत गरीब को भूखा मरते देखने की है।

जिस देश ने अनाज उत्पादन में न केवल आत्मनिर्भरता बल्कि विदेशों तक को निर्यात करने की क्षमता अर्जित कर ली हो उसमें यदि एक व्यक्ति भी भूख से मरता है तो यकीनी तौर पर यह बाजार मूलक अर्थव्यवस्था में गरीबों को उनके ही हाल पर छाोड़ने की प्रवृत्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता।

सवाल यह भी है कि जिस खाद्य सुरक्षा कानून को हम पिछले चार साल से ढो रहे हैं उसकी कैफियत क्या यह हो सकती है कि कोई व्यक्ति भूख से ही दम तोड़ दे और राज्य सरकार पहले यह लीपापोती करे कि बच्ची की मृत्यु मलेरिया बुखार से हुई

जो लंबी और छरहरी हैं, तो प्रकृति ने भी अपना मानदंड बदल दिया, अब उसने संतान पैदा करने के लिए लंबी और छरहरी महिलाओं को तरजीह दी। जब जीवन ज्यादा कष्टप्रद था , तब महिलाओं का अपेक्षाकृत नाटा और स्थूल होना प्रजनन के लिए फायदेमंद था। उनकी हड्डियों की बनावट प्रसव को आसान बनाती थीं और शरीर में अतिरिक्त चर्बी यह सुनिश्चित करती थी कि पोषण की कमी होने पर भी वे संतान को दूध पिला सकेंगी। अब इन शर्तो का कोई अर्थ नहीं रहा, इसलिए प्रकृति ने भी अपने नियम बदल दिए। इससे एक सीख तो हम ले ही सकते हैं कि महिलाओं को बेहतर जीवन-स्तर , शिक्षा और चिकित्सा सुविधाएं मिलना , न सिर्फ मौजूदा समाज के लिए अच्छा है, बल्कि भावी पीढ़ियों के लिए भी बेहतर है। इस सूची में सम्मान और सुरक्षा भी जोड़ लें , तो अच्छा है, क्योंकि तब ये गुण आने वाली पीढ़ियों में भी पहुंचेंगे। दूसरी सीख यह है कि प्रकृति हमेशा हमारा भला चाहती है। हम उसके साथ सहयोग करें , इसी में हमारा भला है। लद्दाख के दौलत बेग ओल्डी से चीनी सेना की टुकड़ी की वापसी से तीन हफ्ते से चल रहा विवाद खत्म हो गया है। अब विदेश मंत्री सलमान खुर्शीद की चीन यात्रा भी निर्विघ्न हो पाएगी और चीन के प्रधानमंत्री ली केकियांग की भारत यात्रा से भी उत्साह और दोस्ती का माहौल बनेगा। इसके बावजूद ये सवाल बने रहेंगे कि चीनी सेना भारत की सीमा में इतने अंदर तक क्यों डटी रही और उसके बाद क्यों वापस चली गई ? खासकर किन शर्तों पर या किन दबावों में चीनी सेना वापस गई? यह साफ है कि वापसी के लिए कोई समझौता हुआ होगा और दोनों पक्ष कुछ न कुछ झुके होंगे। हमेशा की तरह इस बार भी सीमा पर इस नोकझोंक के खत्म होने की शर्तों के बारे में कोई आधिकारिक जानकारी नहीं है। देश की जनता में यह जानने की दिलचस्पी बनी रहेगी कि आखिर इस लेन-देन में भारत ने क्या खोया-पाया? चीनी सेना ने यह घुसपैठ क्यों की थी , यह तो काफी कुछ बताया जा सकता है। भारतीय सेना ने सीमा के पास अपनी सुरक्षा बढ़ाने के लिए कुछ इंतजाम किए थे। इनमें दौलत बेग ओल्डी में एक हवाई पट्टी को फिर से काम के लायक बनाना और एक निगरानी बंकर बनाना शामिल है। दौलत बेग ओल्डी काफी संवेदनशील जगह है , जिसके आसपास भारत , चीन और पाकिस्तान , तीनों के अधिकार क्षेत्र मिलते हैं। चीन ने अपने इलाके में काफी सारा निर्माण कर रखा है। उसने सीमा के बहुत पास तक हाई वे बना लिया है , जिससे उसकी सेना का आना-जाना आसान हो सके और पाकिस्तान के कब्जे वाले क्षेत्र में भी पहुंचा जा सके। चीन को यह लग रहा था कि भारतीय निर्माण उसके हाई वे पर नजर रखने और उसे नियंत्रित करने के लिए किए जा रहे हैं। चीन का विशेष आग्रह यह था कि निगरानी बंकर को भारत नष्ट कर दे। चीन भारतीय सीमा के अंदर अपने तंबू लगाकर यही दबाव बनाना चाहता था। यह बता पाना मुश्किल है कि भारत ने चीन के इस दबाव का कैसे सामना किया या बातचीत में इस बात को कैसे सुलझाया। शुरू में भारत सरकार का रुख काफी कमजोर था और वह इस बात से ही इनकार करती रही कि भारतीय सीमा का उल्लंघन कोई गंभीर समस्या है। भारत सरकार ने इसे एक स्थानीय मसला कहकर टालने की कोशिश की। यह बात और है कि इस दौरान देश के अंदर उग्र राष्ट्रवादी शोर शुरू हो गया और चीन को सबक सिखाने और मुंहतोड़ जवाब देने की बात होने लगी। अंतरराष्ट्रीय संबंध ऐसे भावनात्मक अंदाज में नहीं बनाए-बिगाड़े जाते, लेकिन यह भी साफ था

Exercise- 19

ये निश्चय ही ऐसे शोक, ऐसे दुख हैं, जिनमें हम सांत्वना की अक्षमता का अनुभव करते है। कुछ देर बाद मैं गिरजे के प्रांगण से बाहर आया। घर की ओर लौटते समय मुझे वह औरत मिल गई , जो बुढ़िया को सांत्वना देने का काम कर रही थी। वह मां को उसके निर्जन आवास पर पहुंचा कर आ रही थीं उसने बताया कि मृतात्मा के मां-बाप उस गांव में बचपन से रहते आये थे।

उनकी बहुत ही साफ-सुथरी कुटीर थी और वे बड़े मान-सम्मान और आराम के साथ जीवन बिता रहे थे। उनके एक ही पुत्र था, जो बड़ा ही सुदर्शन, शीलवान, दयालु और माता-पिता कि प्रति कर्तव्यशील था। दुर्भाग्य से दुष्काल और कृषि-संकट में एक साल लड़के ने प्रलोभन में आकर पास की नदी में चलनेवाली नौका पर नौकरी कर ली। वहां काम करते अधिक दिन नहीं हुए कि जल दस्युओं का गिरोह उसे पकड़कर समुद्र की ओर ले गया।

माता-पिता को इसकी सूचना-मात्र मिली , उससे अधिक पता नहीं चला। उनका मुख्य अवलम्ब छिन गया। पिता पहले से ही दुर्बल थे, उनका दिल बैठ गया, वह उदास रहने लगे और एक दिन मौत की गोद में सो गये। वृद्धावस्था और दुर्बलता के बीच विधवा अकेली रह गई। वह अपनी जीविका नहीं चला पाई। सदा वर्त पर रहने लगी।

एक दिन वह अपने खाने के लिए बगीचे में कुछ तरकारियां तोड़ रही थी कि सहसा उसके घर का दरवाजा किसी ने खोल दिया। आगन्तुक समुद्री पोशाक पहने था और सूखकर कांटा हो गया था , मुर्दे की तरह पीला पड़ गया था। उसकी मुद्रा ऐसी थी, जैसी बीमारी और कष्ट से टूटे आदमी की होती है।

उसकी निगाह बुढ़िया पर पड़ी और वह झपट कर उसके सामने जाकर घुटनों के बल बैठ गया और बच्चे की तरह सुबकने लगा। बेचारी बुढ़िया शून्य एवं अस्थिर नयनों से उसे ताक रही थी। ओ मेरी प्यारी अम्मा, क्या तुम अपने बेटे को नहीं पहचान रही हो? अपने गरीब बेटे जार्ज को? वह पहले के श्रेष्ठ लड़के का ध्वंसावशेष मात्र था , जो घावों, बीमारियों और विदेशी कारावासों के प्रहारों के खंडित , अपने क्षयित अंगों को घर की ओर घसीटते हुए बचपने के दृश्यों के बीच विश्राम पाने आया था।

वह उसे शैया पर पड़ गया, जिस पर उसकी विधवा मां ने जाने कितनी ही विद्राहीन रातें बिताई थीं। वह फिर उससे उठ नहीं सका। अभागा जार्ज अनुभव कर चुका था कि ऐसी बीमारी में पड़े रहना, जहां कोई सांत्वना देने वाला नहीं है अकेले, कारागार में, जहां कोई उससे मिलने आने वाला नहीं है, कैसा होता है।

अब वह अपनी मां का आंखो से ओझल होना सहन नहीं कर सकता था। बेचारी मां उसकी शैया के पास घंटों बैठी रहती। कभी-कभी जार्ज स्वप्न से चैंककर इधर-उधर देखन लगता और तब तक देखता रहता जब तक मां को अपने ऊपर झुके हुए न देख लेता। तब वह मां का हाथ अपने हाथ में ले लेता, उसे अपनी छाती पर रखता और एक बच्चे की शांति के साथ गहरी नींद में सो जाता। इसी तरह वह मर गया।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

अगले ही दिन जब भाजपा के कुछ विधायक पार्टी से अलग होते दिखाई दिए , तो साफ हो गया कि मामला सिर्फ गठबंधन के टूटने भर का नहीं है, बिहार की राजनीति के सारे समीकरण ही बदलाव की तैयारी कर रहे हैं। ऐसे हालात में, भाजपा के लिए मतदान में भाग लेना अपनी पोल खुलवाने की ही तरह था। यह भी खबर आई कि पार्टी के कुछ विधायक तो व्हिप जारी होने के बावजूद सदन में नहीं आए। अब एक ही विकल्प बचा था- मतदान का बहिष्कार। इसके बाद विश्वास प्रस्ताव का गणित बेमतलब ही हो गया। सरकार तो खैर बचनी ही थी , लेकिन विश्वास प्रस्ताव की सारी कवायद से नीतीश कुमार को एक और फायदा मिला। इस प्रस्ताव ने उन्हें जनता तक अपनी बात पहुंचाने का एक और मौका दे दिया। उन्होंने इस मौके का पूरा लाभ भी उठाया। नरेंद्र मोदी से लेकर मंगलवार की हिंसा और कांग्रेस के समर्थन तक वह सभी विषयों पर बोले। उन्होंने यह स्वीकार किया कि आज के दौर में कोई भी पार्टी अपने बूते पर सरकार बनाने के मुगालते में नहीं रह सकती , क्योंकि यह गठबंधन का दौर है। एक ही साथ उन्होंने भाजपा की सीमा और अपनी रणनीति के बारे में भी साफ कर दिया। बायकॉट की रणनीति के कारण भाजपा इस मंच का सही इस्तेमाल नहीं कर सकी। इसके बाद जब मतदान हुआ, तो प्रस्ताव के पक्ष में 126 मत पड़े। जाहिर है, ये उससे कहीं ज्यादा मत थे, जितने की नीतीश कुमार को जरूरत थी। पर इससे भी बड़ी बात है कि यह उससे भी ज्यादा मत थे , जितने की उम्मीद लगाई जा रही थी। भाजपा और जद (यू) अब ऐसे मोड़ पर पहुंच चुके हैं , जहां दोनों को अलग-अलग मंजिल दिखाई दे रही है। भाजपा की नजर सिर्फ अगले आम चुनाव पर है। वह इस चुनाव को नरेंद्र मोदी की 'लहर' पर सवार होकर जीत लेना चाहती है। अभी तक की राजनीति को देखकर नहीं लगता कि भाजपा इसके पहले या इसके आगे की कोई बात फिलहाल सोच रही है। हालांकि यह भी सच है कि बिहार में जो हुआ , वह भाजपा नहीं चाहती थी। उसे पता था कि नीतीश कुमार से गठजोड़ उसके लिए चुनावी फायदे का सौदा है। गठजोड़ को तोड़ने की पहल नीतीश कुमार ने ही की, क्योंकि उनके सामने जो चुनौती है , वह भाजपा से कहीं अलग है। उनकी नजर दो साल बाद होने वाले विधानसभा चुनाव पर है और वह नहीं चाहते हैं कि भाजपा की राजनीति की वजह से उनका वोट बैंक कमजोर पड़े। जिसे मोदी 'लहर' कहा जा रहा है, उसमें यह खतरा छिपा हुआ है। वह जानते हैं कि इस राजनीति की वजह से अगर आम चुनाव में अल्पसंख्यक मतदाता उनसे दूर चले गए, तो उन्हें बाद में फिर जोड़ना मुश्किल होगा। भाजपा 2014 की लड़ाई लड़ रही है, जबकि नीतीश 2015 की भूमिका लिख रहे हैं।

दर्शनशास्त्र काफी नीरस विषय है, पर कभी-कभी यह काफी दिलचस्प हो जाता है। इन दिनों उसमें अचानक ही लोगों की दिलचस्पी बढ़ गई है , क्योंकि प्रख्यात भौतिकशास्त्री स्टीफन हॉकिंग ने कह दिया है कि दर्शनशास्त्र अब मर चुका है। पिछले दिनों गूगल की एक कांफ्रेंस में हॉकिंग ने दर्शनशास्त्र के बारे में जो कहा , वह बहुत ही दिलचस्प है। उन्होंने दो बातें कहीं- पहली यह कि भौतिक विज्ञान अब इतना विस्तार पा चुका है कि इस जगत की व्याख्या करने के लिए दर्शनशास्त्र जैसे किसी विषय की आवश्यकता ही नहीं रह गई है , और दूसरी बात दर्शनशास्त्र से जुड़े लोग भौतिक विज्ञान की नई स्थापनाओं से बिल्कुल अनजान रहते हैं। स्टीफन हॉकिंग के इस भाषण के बाद दर्शनशास्त्र से जुड़े दुनिया भर के विशेषज्ञ अचानक ही उठ खड़े हुए हैं।

Exercise- 21

आज जब सुबह लिखने को बैठा ही था तो लम्बे अर्से के बाद अमृता की उसी नज्म को एक दर्द भरी आवाज में फिजां में गूंजते पाया। मैं उस नज्म को बड़ा प्यार करता हूं। कई बार लिखता हूं और आंखें भर आती हैं। चंद बोल देखें, अज्ज सब कैदी हो गए हुस्न इश्क दे चोर कित्थों लभ के ल्याहीये वारसशाह इक होर अज आखां वारसशाह नू , कितों कब्रा विच बोल , ते अज्ज किताबे इश्क दा कोई दूजा वर्का खोल।

इन पंक्तियों में नारी पीड़ा ही नहीं, उसका इतिहास बोल रहा है। लोगों ने लाख चालाकियां कीं , षड्यंत्र किये। विभाजन की त्रासदी को बिना खडग़ , बिना ढाल की जीत बताते अहिंसकों की वाहवाही की पर काश, कोई दुख की नगरी में प्रवेश कर पाता। कोई आंसुओं की जाति का पता पूछने की हिम्मत जुटा पाता।

बार-बार अमृता प्रीतम के बोल सारे वजूद को झकझोरते रहे और पूछते रहे क्या तुम्हें पता है कि तब भारत-पाक विभाजन के समय 1947 में सारी चिनाब का पानी खून की लाली में क्यों सराबोर हो गया था? क्या तुम्हें पता है कि हिन्दू और सिख औरतों ने कुएं छलांग लगाकर क्यों भर दिए थे?

इस राष्ट्र ने तब से लेकर आज तक नारी गरिमा को नहीं जाना , नारी व्यथा को नहीं समझा, इसलिए यह राष्ट्र चाहे जितनी तरक्की करे , वह कभी शांति से नहीं रह सकता। ऐसा मेरा सोचना है। सचमुच यह बेहद दुख और शर्म की बात है।

आज अमृता को याद करते नारी दुर्दशा पर मन भर आया और सोचता रहा कि हर वर्ष नारी को महामाई, सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा के रूप में पूजने वाले इस देश के लोगों से क्या बात करूं ? दुनिया भर में देश का सिर शर्म से झुका देने वाले निर्भया कांड के दोषियों की फांसी पर मुहर लगाई जा चुकी है। जब अदालत ने दोषियों की फांसी बरकरार रखने का फैसला सुनाया तो लोगों ने अदालत में तालियां बजाकर इस फैसले का स्वागत किया।

देश की सर्वोच्च अदालत ने यह फैसला काफी भावुक कर देने वाली टिप्पणियों के साथ सुनाया था लेकिन क्या सख्त कानून और फांसी की सजा हवस के दरिन्दों में कोई खौफ पैदा कर पाया ? निर्भया कांड के बाद जबर्दस्त सामाजिक क्रांति हुई लेकिन क्या कुछ बदला? रोहतक में भी निर्भया कांड जैसी जघन्य घटना हुई।

दरिन्दों ने 23 वर्ष की युवती को अगवा करके गैंगरेप के बाद हत्या कर दी थी। बलात्कारियों ने फिर क्रूरता की हद पार कर दी। दिल्ली हाइवे के पास लड़की की सिर कुचली लाश मिली तो घर वालों ने कपड़ों से उसकी पहचान की। अभी यह घटना अतीत में नहीं गई कि एक और घटना सामने आ गई।

दिल्ली से सटे गुरुग्राम में पूर्वोत्तर की 22 वर्ष की लड़की से चलती कार में गैंगरेप किया गया। इस घटना को अंजाम देने वाले अभी तक कानूनी शिकंजे से बाहर हैं। दोनों घटनाओं में हैवान घरों के बाहर के हैं लेकिन अफसोस इस बात का है कि घर के भीतर भी लड़कियां सुरक्षित नहीं हैं।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

Exercise- 22

बिहार के धमारा घाट स्टेशन पर भयानक रेल दुर्घटना में अनेक लोगों की मौत हो गई है और जिन्हें गंभीर चोटें आई हैं, उनमें से कई जीवन भर के लिए विकलांग हो जाएंगे। अगर लोगों की बड़ी भीड़ 80 किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से चल रही ट्रेन की चपेट में आ जाए , तो दुर्घटना की भयावहता का अंदाजा लगाया जा सकता है। आक्रोशित भीड़ की मारपीट व तोड़फोड़ से और भी ज्यादा नुकसान हो सकता है। भीड़ की हिंसा की वजह से स्थानीय प्रशासन और रेलवे विभाग वक्त पर राहत के इंतजाम न कर सका, इससे भी समस्या बढ़ी है। ये तमाम लोग एक पैसेंजर ट्रेन से उतरकर स्टेशन की दूसरी तरफ के एक मंदिर में दर्शन के लिए पटरी पार करके जा रहे थे। मरने वालों में ज्यादातर औरतें और बच्चे हैं , जाहिर है, ये लोग परिवार के पुरुषों के बताए रास्ते से रेलवे पटरी पार कर रहे थे। इन लोगों को शायद रेलवे यात्रा और पटरी पार करने का ज्यादा अनुभव भी नहीं रहा होगा, जैसा रोज या आम तौर पर सफर करने वालों को होता है। मोटे तौर यह लग सकता है कि रेलवे प्रशासन की इसमें कोई गलती नहीं थी। जिस तेज रफ्तार ट्रेन के नीचे ये लोग कुचले गए , उसे उस स्टेशन पर रुकना नहीं था, इसलिए उसे हरा सिग्नल दिया गया था और उस ट्रेन ड्राइवर की तो शायद कोई भी गलती नहीं थी, जिसे भीड़ ने बुरी तरह पीट दिया। इस घटना को हम अगर एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखें , तो यह लगता है कि यह दुर्घटना के शिकारों की गलती नहीं थी , बल्कि भारतीय रेलवे का जो हाल हमने बना दिया है, वही इसका जिम्मेदार है। सिर्फ बिहार के इस दुर्गम इलाके में ही लोग पटरी पार नहीं करते , दिल्ली और मुंबई जैसे महानगरों में उससे ज्यादा लोग हर साल मरते हैं और हम इसे रोक नहीं पाए हैं। यह भी गौरतलब है कि पिछले दो दशकों में तीन रेलवे मंत्री बिहार से आए हैं। जब से राजनेताओं ने रेलवे की वोट दिलाऊ क्षमता को पहचाना है, तब से भारतीय रेलवे राजनेताओं के लिए सिर्फ वोट दिलाने वाली मशीन है और रेलवे को सिर्फ लोकप्रिय, लोक-लुभावन तरीके से चलाया जाता है। इसका नतीजा यह हुआ कि रेलवे की आय नहीं बढ़ी और उसका आधुनिकीकरण नहीं हुआ। आजादी के समय भी रेल पटरियां पार करने की समस्या थी , वही आज भी है। तब ट्रेनें इतनी ज्यादा नहीं चलती थीं , न इतनी तेज ट्रेनें थीं , इसलिए दुर्घटना की आशंका कम होती थी। आजकल सिर्फ मुंबई में 2,000 से ज्यादा लोग हर साल रेल दुर्घटनाओं में मरते हैं , इनमें से आधे से ज्यादा लोग पटरी पार करते हुए जान गंवाते हैं। चूंकि रेलवे का तंत्र अराजक है , उसमें न जरूरी सुविधाएं हैं, न नियमों के पालन की सख्ती, इसलिए आम लोग भी नियमों का पालन नहीं करते। धमारा घाट पर भी रेलवे प्रशासन को लोगों को पटरी पार करने से रोकना था , लेकिन शायद ही कहीं रेलवे स्टाफ ऐसा करता होगा। करे भी , तो उसके कामयाब होने की संभावना बहुत ही कम है। अगर रेलवे का आधुनिकीकरण नहीं हुआ, तो हमारे देश में इस तरह की दुर्घटनाओं को रोकना तकरीबन नामुमकिन है। इसके लिए जरूरी है कि रेलवे को व्यावसायिक कौशल के नजरिये से संचालित किया जाए , न कि वोट और भ्रष्टाचार की मशीन की तरह। अगर इसी बुनियादी ढांचे पर बोझ लगातार बढ़ता रहा , तो इसका जगह-जगह से चरमराना और टूटना तय है। भारतीय रेल राजनीतिक इस्तेमाल की वजह से वक्त से बहुत पीछे चल रही है। भारत की जनता सुरक्षित और आरामदेह सफर की हकदार है, और हर दुर्घटना यह बताती है

Exercise- 23

विदेशों में आम तौर पर सामान्य भोजन काफी सूखा होता है , इसलिए उसके साथ कोई पेय लेना वहां जरूरी है। भारतीय भोजन में दाल या रसदार सब्जी की वजह से यह जरूरी नहीं होता , लेकिन जो फास्ट फूड बाजार से आता है, उसके साथ शीतल पेय जरूरी हो जाता है। इसका अर्थ है कि ये दोनों स्वास्थ्य के लिए हानिकारक चीजें एक साथ आती हैं। अगर घर के परंपरागत भोजन को नियम बनाया जाए और फास्ट फूड को अपवाद की तरह ही आजमाया जाए , तो सेहत के लिए अच्छा है। आखिरकार हम यही चाहते हैं कि हमारे बच्चे कुछ रचें, दुनिया को हमसे बेहतर बनाएं , न कि उसमें किसी तरह की तोड़-फोड़ करें। दुनिया की सबसे ऊंची हवाई पट्टी पर भारतीय वायु सेना ने हरक्यूलिस सी- 130जे हवाई जहाज उतारकर चीन को एक चुनौती दी है। दौलतबेग ओल्डी हवाई पट्टी उसी इलाके में है , जहां कुछ दिनों पहले चीनी सैनिकों ने घुसपैठ की थी और करीब तीन हफ्तों तक वे तंबू तानकर वहां रहे थे। चीन की घुसपैठ की एक वजह दौलतबेग ओल्डी हवाई पट्टी को फिर से चालू करने की भारतीय कोशिश का विरोध थी। यह हवाई पट्टी वास्तविक नियंत्रण रेखा से सिर्फ आठ किलोमीटर की दूरी पर है और यहां हवाई जहाजों का आना-जाना यह बताता है कि किसी भी मौके पर भारत तेजी से अपने सैनिक यहां उतार सकता है। सीमा के उस पार चीनी क्षेत्र में सड़क तो है , लेकिन हवाई यातायात की कोई व्यवस्था नहीं है। दौलतबेग ओल्डी की तरह दो और ऐसी ही हवाई पट्टियों को भारत ने सीमा पर फिर से सक्रिय किया है। ये सारी हवाई पट्टियां 1962 के युद्ध के पहले सक्रिय थीं , लेकिन उसके बाद इन्हें छोड़ दिया गया था। यह मुमकिन है कि जवाब में चीन भी कोई कार्रवाई करे। इस बीच चीनी सैनिकों ने अरुणाचल प्रदेश में भारतीय सीमा में घुसपैठ की है। भारतीय सेना का कहना है कि वे लौट गए हैं और अब वहां भारतीय सैनिक मौजूद हैं। भारत-चीन सीमा पर इस तरह की नोकझोंक चलती रहती है। इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि चीन भारत को याद दिलाता रहता है कि दोनों देशों के बीच सीमा विवादग्रस्त है और भारतीय सीमा के अंदर आने वाले काफी बड़े क्षेत्र पर चीन का दावा है। चीन का दावा तो यह भी है कि अरुणाचल प्रदेश चीन का हिस्सा है और उसे चीन को सौंप दिया जाना चाहिए। उसी तरह , पूरी सीमा के क्षेत्रों को लेकर दोनों देशों में असहमति है और इस समस्या को सुलझाने के लिए दोनों देशों के बीच लगातार बातचीत होती रहती है। लेकिन दोनों एक-दूसरे को अपनी ताकत भी दिखाते रहते हैं। चीनी सैनिक अक्सर उन भारतीय क्षेत्रों में घुसपैठ करते रहते हैं जो चीन के मुताबिक उसका है। अच्छी बात यह है कि ये मामले कभी बहुत गंभीर या घातक रूप नहीं लेते और सीमा पर दोनों देशों के सैन्य अफसरों के बीच बातचीत के जरिये उन्हें सुलझाने की व्यवस्था है। दोनों देश जानते हैं कि सीमा पर शांति दोनों की तरक्की के लिए कितनी जरूरी है और दोनों के बीच व्यापार कितना महत्वपूर्ण है। पाकिस्तान के साथ दिक्कत दूसरी है, क्योंकि पाकिस्तान में सेना स्वायत्त है और अपने देश में शांति और आर्थिक विकास की भी वह फिक्र नहीं करती। इस वजह से पाकिस्तानी सेना सीमा पर अक्सर खतरनाक किस्म की हरकतें भी कर देती है, जैसे पिछले दिनों पांच भारतीय सैनिकों की हत्या कर दी थी। लेकिन भारतीय सेना भी पाकिस्तानी हरकतों का जवाब देने में सक्षम है और वह कभी किसी हरकत को अनदेखा नहीं करती।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

इस राजनीतिक टकराव से समाज में गैर बराबरी खत्म करने के लिए आम सहमति मुश्किल हो जाएगी। ऐसा नहीं होना चाहिए कि किसी विशेष समूह के सत्तारूढ़ होने पर उसके अपने लोगों को विशेष रियायतें मिलें और दूसरे वंचितों के साथ अन्याय हो। आम सहमति की राजनीति तभी होगी, जब वंचित समूहों के उत्थान के लिए आरक्षण का अचूक इस्तेमाल हो, वरना फिर बराबरी की समूची प्रक्रिया राजनीतिक चतुराई और पाखंड के जाल में अटक जाएगी। वि पाब्लो नेरुदा ने लिखा है कि 'समय को कैंची से नहीं काटा जा सकता।' समय के अनवरत प्रवाह से हम नए साल में पिछले साल की उम्मीदें, सुख-दुख, सफलताएं और असफलताएं लेकर ही प्रवेश करते हैं। 2012 के आखिरी महीने में दिल्ली में हुए सामूहिक बलात्कार-हत्या की ऐसी छाया रही कि नए साल का स्वागत भी कुछ दबा-दबा सा रहा। यह स्वाभाविक भी है और सही भी, किसी भी समाज को इतना संवेदनहीन नहीं होना चाहिए कि ऐसी अमानवीय घटना को भूलकर जोर शोर से उत्सव मनाने खड़ा हो जाए। भूलना इसलिए भी नहीं चाहिए कि इसे याद रखने में ही यह उम्मीद भी है कि आइंदा किसी महिला के साथ ऐसा अत्याचार न हो। यह उम्मीद इसलिए भी बनती है क्योंकि सारा भारतीय समाज इस कांड के विरोध में एकजुट हो गया है। यह एकता और यह विरोध बना रहे तो हम सरकार और अपने समाज में व्याप्त सामंती और महिला विरोधी तत्वों से निपटने की सोच सकते हैं। कई मायनों में यह अच्छा है कि नए साल की शुरुआत बड़े जोर शोर से नहीं हो रही है क्योंकि अपने दुखों, शर्म और तकलीफ को याद रखकर ही हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हमारी और हमारी नई पीढ़ी के भविष्य पर ऐसी वीभत्स छाया नहीं होगी। इसके रास्ते में दिक्कतें बहुत हैं जो इस कांड के अभियुक्तों को सजा मिलने या कड़ा कानून बनाने भर से हल नहीं होंगी। अब भी बलात्कार पीड़ित कई महिलाएं हैं जिनकी शिकायत तक पुलिस दर्ज नहीं कर रही है। अभी-अभी भारत के दो ग्रामीण या अर्धशहरी इलाकों से खबरें आई हैं कि बलात्कार पीड़िताओं को शिकायत दर्ज करने का साहस करने पर समाज या गांव से बेदखल कर दिया गया। कई ऐसे मामले हैं जिनमें पुलिस और अदालत की नर्मी की वजह से सालों में फैसला नहीं हुआ है और आरोपी जमानत पर खुले घूम रहे हैं। हमारे समाज को भी बहुत ज्यादा सुधरने की जरूरत है, सिर्फ सरकार या पुलिस को कसने से कुछ नहीं होगा। लेकिन समाज के बड़े तबके की स्वयंस्फूर्त सक्रियता और मुखरता से उम्मीद तो बंधती है। समाज में सक्रियता होना इस मायने में अच्छा है कि इससे यह पता लगता है कि नई पीढ़ी सिर्फ करियर, फिल्म, मनोरंजन और तेज बाइक के बारे में नहीं सोचती, वह समाज को बेहतर बनाने के लिए सड़कों पर आ सकती है। विभिन्न मुद्दों पर यह सक्रियता और मुखरता देखने में आई। एक बात बहुत साफ है कि यह पीढ़ी पिछली पीढ़ियों की तरह यह मानने को तैयार नहीं है कि भारतीय जनता दोयम दर्जे की चीजों की ही हकदार है। यह पीढ़ी उस पीढ़ी से अलग है जो राशन की लाइन में लगती थी और एक सेकंड हैंड स्कूटर खरीद पाने को सबसे बड़ी उपलब्धि मानती थी। यह पीढ़ी उदारीकरण के बाद जवान हुई पीढ़ी है और इनमें जो साधनहीन तबकों के नौजवान हैं, उनकी भी महत्वाकांक्षाएं बड़ी हैं। वे यह मानते हैं कि अगर विकसित देशों के नौजवान जवाबदेह और पारदर्शी तंत्र के हकदार हैं तो वे क्यों नहीं।

नए पोप ऐसी ही पृष्ठभूमि से आए हैं। नए पोप ने अपने लिए फ्रांसिस नाम चुना है। यह नाम चुनने वाले भी वह पहले पोप हैं। फ्रांसिस नाम ईसाई इतिहास की दो नामी हस्तियों का रहा है। पहले थे सेंट फ्रांसिस ऑफ अस्सि, जो दुनिया भर में करुणा , सेवा और वैराग्य के प्रतीक पुरुष माने जाते थे। नए पोप के मुताबिक , वह इन्हीं सेंट फ्रांसिस की स्मृति में यह नाम धारण कर रहे हैं। दूसरे थे सेंट फ्रांसिस जेवियर , जो जेसुइट मत को स्थापित करने वाले शुरुआती लोगों में से थे। वह सेंट इग्निशियस के शुरुआती चंद अनुयायियों में से थे , जिन्होंने ईसाइयत और जेसुइट मत के विस्तार के लिए बहुत काम किया। नए पोप शायद चर्च में एक नवीन युग का सूत्रपात कर सकें, जिसकी रोमन कैथोलिक चर्च को बहुत जरूरत है। चर्च में यौन शोषण, भ्रष्टाचार और कुटिल राजनीति को लेकर पिछले दिनों जो भंडाफोड़ हुए हैं , उनसे चर्च की प्रतिष्ठा गिरी है। यह भी कहा जा रहा है कि पोप बेनेडिक्ट ने इन्हीं मुश्किलों के चलते पोप का पद त्यागा। नए पोप के लिए पहला बड़ा काम इन विवादों से चर्च को निकालकर उसकी प्रतिष्ठा फिर से स्थापित करना है। दूसरा ज्यादा बड़ा काम है- नए दौर में चर्च की प्रासंगिकता को बनाए रखना। यह देखना दिलचस्प होगा कि जब संगठित धार्मिक संस्थानों से लोग दूर हो रहे हैं और चर्च की कई मान्यताएं समाज में अमान्य हो चुकी हैं , तब क्या वह वक्त के हिसाब से चर्च को ढाल सकते हैं? इतिहास उनकी विरोधाभासी छवियां दिखाता है। कुछ मुद्दों पर वह रूढ़िवादी हैं, तो कुछ पर प्रगतिशील नजर आते हैं। देखना होगा कि वह चर्च को उसके अपने विरोधाभासों से निकालकर नए जमाने में प्रांसगिक बना पाते हैं या नहीं। जैसे-जैसे विज्ञान के औजार ज्यादा सूक्ष्म और प्रभावी होते जा रहे हैं , वैसे-वैसे ग्लोबल वार्मिंग के बारे में नए तथ्य सामने आ रहे हैं। अब वैज्ञानिकों ने व्यापक विश्लेषण करके बताया है कि अगर ग्लोबल वार्मिंग इसी तरह बढ़ती रही, तो सन 2100 में धरती उतनी गरम हो जाएगी, जितनी पिछले 11,300 वर्षों में नहीं हुई थी। इस दौर को भू-वैज्ञानिक शब्दावली में का नाम दिया गया है और यह दौर इसलिए विशेष है , क्योंकि इसी में मानव सभ्यता का पूरा इतिहास छिपा हुआ है। यह जानकारी इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि अब तक ग्लोबल वार्मिंग के संदर्भ में पिछले करीब 2000 साल का ही विशेष रूप से अध्ययन किया गया है। यह पहली बार है कि वैज्ञानिक लगभग साढ़े ग्यारह हजार साल में धरती के विभिन्न हिस्सों के तापमान के बारे में जानकारी जुटा सके हैं। अगर ऐसा होता है , तो आज तक के धरती के इतिहास में पहली बार ऐसा होगा कि मनुष्य की वजह से मौसम बदला। हमारे लिए ये कुछ हजार साल बहुत बड़ा समय है, लेकिन धरती की उम्र के लिहाज से ये साल एक क्षण भी नहीं हैं। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि धरती पर अब तक पांच बड़े हिम युग आ चुके हैं। हम अब भी एक हिम युग से गुजर रहे हैं। यह हिम युग का एक इंटर ग्लैशियल दौर है , जिसमें ग्लेशियर सिकुड़ जाते हैं। मौजूदा हिम युग लगभग 25 लाख साल पहले शुरू हुआ था। पहला हिम युग करीब दो से ढाई अरब साल पहले हुआ था। इससे हम अंदाजा लगा सकते हैं कि धरती की उम्र के आगे मानव सभ्यता की उम्र क्या है और यह भी कि इस थोड़े समय में ही हमने ऐसा कारनामा कर दिया कि धरती का तापमान बढ़ने लगा। इस कारनामे को और सही परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए हमें और स्पष्ट करना होगा कि ग्लोबल वार्मिंग समूची मानव सभ्यता की नहीं,

लेकिन क्या संसद के कामकाज को इस राजनैतिक लड़ाई का बंधक बनाना ठीक है ? सरकार पर आरोप तो हमेशा से लगते रहते हैं और लगते रहेंगे, लेकिन क्या उनका राजनैतिक लाभ लेने के लिए संसद की कार्यवाही रोकना ही एकमात्र रास्ता है? विपक्ष यह कह सकता है कि जिन आरोपों पर उसने संसद का कामकाज रोका है, वे बहुत गंभीर हैं, लेकिन इस तर्क का जवाब यह है कि संसद का हर सत्र ही इस तरह की रुकावट का शिकार बना है। एक रपट यह बताती है कि लोकसभा के इस कार्यकाल में संसद का कामकाज आज तक के संसदीय इतिहास में सबसे कम हुआ। संसद का कामकाज रोकना महत्वपूर्ण और संवेदनशील मुद्दों पर संसदीय बहस न होने देना या ऐसे कानूनों का लटके रहना है। अब वक्त आ गया है कि हम संसद के कामकाज और राजनैतिक लड़ाइयों को अलग करें। प्रधानमंत्री या कानून मंत्री या रेल मंत्री को इस्तीफा देना चाहिए और खाद्य सुरक्षा बिल व जमीन अधिग्रहण बिल पास हों या न हों , ये सवाल एक दूसरे से संबद्ध नहीं हैं। शायद विपक्ष की यह गलतफहमी ही है कि संसद का कामकाज रोकने का ज्यादा राजनैतिक असर होता है। इससे विपक्ष की छवि बेहतर नहीं बनती। अगर विपक्ष संसद में आकर बहस करे , तो संभव है कि उससे ज्यादा असर पड़े और जनता में उसके पक्ष में माहौल बने। अगर विपक्ष को यह लग रहा है कि खाद्य सुरक्षा बिल से सरकार को राजनैतिक फायदा होगा, इसलिए उसे रोकना चाहिए, तो फिर यह भी तय है कि इसे रोकने का राजनैतिक नुकसान विपक्ष को ही होगा। अमर्त्य सेन और कई विशेषज्ञ भी विपक्ष से कह चुके हैं कि वे खाद्य सुरक्षा बिल को पास होने दें। अगर भ्रष्टाचार के मुद्दे का असर जनता पर पड़ना है, तो वह इस बिल के बावजूद पड़ेगा और सरकार की हठधर्मिता का नुकसान उसे तभी होगा , जब विपक्ष की हठधर्मिता उससे कम होगी। प्रधानमंत्री और उनके सहयोगियों से इस्तीफा मांगने के लिए भाजपा और बाकी विपक्ष चाहे तो संसद के बाहर आंदोलन कर सकता है। भाजपा को यह लगता है कि सिर्फ अतिरिक्त आक्रामक होकर ही वह प्रभावशाली हो सकती है। बाकी पार्टियों की यह समस्या हो सकती है कि वे संख्या बल में कमी को शोर से पाटने की कोशिश करें। भाजपा के साथ यह भी समस्या नहीं है। उसके पास पर्याप्त संख्या बल है और काफी प्रभावी वक्ता भी हैं। हो यह रहा है कि इन वक्ताओं का नजरिया टीवी पर दो-चार वाक्यों तक ही सुनने को मिलता है। संभव है कि भाजपा को कर्नाटक में अच्छे प्रदर्शन की उम्मीद नहीं है और वह नतीजों के पहले ऐसा माहौल बनाना चाहती है, जिससे ये नतीजे ज्यादा असर न छोड़ पाएं। लेकिन इसके लिए संसद के महत्वपूर्ण सत्र को क्यों सूली पर चढ़ाया जाए, खासकर तब, जब आपको अगले चुनावों के बाद सरकार बनाने की उम्मीद हो?

कुछ ही दिनों पहले के तमाम बुरे अनुभवों और तनावों के बाद विदेश मंत्री सलमान खुर्शीद की चीन यात्रा सद्भावपूर्ण माहौल में ही हुई है। जाहिर है , सीमा पर तीन हफ्ते चले गतिरोध को दोनों ही पक्षों ने पीछे छोड़ दिया है। खुर्शीद ने यह साफ तौर पर कहा कि सीमा पर गतिरोध का मामला बातचीत में नहीं उठा। सलमान खुर्शीद की यह यात्रा नए चीनी प्रधानमंत्री ली केकियांग की भारत यात्रा के सिलसिले में हुई है , जो इसी महीने प्रस्तावित है। चीन में राजनीतिक परिवर्तन के बाद उसके प्रधानमंत्री की यह पहली आधिकारिक विदेश यात्रा है। इससे पता चलता है कि यह यात्रा राजनयिक रूप से कितनी महत्वपूर्ण है और यह भी साफ होता है कि तमाम शक-शुबहों के बावजूद भारत से संबंध चीन के लिए बहुत मायने रखता है।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

Exercise- 27

रुपये को थामने के लिए रिजर्व बैंक ने बाजार से नकदी घटाने के उपाय कुछ ही दिन पहले शुरू किए थे, जिनका कुछ असर रुपये की कीमत पर पड़ा। लेकिन मौद्रिक नीति और उसके पहले अर्थव्यवस्था पर रिपोर्ट से यह जाहिर हो जाता है कि रिजर्व बैंक इससे आगे शायद कुछ भी न कर पाए , इसलिए अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए वित्तीय संस्थानों ने कदम उठाने शुरू कर दिए , जिनसे रुपये का रुख फिर गिरावट का हो गया। मौजूदा रिजर्व बैंक गवर्नर डी सुब्बाराव के कार्यकाल की यह आखिरी मौद्रिक नीति की घोषणा है। दो महीने बाद वह रिटायर हो रहे हैं। अपने उथल-पुथल भरे और विवादास्पद कार्यकाल में सुब्बाराव ने भारतीय अर्थव्यवस्था को ऊंचाइयों पर भी देखा और अपने कार्यकाल की अंतिम रिपोर्ट में विकास दर के अनुमान को 5.7 से 5.5 तक घटते भी देखा। लेकिन ताजा मौद्रिक नीति रिजर्व बैंक की क्षमता और उसकी सीमाओं को भी बताती है। रिजर्व बैंक ने नकदी घटाने के जो उपाय पिछले दिनों किए हैं और नई मौद्रिक नीति से विकास की गति पर प्रतिकूल असर तो पड़ेगा ही, लेकिन रिजर्व बैंक की मुख्य फिक्र महंगाई फिर से उसके चिंतन के केंद्र में आ गई है। थोक मूल्य सूचकांक तो फिलहाल ठीक स्थिति में है , लेकिन उपभोक्ता मूल्य सूचकांक 10 प्रतिशत से थोड़ा ही नीचे है। रुपये की कीमत गिरने के साथ ही अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल के दाम भी बढ़े हैं, इससे आयात का बिल बढ़ गया है और महंगाई के बढ़ने की भी आशंका है। चालू खाते का घाटा भी आयात के महंगा होने से बढ़ गया है और इस मोर्चे पर रिजर्व बैंक बहुत कुछ करने की स्थिति में नहीं है। उम्मीद सिर्फ यही है कि इससे निर्यात कुछ बढ़ेगा और चालू खाते का घाटा कम होगा। कई अर्थशास्त्री मानते हैं कि महंगाई घटाने को अपना एकमात्र लक्ष्य मानकर रिजर्व बैंक ने जो ताबड़तोड़ ब्याज दरें बढ़ाई थीं , उससे भारत की विकास दर को भारी नुकसान पहुंचा। वित्त मंत्री पी चिदंबरम ने भी एक ताजा वक्तव्य में यह कहा है कि रिजर्व बैंक का काम सिर्फ महंगाई पर नियंत्रण करना नहीं है, उसे विकास और रोजगार को भी अपनी नीतियों में महत्व देना चाहिए। मौजूदा रिजर्व बैंक का पूरा कार्यकाल महंगाई पर नियंत्रण में ही बीत गया , हो सकता है कि रिजर्व बैंक के अगले गवर्नर ऐसे हों जो वित्त मंत्री की इस राय से इत्तफाक रखें। रिजर्व बैंक का कहना है कि विकास दर बढ़ाने के लिए सरकार को अपनी ओर से कोशिशें करने की जरूरत है। कल जारी की गई रिपोर्ट में उसने कहा है कि विकास के लिए कम और स्थिर महंगाई एक शर्त है और यह तभी हो सकता है जब सरकार खाद्य और बुनियादी ढांचे में सप्लाई को बढ़ाए। रिजर्व बैंक ने यह भी कहा है कि बाजार में नकदी घटाने के उसके उपाय तात्कालिक हैं और रुपए के स्थिर होने पर धीरे-धीरे इन्हें हटाया जाएगा लेकिन उसने कोई समय सीमा नहीं दी है। जानकारों को उम्मीद यह है कि अक्टूबर तक रुपए की और देश की अर्थव्यवस्था की स्थिति अब के मुकाबले कुछ बेहतर हो सकती है और तब रिजर्व बैंक विकास दर बढ़ाने के लिए ब्याज दरें घटा सकता है , आखिर उम्मीद पर दुनिया और भारतीय अर्थव्यवस्था भी टिकी हुई है।

सिर्फ इंसान ही नहीं, कोई भी जीव खुशी और सुख चाहता है और दुख से बचना चाहता है। इंसानी सभ्यता के शुरू से ही खुशी को बढ़ाने और दुखों को कम करने की कोशिशें दिखती हैं। लेकिन साथ ही यह भी दिखता है कि इंसान किसी बड़े उद्देश्य के लिए तकलीफ उठाने के लिए भी तैयार रहता है

बिहार के कई क्षेत्रों में जो अफवाह फैली और जिससे नमक 100 रुपये किलो के भी पार चला गया, उससे यह तो पता चलता ही है कि हमारे देश में अफवाहें फैलाकर अशांति पैदा करना कितना आसान है। अफवाह यह फैलाई गई कि बिहार में नमक की सप्लाई कम हो गई है और बाजार में नमक की कमी हो जाएगी। बिहार में शांति स्थापित होने के बाद यह अफवाह पूर्वोत्तर के राज्यों में फैल गई और असम , मिजोरम, मणिपुर में लोगों ने इतनी मात्रा में नमक खरीद लिया कि दुकानों पर सचमुच कमी हो गई। वहां भी नमक के दाम 80 रुपये किलो तक पहुंच गए। अफवाहों की गति सही खबरों से ज्यादा तेज होती है और नए संचार साधनों , मोबाइल, इंटरनेट वगैरह का इस्तेमाल झूठ फैलाने वाले लोग बड़ी कुशलता से करते हैं , लेकिन जब ये साधन नहीं थे , तब भी गणेशजी के दूध पीने की अफवाह इतनी ही तेजी से फैली थी। इंटरनेट का इस्तेमाल तो कई सारे लोग या समूह झूठ फैलाने के लिए ही करते हैं , मसलन नेट पर महात्मा गांधी या जवाहरलाल नेहरू के बारे में तथ्यात्मक सामग्री आपको कम मिलेगी , अफवाहें व चरित्र हनन ज्यादा मिलेगा। नमक की कमी की अफवाह के बारे में आशंका यह है कि इसके पीछे कोई सुनियोजित षड्यंत्र रहा होगा। इतने बड़े इलाके में ऐसी अफवाह बिना तैयारी व योजना के नहीं फैलती। यह भी आशंका है कि इसके पीछे कोई सुसंगठित और काफी बड़ा समूह होना चाहिए। जिसे इस तरह के काम का अभ्यास हो। इसकी जड़ तक जाना मुश्किल है , क्योंकि एक वक्त के बाद अफवाह की जड़ गायब हो जाती है। लेकिन हमें यह जानना चाहिए कि किसी अफवाह के फैलने के पीछे कुछ कारण होते हैं , जो वास्तविक होते हैं। किसी समाज में बड़े पैमाने पर ऐसी अफवाह नहीं फैलती , जिस पर शुरू से ही लोग अविश्वास कर लें। बिहार में अफवाह के फैलने के पीछे दो मुख्य कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि देश में तमाम जरूरी चीजों के उत्पादन व वितरण का कारोबार ऐसा है कि उसमें कालाबाजारी या कृत्रिम कमी हो सकती है। इन दिनों खाने-पीने की चीजों की महंगाई तेजी बढ़ रही है और इसके पीछे उत्पादन में कमी नहीं, बल्कि कालाबाजारी, मुनाफाखोरी और वितरण तंत्र की धांधलियां हैं। ऐसे में, लोग विश्वास कर सकते हैं कि नमक की भी कमी हो सकती है या पैदा की जा सकती है। दूसरा कारण यह है कि सन 2014 के लोकसभा चुनावों की होड़ में तमाम राजनीतिक पार्टियां और नेता विद्वेषपूर्ण और तीखी लड़ाइयां लड़ रहे हैं। बिहार में कई साल तक देश का संभवत: सबसे सफल गठबंधन चलाने के बाद पिछले दिनों जनता दल (यू) और भाजपा अलग हुए और इस समय दोनों के बीच संबंध बहुत खराब हैं। भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी गुजरात के मुख्यमंत्री हैं और गुजरात, नमक उत्पादक प्रमुख राज्य है। ऐसे में, लोगों को अफवाह का समीकरण विश्वसनीय लगा होगा। अगर देश की राजनीति संयत और शालीन होती, तो शायद लोग इस अफवाह पर आसानी से भरोसा नहीं करते। लोगों को लगता है कि राजनीति में अपने प्रतिद्वंद्वी से बदला चुकाने के लिए नेता किसी भी हद तक जा सकते हैं , इसलिए एक तीखी प्रतिद्वंद्विता वाले चुनाव में सब कुछ संभव लगता है। मुमकिन है कि इसी विद्वेषपूर्ण राजनीति की एक चाल के तौर पर यह अफवाह फैलाई गई हो, क्योंकि अफवाहबाजी को राजनीतिक हथियार की तरह पहले भी इस्तेमाल किया गया है। अच्छा हुआ कि वक्त रहते ही सरकार ने तेजी से कदम उठाकर स्थिति को सामान्य कर दिया,

Exercise- 29

शशि थरूर विवादों के लिए अजनबी नहीं। संयुक्त राष्ट्र में पूर्व राजनयिक रहे और फिर राजनीति में आकर यूपीए सरकार में मंत्री बने शशि थरूर को इंडियन प्रीमियर लीग में एक टीम की नीलामी में अपनी भूमिका को लेकर विवाद के कारण विदेश राज्यमंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा था।

2009 में ट्वीटर पर थरूर के एक लाख साठ हजार से ज्यादा फॉलोअर थे और बहुत से लोग मजाक में उन्हें ट्वीटर मिनिस्टर कहते थे। 2009 के लोकसभा चुनावों में थरूर ने अपने राजनीतिक करियर का बहुत शानदार आगाज किया था और सरकार में शामिल हुए थे। उस समय भारत के बुजुर्ग राजनीतिक तंत्र में शशि थरूर का युवा, प्रतिभाशाली, ऊर्जावान नेता के तौर पर जनता ने भी स्वागत किया था।

शशि थरूर एक बार फिर चर्चा में हैं। इसका संबंध उनकी पत्नी सुनंदा पुष्कर की रहस्यमय हालात में हुई मौत से जुड़ा हुआ है। सुनंदा पुष्कर की मौत का मामला इतनी परतों में उलझ चुका है कि अभी तक आधा सत्य ही सामने आया है। पूर्ण सत्य क्या है, अभी इसकी परतें खुलना बाकी हैं।

जब उनकी पत्नी और दुबई की कारोबारी रही सुनंदा पुष्कर ट्वीटर पर हुए एक विवाद के बाद दिल्ली के एक होटल में मृत पाई गईं तो इस ट्वीटर विवाद से ऐसा लगा था कि थरूर और पाकिस्तानी पत्रकार मेहर तरार के बीच अफेयर था। हालांकि थरूर और तरार दोनों ने ही अफेयर की बात का खंडन किया था।

सुनंदा पुष्कर की मौत के बाद सोशल मीडिया पर तूफान उठ खड़ा हुआ था। कभी कहा गया कि इन दोनों के रिश्ते खराब थे। विभिन्न बीमारियों के चलते सुनंदा पुष्कर का उपचार चल रहा था। वह गम्भीर अवसाद की स्थिति में थीं।

किसी ने तो यहां तक लिखा था कि जो लोग ट्वीटर पर रहते हैं , वह ट्वीटर पर ही मर जाते हैं। इसके बाद ही सुनंदा पुष्कर की मौत का मामला उलझता ही गया। उसकी पोस्टमार्टम रिपोर्ट को लेकर भी काफी विवाद रहा। एम्स के फोरेंसिक विभाग के प्रमुख डा. सुधीर गुप्ता ने आरोप लगाया था कि उन पर सुनंदा पुष्कर की मौत को सामान्य बनाने का दबाव था।

पोस्टमार्टम रिपोर्ट से खुलासा हुआ कि सुनंदा की मौत अचानक और अप्राकृतिक कारणों से हुई थी। मेडिकल टीम ने खुलासा किया कि सुनंदा की मौत जहर देने से हुई। 20 मई, 2015 को ट्रायल कोर्ट ने मामले की जांच कर रही टीम को तीन लोगों के लाई डिटेक्टर टेस्ट की अनुमति दी थी। दिल्ली पुलिस के विशेष जांच दल ने अमरीकी जांच एजैंसी एफबीआई के अफसरों की मदद भी ली थी।

नवम्बर 2015 में एफबीआई ने सुनंदा की मौत की वजह जहर होने की आशंका को खारिज कर दिया था। सुनंदा की विसरा रिपोर्ट में भी किसी तरह के रेडियो एक्टिव पदार्थ से मौत होने की पुष्टि नहीं हुई। एफबीआई ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि सुनंदा के विसरा के किसी सैम्पल में रेडियो एक्टिव पदार्थ नहीं था हालांकि रिपोर्ट में रेडियो एक्टिव पदार्थ की मौजूदगी से पूरी तरह इंकार भी नहीं किया

Exercise- 30

इसके लिए ग्लोबल वार्मिंग को जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। शायद काफी हद तक यह सच भी है , लेकिन प्रकृति के चक्र के बहुत कम रहस्य हमें अब तक पता चले हैं , इसलिए हो सकता है कि मौसम के बदलाव के कुछ और भी कारण हों। आखिरकार लाखों साल से पृथ्वी पर मौसम बदलते रहे हैं और न जाने कितने बड़े छोटे हिम युग और गरमी के दौर आते-जाते रहे। ध्रुवीय क्षेत्रों में बर्फ भी हमेशा से नहीं थी और जो क्षेत्र आज रेगिस्तान हैं, वे भी हमेशा से रेगिस्तान नहीं थे। धरती की उम्र के मुकाबले हमारा समय का पैमाना बहुत छोटा है और विज्ञान की बड़ी तरक्की के बाद भी प्राकृतिक घटनाओं की हमारी जानकारी बहुत कम है। पिछले कुछ समय से हम इस सोच में उलझे हुए हैं कि मौसम का बदलाव हमारी किन्हीं गतिविधियों का नतीजा तो नहीं है। पर यह भी संभव है कि ग्लोबल वार्मिंग मौसम में बदलाव के लिए जिम्मेदार हो , या यह भी हो सकता है कि पृथ्वी पर कोई नया हिमयुग या गरम दौर आने वाला हो। यह सही है कि प्रदूषण घटाना बहुत जरूरी है , क्योंकि ग्लोबल वार्मिंग न हो, तब भी प्रदूषण मनुष्यों व दूसरे जीवों और वनस्पतियों के लिए खतरनाक है। इसके अलावा अब हमें मौसम की अनियमितता के लिए भी तैयार रहना चाहिए। अगर हर बारिश के बाद शहरों में ट्रैफिक जाम हो जाएं , या कोहरे की वजह से ट्रेनें और हवाई जहाज ठिठक जाएं , तो बड़ी मुश्किल होगी। ये दिक्कतें कुछ टेक्नोलॉजी और कुछ कार्य-कुशलता से खत्म की जा सकती हैं। इसके अलावा हमें अपनी खेती-बाड़ी के तौर-तरीकों में जरूरी बदलाव लाने होंगे। सबसे बड़ी जरूरत पानी के संग्रहण और उसके इस्तेमाल के तरीकों में बदलाव की है। बारिश किसी भी मौसम में हो , जरूरी यह है कि इस पानी को बह जाने से रोका जाए, ताकि बाढ़ न आए और बाद में पानी की किल्लत भी न हो। तालाबों और नदियों की देखभाल पर ध्यान दिया जाना चाहिए , क्योंकि अनियमित बारिश के जमाने में पुराने अंदाज से अपनी गतिविधियां चलाने से काम नहीं चलेगा। फरवरी के महीने में मूसलाधार बारिश आज हमें आश्चर्यचकित कर रही है , लेकिन अब जिस तरह से बदलाव सामने आ रहे हैं, हमें मौसम के मिजाज में अप्रत्याशितता को ही प्रकृति का नियम मान लेना चाहिए।

लगभग तीन-चार साल बाद स्वाइन फ्लू फिर लौट आया है। तमाम राज्यों से स्वाइन फ्लू की खबरें आ रही हैं। कुछ लोग इससे मर भी चुके हैं। आधुनिक समय में परिवहन के साधन बहुत तेज हैं , लोग काफी दूर-दूर की यात्राएं करते हैं, इसलिए स्वाइन फ्लू एक जगह से दूसरी जगह ज्यादा तेजी से पहुंचता है। यह संक्रमण कितना भयानक हो सकता है, इसका अंदाजा 1918-20 के दौरान हुए स्पैनिश फ्लू की तबाही से लगाया जा सकता है। इस महामारी ने लगभग 50 करोड़ लोगों को बीमार किया था और अंदाजन दो से पांच करोड़ लोग मारे गए थे। याद रखने की बात है कि उस समय दुनिया की जनसंख्या लगभग 200 करोड़ थी। अब यह संक्रमण इस भयानक हद तक नहीं पहुंच पाता। वायरस से होने वाली तमाम बीमारियों की तरह फ्लू के वायरस का एक बार संक्रमण हो जाने के बाद उसके प्रति प्रतिरोध क्षमता पैदा हो जाती है , लेकिन फ्लू का वायरस कुछ वक्त बाद अपनी संरचना बदलकर वापस आ जाता है। फिलहाल जो वायरस संक्रमण फैला रहा है, वह वही एच1एन1 वायरस है, जो तीन-चार साल पहले फैला था, लेकिन उसकी संरचना में फेरबदल ज्यादा शोध के बाद ही पता चलेगा। यह भी बताना जरूरी है कि स्वाइन फ्लू नाम भले ही चलन में आ गया हो, लेकिन यह स्वाइन फ्लू है

रंगून भाग गया था, और वहीं उसका देहान्त हो गया था। उसके पाशविक व्यवहारों को याद करके मैं उन्मत्त हो उठता था। उसे जीता पा जाता तो उसका खून पी जाता , पर इस समय स्मृति-मूर्ति को देखकर मेरा मन जैसे मुखरित हो उठा। उसे आलिंगन करने के लिए व्याकुल हो गया। उसने मेरे साथ, मेरी स्त्री के साथ, माता के साथ मेरे बच्चे के साथ जो-जो कटु , नीच और घृणास्पद व्यवहार किये थे, वह सब मुझे याद आ गए।

मन में केवल यही भावना थी मेरा भैया कितना दुखी है। मुझे इस भाई के प्रति कभी इतनी ममता न हुई थी, फिर तो मन की वह दशा हो गई, जिसे विह्वलता कह सकते है। शत्रु-भाव जैसे मन से मिट गया था। जिन-जिन प्राणियों से मेरा बैर-भाव था , जिनसे गाली-गलौज, मार-पीट मुकदमाबाजी सब कुछ हो चुकी थी, वह सभी जैसे मेरे गले में लिपट-लिपटकर हँस रहे थे।

फिर विद्या (पत्नी) की मूर्ति मेरे सामने आ खड़ी हुई वह मूर्ति जिसे दस साल पहले मैंने देखा था उन आंखों में वही विकल कम्पन था , वहीं संदिग्ध विश्वास, कपोलों पर वही लज्जा-लालिमा , जैसे प्रेम सरोवर से निकला हुआ कमल पुष्प हो। वही अनुराग, वही आवेश, वही याचना-भरी उत्सुकता, जिसमें मैंने उस न भूलने वाली रात को उसका स्वागत किया था, एक बार फिर मेरे हृदय में जाग उठी।

मधुर स्मृतियों का जैसे स्रोत-सा खुल गया। विद्या के चरणों पर सिर रगड़कर रोऊँ और रोते-रोते बेसुध हो जाऊँ। मेरी आंखें सजल हो गई। मेरे मुँह से जो कटु शब्द निकले थे , वह सब जैसे ही हृदय में गड़ने लगे। इसी दशा में, जैसे ममतामयी माता ने आकर मुझे गोद में उठा लिया। बालपन में जिस वात्सल्य का आनंद उठाने की मुझमें शक्ति न थीं, वह आनंद आज मैंन उठाया। गाना बन्द हो गया। सब लोग उठ-उठकर जाने लगे।

मैं कल्पना-सागर में ही डूबा रहा। सहसा जयदेव ने पुकारा चलते हो , या बैठे ही रहोगे ? हल्कू ने आकर स्त्री से कहा-सहना आया है। लाओं , जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे। मुन्नी झाड़ू लगा रही थी।

पीछे फिरकर बोली-तीन ही रुपये हैं , दे दोगे तो कमल कहाँ से आवेगा ? मास-पौष की रात राह में कैसे कटेगी? उससे कह दो, फसल पर दे देंगें। अभी नहीं। हल्कू एक क्षण अनिशिचत दशा में खड़ा रहा। पौष सिर पर आ गया, कम्बल के बिना राह मे रात को वह किसी तरह सो नहीं सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमावेगा, गालियां देगा। बला से जाड़ों मे मरेंगे , बला तो सिर से टल जाएगी।

यह सोचता हुआ वह अपना भारी-भरकम डील लिए हुए (जो उसके नाम को झूठ सिध्द करता था) स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला-दे दे , गला तो छूटे।कम्बल के लिए कोई दूसरा उपाय सोचूँगा। मुन्नी उसके पास से दूर हट गई और आंखें तरेरती हुई बोली-कर चुके दूसरा उपाय। जरा सुनूँ तो कौन-सा उपाय करोगे? कोई खैरात दे देगा कम्मल? न जाने कितनी बाकी है, जों किसी तरह चुकने ही नहीं आती।

यह उपन्यास जमीदार , अफसर, पटवारी, साहूकार, पुरोहित के आतंक में फंसे होरी की लाचारी का मार्मिक बिंब है। महाजनी सभ्यता के क्रूर पंजों में फंसे होरी की कहानी किसी भी गरीब और शोषित भारतीय किसान की भांति ही है जो गरीबी की मार , बंटवारे का दर्द, कर्ज की मार, बैलों की जोड़ी के बिक जाने या मर जाने का सदमा , आधा खेत साझे की खेती का अपमान और अपने खेतों की नीलामी का दंश सहता हुआ आखिरकार मजदूरी करने को बाध्य हो जाता है।

होरी के चरित्र में विद्रोह और क्रांति की इच्छा न दिखाकर प्रेमचंद ने होरी को एक आम किसान का प्रतिनिधि बनाए रखा। यह लेखक का यथार्थवादीनजरिया है जिसके चलते होरी को महान क्रांतिकारी नायक न दिखाकर या शोषण करने वालों का हृदय परिवर्तन न दिखाकर कथा को दुखांत रूप दिया है।

इस शिल्प को अपनाकर लेखक ने पाठक पर गहरा त्रासद प्रभाव छोडने का उपक्रम किया है और कथा को यथार्थ के निकटतम बनाए रखा है। प्रेमचंद ने गोदान कोसंक्रमण की पीड़ा का दस्ताखवेजबनाया है। इस उपन्यास में होरी ही एकमात्र ऐसा पात्र है जो युग के साथ बदलता नहीं है। यही न बदलना होरी की शख्सियत का अहम पक्ष है। सामंतवाद से पूंजीवाद की ओर बदलते युग में होरी का बेटा गोबर किसान से मजदूर बन जाता है। गोबर का शोषण बरकरार रहता है लेकिन वो बच जाता है और उसमें प्रतिरोध का स्व र बना रहता है।

यहाँ तक कि धनिया भी विद्रोहिणी है , वह गाँव भर के सामने सबसे लोहा लेती है। किंतु केवल होरी ही है जो संक्रमण को समझ नहीं पाता वह सामंतवाद के मूल्योंको ही ढोता रहता है , न मरजाद को छोड़ पाता है न गाँवको, नजमीन को और न किसानी को ही। अंततरू वो मरता भी है गाँव को शहर से जोड़ने वाली सड़क को बनाते हुए, वही सड़क जो अंततरू गाँव पर शहर के अधिपत्यकी घोषणा है। यह सड़क सामंतवाद के पतन की और पूंजीवाद की जीत की निशानी है। वह अपना जीवन मर्यादा केपरम्परागत मिथ को पाने के लिए झोंक देता है और अपनी मृत्यु के समय भी गाय के दान जैसे काम को न कर पाने के दुख से भरा हुआ है,

ये तो विद्रोहिणी धनिया ही है जो मजदूरी के सिक्केको मृत होरी के हाथ में दबा घोषणा करती है कि यही होरी का गोदान है। होरी कितने भी कष्ट सहकर मरजाद का मोह नहीं छोड़ पाता है। उसका जीवन मरजाद के मिथ से घिरा हुआ है।उस पर धर्म, संस्कारों, नैतिकता और आदर्शों का दबाव गहरा है। एकाध स्थान पर जब वह अपनी नैतिकता से डगमगाता भी है तब भी वह द्वंद्वऔर दर्द का अनुभव करताहै। होरी जैसे मामूली से किसान को भी लेखक ने मध्यवर्गीय नैतिकता का शिकार दिखाया है। इस द्वंद्व के कारण न तो वह नैतिकता का पूरी तरह से पालन कर पाता है

और न अपने स्वार्थों की पूर्ति कर पाता है। यह व्यवहार एक आम आदमी की अपरिभाषित और ओढीहुई नैतिकता की देन है जो इंसान को भीरू बनाए रखती है। गोदान के होरी की जिंदगी की यही नैतिकताजन्य नियति आज भी आमभारतीय किसानों की नियति है। गरीबी और शोषण के बावजूद मर्यादा से जीवन जीने की तमन्ना और जिद में पिसता हुआ होरी। सारे गांव के सामने अपनी पत्नी

Exercise- 33

पंजाब के सत्तारूढ़ भाजपा व अकाली दल गठबंधन के दबाव में काम कर रहे हैं , और ऐसी फिल्म को प्रतिबंधित करने की कोशिश कर रहे हैं , जो सूबे में चौतरफा फैले नशे के कारोबार की हकीकत उजागर करती है। बहरहाल , अभिव्यक्ति को दबाने की सेंसर बोर्ड की कोशिशों के खिलाफ और इस फिल्म व इसके निर्माताओं के समर्थन में एकता दिखाते बॉलीवुड को देखना भी अपने-आप में अद्भुत एहसास है। पंजाब सूबे में 15 से 64 साल की उम्र के तकरीबन 2,32,000 शख्स नशे के आदी हैं, जो विश्व के औसत का करीब छह गुना है कि निहलानी पंजाब के सत्तारूढ़ भाजपा व अकाली दल गठबंधन के दबाव में काम कर रहे हैं , और ऐसी फिल्म को प्रतिबंधित करने की कोशिश कर रहे हैं , जो सूबे में चौतरफा फैले नशे के कारोबार की हकीकत उजागर करती है। बहरहाल , अभिव्यक्ति को दबाने की सेंसर बोर्ड की कोशिशों के खिलाफ और इस फिल्म व इसके निर्माताओं के समर्थन में एकता दिखाते बॉलीवुड को देखना भी अपने-आप में अद्भुत एहसास है। पंजाब सूबे में 15 से 64 साल की उम्र के तकरीबन 2,32,000 शख्स नशे के आदी हैं, जो विश्व के औसत का करीब छह गुना है

SONI TYPING TUTOR

किसी को मेरे साथ मेरी थाली में खाने की हिम्मत हुई है , ऐसा मुझे स्मरण नहीं आता। गिल्लू इनमें अपवाद था। मैं जैसे ही खाने के कमरे में पहुँचती , वह खिड़की से निकलकर आँगन की दीवार , बरामदा पार करके मेज पर पहुंच जाता और मेरी थाली में बैठ जाना चाहता।

बड़ी कठिनाई से मैंने उसे थाली के पास बैठना सिखाया जहां बैठकर वह मेरी थाली में से एक-एक चावल उठाकर बड़ी सफाई से खाता रहता। काजू उसका प्रिय खाद्य था और कई दिन काजू न मिलने पर वह अन्य खाने की चीजें या तो लेना बंद कर देता या झूले से नीचे फेंक देता था।

उसी बीच मुझे मोटर दुर्घटना में आहत होकर कुछ दिन अस्पताल में रहना पड़ा। उन दिनों जब मेरे कमरे का दरवाजा खोला जाता गिल्लू अपने झूले से उतरकर दौड़ता और फिर किसी दूसरे को देखकर उसी तेजी से अपने घोंसले में जा बैठता। सब उसे काजू दे आते , परंतु अस्पताल से लौटकर जब मैंने उसके झूले की सफाई की तो उसमें काजू भरे मिले , जिनसे ज्ञात होता था कि वह उन दिनों अपना प्रिय खाद्य कितना कम खाता रहा।

मेरी अस्वस्थता में वह तकिए पर सिरहाने बैठकर अपने नन्हे-नन्हे पंजों से मेरे सिर और बालों को इतने हौले-हौले सहलाता रहता कि उसका हटना एक परिचारिका के हटने के समान लगता। गरमियों में जब मैं दोपहर में काम करती रहती तो गिल्लू न बाहर जाता न अपने झूले में बैठता। उसने मेरे निकट रहने के साथ गरमी से बचने का एक सर्वथा नया उपाय खोज निकाला था।

वह मेरे पास रखी सुराही पर लेट जाता और इस प्रकार समीप भी रहता और ठंडक में भी रहता। गिलहरियों के जीवन की अवधि दो वर्ष से अधिक नहीं होती , अतः गिल्लू की जीवन यात्रा का अंत आ ही गया।

दिन भर उसने न कुछ खाया न बाहर गया। रात में अंत की यातना में भी वह अपने झूले से उतरकर मेरे बिस्तर पर आया और ठंडे पंजों से मेरी वही उँगली पकड़कर हाथ से चिपक गया , जिसे उसने अपने बचपन की मरणासन्न स्थिति में पकड़ा था। पंजे इतने ठंडे हो रहे थे कि मैंने जागकर हीटर जलाया और उसे उष्णता देने का प्रयत्न किया।

परंतु प्रभात की प्रथम किरण के स्पर्श के साथ ही वह किसी और जीवन में जागने के लिए सो गया। उसका झूला उतारकर रख दिया गया है और खिड़की की जाली बंद कर दी गई है , परंतु गिलहरियों की नयी पीढ़ी जाली के उस पार चिक-चिक करती ही रहती है और सोनजुही पर बसंत आता ही रहता है।

सोनजुही की लता के नीचे गिल्लू को समाधि दी गई है-इसलिए भी कि उसे वह लता सबसे अधिक प्रिय थी-इसलिए भी कि उस लघुगात का, किसी वासंती दिन, जुही के पीताभ छोटे फूल में खिल जाने का विश्वास, मुझे संतोष देता है।राजनेता की सराहना की।

लोकतंंत्र की सीधी सी परिभाषा यही है कि जहां लोगों की चलती है, लोग अपना प्रतिनिधि चुनते हैं। भारत के लोकतंत्र को दुनिया में सबसे विशाल माना गया है तो यह भी सच है कि अच्छे-अच्छे नेताओं को भारतीय लोकतंत्र ने अर्श से फर्श पर पटका है। जब लोगों ने चाहा तो किसी को भी जमीन से आसमान की बुलंदी पर भी पहुंचाया है।

आम आदमी पार्टी यानी कि आप ने दिल्ली में जिस तरह से इतिहास रचा उसके उदाहरण दुनिया में कहीं नहीं मिलेंगे। यह भी सच है कि ऐतिहासिक सफलता के बाद यह पार्टी अब जिस तरह से अपने अंदरूनी लोकतंत्र को भंग कर रही है वैसी मिसाल भी कहीं और नहीं मिलेगी।

लोगों का एक पार्टी के प्रति अंध विश्वास और उसकी पार्टी के कर्णधारों का अपनी ही पार्टी के लोगों के प्रति अविश्वास क्यों पैदा हुआ कि आज यही आम आदमी पार्टी अंदरूनी जंग की इस कदर शिकार हुई है कि लोग इससे दूरियां बढ़ाने लगे हैं।

मुख्यमंत्री केजरीवाल को इस मामले में संगठन और सरकार के बीच तालमेल बनाना होगा। पार्टी के जल्दी विस्तारके चक्कर में और दिल्ली जैसा इतिहास हर जगह दोहराने की होड़ में संगठन और सरकार के मुखिया अरविंद केजरीवाल गच्चा खा गए। पंजाब और गोवा की छलांग उन्हें महंगी पड़ी।

पंजाब और गोवा के चुनावों में उतरना बुरी बात तो नहीं थी परन्तु जिस तरीके से आम आदमी पार्टी ने लोगों के बीच में खुद को प्रस्तुत किया यह बात लोगों को जंची नहीं और उन्होंने पार्टी को करारा जवाब दिया। हार-जीत हर पार्टी के साथ होती है परन्तु आम आदमी पार्टी ने हर मंच पर , हर जमीन पर उस आदमी से रिश्ता जोड़ा जिसका जमीनी आधार था और फिर ऐसे ही लोगों को नेता बनाया लेकिन उनके पांवों की जमीन जब बड़े नेता छीन लेंगे तो आपकी आपसी जंग को देखकर जनता आपके पैर भी जमीन से उखाड़ देगी।

यह क्यूं हुआ, कैसे हुआ अब इस पर मंथन करने का समय आ गया है। जो झंडा और जो डंडा लेकर कल तक केजरीवाल ने केन्द्र सरकार के खिलाफ या राज्यों में अन्य सरकारों के खिलाफ आंदोलन किए आज इसी पार्टी की लोकप्रिय सरकार के लोकप्रिय मंत्री और कई अन्य नेतागण आंदोलन कर रहे हैं।

कितने ही संस्थापक सदस्य आम आदमी पार्टी को छोड़कर चले गए। भ्रष्टाचार के खिलाफ जंग को लेकर चलाए गए गांधीवादी नेता अन्ना हजारे के आंदोलन से उत्पन्न आम आदमी पार्टी की नीयत और नीतियों में पारदर्शिता दिखाई नहीं देने पर लोगों ने जिस पार्टी को विधानसभा में 70 में से 67 सीटें दी उसे एमसीडी चुनावों में धूल चटा दी तो यकीनन अब केजरीवाल को कुछ करना होगा।

हर समय नकारात्मकता नहीं चल सकती। केजरीवाल को इस मुद्दे पर न सिर्फ खुद चलना होगा बल्कि अपने साथियों के बीच यह स्पष्टं करना होगा कि हम सब ईमानदार हैं और भ्रष्टाचार से दूर हैं

इसी तरह चालू खाते का घाटा कम करने के लिए सोने के आयात को कम करने के उपाय किए गए , लेकिन उनसे भी यही माहौल बना कि अर्थव्यवस्था की हालत खराब है , इसलिए सरकार फिर से उदारीकरण के पहले की नियंत्रित अर्थव्यवस्था के युग में लौटना चाहती है। सबसे ज्यादा बुरा असर डॉलर बचाने के लिए विदेश में निवेश और खर्च पर नियंत्रण का हुआ। इससे संदेश यह गया कि भारतीय अर्थव्यवस्था संकट में है और अर्थव्यवस्था के कर्ताधर्ता घबराहट में तरह-तरह के फैसले कर रहे हैं। इससे निवेशकों का भारत से भागना तेज हो गया, नतीजतन रुपया और शेयर बाजार बुरी तरह गिर गया। बड़ी समस्या यह है कि रुपये की गिरावट को तुरंत रोकने के लिए सरकार के पास बहुत कम उपाय हैं और यह भी शक है कि उनका भी उलटा असर तो नहीं होगा। कुछ जानकार यह भी मानते हैं कि रुपये को गिरने से रोकने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। यह बात वित्त मंत्री पी. चिदंबरम ने भी कही कि रुपये की वास्तविक कीमत क्या है , यह किसी को नहीं मालूम , इसलिए इसे कृत्रिम उपायों से थामने की कोशिश करने की बजाय उसे अपनी वास्तविक कीमत पर आने देना चाहिए। हो सकता है कि यह एकमात्र रास्ता हो , क्योंकि जिन वजहों से रुपया गिर रहा है , उन पर सरकार या रिजर्व बैंक का कोई नियंत्रण नहीं है। फिलहाल रुपये में तेजी से गिरावट इसलिए आई है कि अमेरिका की केंद्रीय बैंक के अध्ययन ने यह संकेत दिया है कि अमेरिका मंदी से काफी हद तक उबर गया है , इसलिए निवेश बढ़ाने के लिए जो उपाय किए जा रहे थे , उनमें कटौती की जा सकती है। इस घोषणा के बाद लोगों ने दुनिया भर में निवेश से हाथ खींचना शुरू कर दिया। जब तक यह कटौती सचमुच नहीं हो जाती ,तब तक डॉलर के मुकाबले रुपया गिर सकता है और जाहिर है कि इसमें भारत सरकार या रिजर्व बैंक कुछ नहीं कर सकता। इन मुद्राओं के मुकाबले रुपया इसलिए भी तेजी से गिर रहा है , क्योंकि भारत में तमाम वजहों से निवेश आकर्षक नहीं लग रहा है। यदि सरकार अर्थव्यवस्था को गतिशील बनाने के लिए कदम उठाए, तो रुपया फिर से मजबूत हो सकता है , पर यह सब होने में वक्त लगेगा। अर्थव्यवस्थाएं ठोस हकीकत से जितनी चलती हैं, उतनी ही माहौल से भी चलती हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था की हालत उतनी खराब नहीं है , जितनी रुपये या बाजार की गिरावट से लग रही है। कई जानकार यह मान रहे हैं कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था उतनी नहीं उबरी है, जितनी लग रही है , किंतु अमेरिकी केंद्रीय बैंक के अध्यक्ष के एक बयान ने माहौल बदल दिया। इसी तरह भारत में रुपये को बचाने के जितने उपाय हो रहे हैं , उनसे यह माहौल बन गया है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की हालत खराब है और इससे ज्यादा गड़बड़ हुई है। सरकार व रिजर्व बैंक आत्मविश्वास दिखाएं तो बाजार का मूड पलट सकता है और रुपया व बाजार पटरी पर लौट सकते हैं। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने लाल किले की प्राचीर से अपना दसवां और अपने इस कार्यकाल का अंतिम भाषण दिया। अगले साल इस वक्त तक लोकसभा के चुनाव हो चुके होंगे और एक नई सरकार अपना कार्यकाल शुरू कर चुकी होगी। लाल किले से प्रधानमंत्री का भाषण धीरे-धीरे एक रस्म अदायगी में तब्दील हो गया है , लेकिन लोकतंत्र में ऐसी रस्मों का अपना महत्व और अपनी गरिमा होती है। स्वतंत्रता दिवस पर प्रधानमंत्री देश के सामने अपना रिपोर्ट कार्ड पढ़ते हैं। प्रधानमंत्री के इस साल के भाषण में अगले साल के चुनावों की छाया देखी जा सकती है।

परमाणु तकनीक का इस्तेमाल ऊर्जा उत्पादन के अलावा कई उद्योगों में और चिकित्सा में भी होता है , जिसमें बेहतर तकनीक हमारे लिए फायदेमंद तो होगी ही , हम दूसरे देशों को निर्यात भी कर सकेंगे। भारत अब भी कुछ देशों को असैनिक परमाणु तकनीक के क्षेत्र में मदद कर रहा है , लेकिन एनएसजी में प्रवेश के बाद हमारी निर्यात क्षमता बढ़ जाएगी। भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के बाद भारत को परमाणु तकनीक मिलना आसान हो गया है , लेकिन अब भी कई तकनीक हैं , जो बिना एनएसजी की सदस्यता के नहीं मिल सकती। एनएसजी की सदस्यता के रास्ते में सबसे बड़ा पेच यह है कि एनएसजी उन देशों का संगठन है , जिन्होंने परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) पर दस्तखत किए हैं। भारत का मानना है , एनपीटी अन्यायपूर्ण है , इसलिए भारत उस पर दस्तखत नहीं कर सकता। यह भी उल्लेखनीय है कि एनएसजी का गठन ही भारत के सन 1998 के पोखरण विस्फोट के बाद हुआ था , ताकि भारत और अन्य देशों को परमाणु कार्यक्रम अपनाने से रोका जा सके। भारत के साथ परमाणु समझौता भी एनएसजी से विशेष छूट हासिल करने के बाद ही हुआ था , पर एनएसजी में प्रवेश के मामले में चीन और कुछ अन्य देश भारत को छूट देने को तैयार नहीं हैं। अब अन्य देशों का रवैया नरम पड़ा है , चीन का रुख भी कुछ नरम होने की बात की जा रही है , लेकिन अभी पूरी तरह कुछ कहना संभव नहीं। भारत का विरोध करने के पीछे चीन की रणनीतिक दिलचस्पी है , पर भारत के साथ अच्छे संबंधों की जरूरत चीन को भी है। चीन नहीं चाहेगा कि भारत हिंद महासागर और एशिया प्रशांत क्षेत्र में अमेरिकी रणनीति का पूरी तरह हिस्सा बन जाए, इसके लिए उसे भी भारत के हक में कुछ फैसले करने पड़ेंगे। पिछले दो दिन भारत-अमेरिका के बीच ज्यादा गहरे रणनीतिक तालमेल के संकेत देते हैं , इससे भी चीन का सतर्क होना स्वाभाविक है। मुद्दा यही है कि चीन अपने रुख को कितना लचीला बनाता है और भारत के मित्र देश चीन पर कितना दबाव बना पाते हैं। भारत ने काफी दूरी तय की है , लेकिन अब भी अंतिम रूप से कुछ कहना मुश्किल है। यह हमारे वक्त की अजीब हकीकत है कि जहां भारत समेत दुनिया के कई हिस्सों में लोग बहुत आम बीमारियों से मर रहे हैं , वहीं दूसरी ओर चिकित्सा विज्ञान ने इतनी तरक्की कर ली है कि सुनकर हैरत होती है। जितनी तेजी से चिकित्सा विज्ञान नए-नए इलाज खोज रहा है , उतनी तेजी से सभी लोगों तक उन्हें पहुंचाने का काम नहीं हो रहा है। मसलन , अमेरिका के एक नौजवान की कहानी पिछले दिनों पत्र-पत्रिकाओं में छपी है , जिसे दिल की गंभीर बीमारी की वजह से अस्पताल पहुंचाया गया। डॉक्टरों ने पाया कि उसका दिल पूरी तरह बेकार हो चुका है। एकमात्र इलाज दिल बदलना या प्रत्यारोपण है। प्रत्यारोपण के लिए दिल मिलना बहुत मुश्किल होता है , सो डॉक्टरों ने एक कृत्रिम दिल लगा दिया। इस कृत्रिम दिल के सहारे वह 555 दिन जीवित रहा , जब तक कि उसके प्रत्यारोपण के लिए दूसरा दिल नहीं मिल गया। खास बात यह है कि इस बीच कृत्रिम दिल के सहारे वह सामान्य जिंदगी जीता रहा , यहां तक कि बास्केट बॉल भी खेलता रहा। उसकीपीठ पर हर वक्त एक बैग रहता , जिसमें कृत्रिम दिल को चलाने के लिए बिजली देने वाला यंत्र था। यह कोई छोटी उपलब्धि नहीं है कि ऐसा कृत्रिम दिल बन गया है , जिसके सहारे कोई इतनी जिंदगी जी ले। हो सकता है कि भविष्य में ऐसा कृत्रिम दिल भी बन जाए, जो किसी का जीवन भर साथ निभा सके।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 38

अक्सर सुनने में यही आता है कि सुनार (ज्वैलर्स) और वकील अपनी मां के भी सगे नहीं होते। इनको अपना पेशा अपने रिश्तों और नैतिक मूल्य से अधिक प्रिय होता है , परन्तु मेरे सामने ऐसी 2 बड़ी मिसाल हैं, एक अरुण जेतली जी और दूसरा भारत मां का वकील हरीश साल्वे जी जो आज सारी दुनिया देख रही है।

कुछ साल पहले हमारे एक फैमिली केस में (जो आज घर-घर की कहानी खास करके है , बड़े घरानों में) अरुण जेतली जी को पेश होना था या अपने साथी वकील को भेजना था तो अश्विनी जी ने उन्हें किसी के द्वारा चैक भेजा, उन्होंने देखा और वापस भेज दिया।

फिर उन्होंने बड़े प्यार से अश्विनी जी को हंसकर बोला मिन्ना (अश्विनी का प्यार का नाम) जो तुमने किया वो तुम्हारा फर्ज था और जो मैंने किया मेरा फर्ज (यानी मैं किरण का भाई तुमसे कैसे फीस ले सकता हूं) मतलब पेशे के सामने उनके लिए रिश्ता ज्यादा मायने रखता है।

हम अन्दर ही अन्दर से उनके प्रति और भावुक और नजदीक हो गए। दूसरा हरीश साल्वे जी का है , जिनके पिता एन.के.पी. साल्वे जो कांग्रेस के बड़े नेता , क्रिकेट बोर्ड के चेयरमैन रहे , वह अश्विनी जी को तब से प्यार करते थे , जब अश्विनी जी रणजी , ईरानी और रेस्ट ऑफ इंडिया की टीम में खेलते थे।

जब हम दिल्ली आए वह अक्सर हमें अपने घर बुलाते , हमारे यहां आते , हमें बच्चों की तरह स्नेह देते थे और जब उनके घर जाते तो इतने खुश होते थे कि उन्हें बिठाने के लिए जगह नहीं मिलती थी, कभी कुछ खिलाने के लिए मंगाते और लास्ट टाइम जब मैं उनसे मिली तो उन्होंने गले में कॉलर पहन रखा था, उन्हें सरवाइकल था।

एनडीए शासन में सॉलिसिटर जनरल बनने के वक्त उनकी उम्र महज 43 साल थी और उन्होंने ट्रेजडी किंग दिलीप कुमार से लेकर अंबानी , महिन्द्रा, टाटा, भोपाल गैस त्रासदी और नीरा राडिया तथा हिट एंड रन केस में बालीवुड स्टार सलमान खान की पैरवी भी की थी। एक पेशेवर तरीका हमेशा सफलता दिलाता है। देश की मिट्टी को समझना और जमीन पर रहना यह अंदाज पैसे वाले लोग नहीं रखते लेकिन हरीश साल्वे बहुत रिजर्व रहते हैं।

बातचीत में वह अक्सर कहते हैं कि वकालत मेरा पेशा है परंतु सच बात यह है कि मैं वकील नहीं इंजीनियर बनना चाहता था। वह बहुत कम बोलते हैं लेकिन अपनी दलील बहुत सुंदर तरीके से बनाते हैं, जिसे पढ़कर जज पर असर पड़ता है। फिर भी हम तो यही कहेंगे कि वह इंजीनियर या वकील से भी बढ़कर एक सच्चे भारतीय और भारत मां के ऐसे बेटे हैं कि जिन पर पूरे देश को नाज होगा।

इसमें कोई शक नहीं कि हमारा पड़ोसी देश पाकिस्तान ढीठता के मामले में बहुत ही निकृष्ठ किस्म का आचरण रखता है और अगर कोई इसके बारे में जाने और समझे तो सचमुच शर्मसारी भी आंसू बहाने लगे।

देश के मौजूदा हालात और खास तौर से दिल्ली के आसपास किसान संगठनों के धरना-प्रदर्शन को देखते हुए यह माना जा रहा था कि संसद का बजट सत्र हंगामे के चलते बर्बाद हो सकता है , लेकिन यह उल्लेखनीय है कि सरकार ने विपक्ष को साधते हुए संसद की कार्यवाही को कामकाज लायक बनाए रखा।

इसके चलते दोनों सदनों में बखूबी कामकाज हुआ। उत्पादकता के लिहाज से बजट सत्र का पहला हिस्सा खासा सफल कहा जा सकता है। थोड़ा-बहुत शोर-शराबा और हंगामा तो संसद में होता ही है। ऐसा ही इस बार भी हुआ, लेकिन वह मुख्यत: लोकसभा तक अधिक सीमित दिखा।

लोकसभा में हंगामा करके विपक्ष ने अपने को बेनकाब ही किया, क्योंकि राष्ट्रपति के जिस अभिभाषण पर राज्यसभा में चर्चा शुरू हो गई थी , उस पर लोकसभा में कई दिनों तक हंगामा होता रहा। पहले राज्यसभा और फिर लोकसभा में विपक्ष की ओर से कृषि कानूनों और किसानों पर बातें तो बहुत की गईं, लेकिन लगता है वह तैयारी से नहीं आया या फिर उसके पास इन कानूनों के खिलाफ कहने के लिए कुछ ठोस नहीं था।

वह कुल मिलाकर वही निराधार आरोप दोहराता रहा , जो किसान नेता उछालने में लगे हुए हैं। जैसे राज्यसभा में विपक्ष कृषि मंत्री के इस सवाल का जवाब नहीं दे पाया कि आखिर कथित काले कानूनों में काला क्या है , वैसे ही वह लोकसभा में प्रधानमंत्री के इस प्रश्न पर अनुत्तरित रहा कि कोई यह बताए कि इन कानूनों में कमी क्या है ? प्रधानमंत्री ने तो यहां तक कहा कि अगर विचार करने लायक कोई कमी होगी तो उस पर गौर किया जाएगा।

इसके बाद भी विपक्षी दल यह नहीं बता सके कि आखिर इन कानूनों में खराबी क्या है और है तो उसे कैसे दूर किया जा सकता है? विपक्ष ने आरोप तो खूब लगाए, लेकिन किसी मसले पर ऐसा कुछ नहीं कहा, जिससे देश का ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता।

कृषि कानूनों पर किसानों को उकसाने में लगी कांग्रेस के नेता राहुल गांधी ने राष्ट्रपति के अभिभाषण पर हुई चर्चा में तो भाग नहीं लिया , लेकिन बजट पर अपने विचार रखते समय कृषि कानूनों पर बोले। इस दौरान भी वह इन कानूनों की कथित खामियों पर प्रकाश नहीं डाल पाए। इसके बजाय उन्होंने हम दो हमारे दो का नारा उछालकर सरकार पर कटाक्ष किया और कृषि कानूनों को लेकर हास्यास्पद आरोप लगाए।

उनकी मानें तो सरकार इन कानूनों के जरिये किसानों को उनकी उपज का मूल्य नहीं देना चाहती , अनाज की जमाखोरी कराना चाहती है और उद्योगपतियों की जेब भरना चाहती है। ये सब वही बेतुकी बातें हैं, जो वह न जाने कब से दोहरा रहे हैं। ऐसी बातें करके राहुल अपनी खोखली सोच को ही उजागर कर रहे हैं।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 40

पांच जुलाई 2005, को भारत सरकार ने संहिता में संशोधन किया और ध्वज को एक पोशाक के रूप में या वर्दी के रूप में प्रयोग किये जाने की अनुमति दी। हालांकि इसका प्रयोग कमर के नीचे वाले कपडे के रूप में या जांघिये के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

राष्ट्रीय ध्वज को तकिये के रूप में या रूमाल के रूप में करने पर निषेध है। झंडे को जानबूझकर उल्टा, रखा नहीं किया जा सकता, किसी में डुबाया नहीं जा सकता, या फूलों की पंखुडियों के अलावा अन्य वस्तु नहीं रखी जा सकती।

किसी प्रकार का सरनामा झंडे पर अंकित नहीं किया जा सकता है। सँभालने की विधि झंडे का सही प्रदर्शन झंडे को संभालने और प्रदर्शित करने के अनेक परंपरागत नियमों का पालन करना चाहिए।

यदि खुले में झंडा फहराया जा रहा है तो हमेशा सूर्योदय पर फहराया जाना चाहिए और सूर्यास्त पर उतार देना चाहिए चाहे मौसम की स्थिति कैसी भी हो। कुछ विशेष परिस्थितियों में ध्वज को रात के समय सरकारी इमारत पर फहराया जा सकता है। झंडे का चित्रण , प्रदर्शन, उल्टा नहीं हो सकता ना ही इसे उल्टा फहराया जा सकता है।

संहिता परंपरा में यह भी बताया गया है कि इसे लंब रूप में लटकाया भी नहीं जा सकता। झंडे को 90 अंश में घुमाया नहीं जा सकता या उल्टा नहीं किया जा सकता। कोई भी व्यक्ति ध्वज को एक किताब के समान ऊपर से नीचे और बाएँ से दाएँ पढ़ सकता है , यदि इसे घुमाया जाए तो परिणाम भी एक ही होना चाहिए। झंडे को बुरी और गंदी स्थिति में प्रदर्शित करना भी अपमान है।

यही नियम ध्वज फहराते समय ध्वज स्तंभों या रस्सियों के लिए है। इन का रखरखाव अच्छा होना चाहिए। दीवार पर प्रदर्शन झंडे को सही रूप में प्रदर्शित करने के लिए कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है। यदि ये किसी भी मंच के पीछे दीवार पर समानान्तर रूप से फैला दिए गए हैं तो उनका फहराव एक दूसरे के पास होने चाहिए और भगवा रंग सबसे ऊपर होना चाहिए।

यदि ध्वज दीवार पर एक छोटे से ध्वज स्तम्भ पर प्रदर्शित है तो उसे एक कोण पर रख कर लटकाना चाहिए। यदि दो राष्ट्रीय झंडे प्रदर्शित किए जा रहे हैं तो उल्टी दिशा में रखना चाहिए , उनके फहराव करीब होना चाहिए और उन्हें पूरी तरह फैलाना चाहिए। झंडे का प्रयोग किसी भी मेज , मंच या भवनों, या किसी घेराव को ढकने के लिए नहीं करना चाहिए। अन्य देशों के साथ जब राष्ट्रीय ध्वज किसी कम्पनी में अन्य देशों के ध्वजों के साथ बाहर खुले में फहराया जा रहा हो तो उसके लिए भी अनेक नियमों का पालन करना होगा।

उसे हमेशा सम्मान दिया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि झंडा सबसे दाईं ओर प्रेक्षकों के लिए बाईं ओर हो। लाटिन वर्णमाला के अनुसार अन्य देशों के झंडे व्यवस्थित होने चाहिए। सभी झंडे लगभग एक ही आकार के होने चाहिए , कोई भी ध्वज भारतीय ध्वज की तुलना में बड़ा नहीं होना चाहिए।

Exercise- 41

भारतीय न्याय व्यवस्था का रवैया आम तौर पर यही है कि जहां तक हो सके, किसी के प्राण लेने से बचा जाए। ऐसा लग सकता है कि अलग-अलग राष्ट्रपतियों का रवैया भी फांसी को लेकर अलग-अलग रहा है, लेकिन वास्तविकता यह है कि राष्ट्रपति का फैसला पूरी तरह गृह मंत्रालय की राय पर निर्भर होता है, इसके बावजूद जो राष्ट्रपति दया याचिका खारिज करने के खिलाफ होते हैं , वे अक्सर गृह मंत्रालय की राय पर फैसला टालने का तरीका अपनाते हैं। सुप्रीम कोर्ट का वीरप्पन के साथियों के मामले में फैसला ऐसा ही मानवीय आधार पर हुआ फैसला है। रेल मंत्री पवन कुमार बंसल के पहले रेल बजट से क्रांतिकारी उम्मीदें नहीं थीं क्योंकि उनके पास कोई लंबी अवधि की योजना बनाने का वक्त नहीं था। उन्हें रेलमंत्री बने कुछ ही महीने हुए हैं और अगले साल चुनाव होने हैं। पिछले लगभग 20 वर्षो से रेलवे सार्वजनिक परिवहन और माल ढुलाई की सबसे महत्वपूर्ण सेवा की बजाय वोट पैदा करने की मशीन बन गई है। इससे आर्थिक उदारीकरण के दौर में रेलवे का जैसा विस्तार होना चाहिए था वैसा नहीं हुआ बल्कि कई मायनों में रेलवे पीछे चली गई। पवन कुमार बंसल के सामने विकल्प इसलिए सीमित थे कि रेलवे की आर्थिक स्थिति बहुत बुरी है और अगले साल चुनाव के मद्देनजर भी उनके हाथ बंधे हुए थे। इस मुश्किल संतुलन को साधने की उनकी कोशिश नाकाम हुई या कामयाब हुई इसके बारे में राय अलग-अलग हो सकती है लेकिन एक बात साफ है कि 2014 के चुनावों के बाद जो भी सरकार बने वह अगर रेलवे की सचमुच बेहतरी के बजाय वोटों की राजनीति में ही उलझती रही तो रेलवे के सचमुच बुरे दिन आ सकते हैं। जो रेलवे हमारी अर्थव्यवस्था का इंजन बन सकती है वह एयर इंडिया की तरह बोझ बन जाएगी। बंसल का यह बजट एक किस्म का तदर्थ बजट है यानी यह रेलवे को अगले चुनावों तक चलते रहने की ऊर्जा देता रहेगा लेकिन भविष्य में रेलवे बजट पर गंभीरता से सोचने की जरूरत है। रेल मंत्री कुछ दिनों पहले ही यात्री किराया बढ़ा चुके थे और यह चुनावी बजट है इसलिए यह तो मुमकिन ही नहीं था कि वे यात्री किराया बढ़ाते। लेकिन अतिरिक्त पैसा जुटाने की जरूरत उन्हें थी इसलिए उन्होंने वह चतुराई अपनाई जिसके इस्तेमाल में लालू प्रसाद यादव माहिर थे। उन्होंने तरह-तरह के अधिभार लगा दिए जिससे कि रेलवे के खजाने में कुछ ज्यादा पैसा जाए। वैसे पिछले बजट में जो भी आकलन किए गए थे , रेलवे का प्रदर्शन उनके मुताबिक नहीं रहा है। इस बात का अंदाजा था भी कि बजट में काफी ज्यादा उदारता से आकलन दिखाए गए हैं लेकिन यह भी मालूम पड़ता है कि रेलवे की कार्यकुशलता घटी है और उसकी सेवाओं का स्तर भी नीचा हुआ है। जाहिर है मौजूदा रेलवे मंत्री को इसका दोषी नहीं माना जा सकता लेकिन यह देखना होगा कि इस गिरावट को थामने की कितनी कोशिश उन्होंने की है। रेलवे पर एक बड़ा बोझ राजनैतिक वजहों से नई रेलगाड़ियां चलाने या नई योजनाओं की घोषणा से पड़ता है। कोई भी रेल मंत्री इससे बच नहीं पाता और बंसल भी इसके शिकार हुए हैं। पवन कुमार बंसल ने 67 नई एक्सप्रेस गाड़ियां और कई पैसेंजर , लोकल ट्रेनें चलाने और कुछ मौजूदा गाड़ियों के रूट बढ़ाने का प्रस्ताव किया है। जरूरी यह है कि पहले मौजूदा ढांचे को बेहतर किया जाए , सेवाओं को सुधारा जाए और तब तक नई ट्रेनें न चलाई जाएं , लेकिन राजनैतिक दबावों से कौन बच पाया है ? बिना ढांचे के सुधार के नई गाड़ियां चलाने से चरमराते ढांचे पर और ज्यादा बोझ पड़ता है और न पुरानी सेवाएं ठीक हो पाती हैं, न ही नई ट्रेनें पूरी तरह फायदेमंद हो पाती हैं।

Exercise- 42

ड्रोन हमलों को लेकर कभी संप्रभुता का मामला उठता है और कभी बेकसूर नागरिकों को निशाना बनाए जाने का। ड्रोन हमले हमेशा से ही इस वजह से विवाद में आते रहे कि उनसे किसको निशाना बनाकर मारा गया। लेकिन इस बार ड्रोन हमले आतंकवादियों को देखकर उनकी तरफ से आंख मूंद लेने के लिए विवाद में आए हैं। इसे लेकर सामने आया नया खुलासा भारत के लिए बहुत बड़ा अर्थ रखता है। हालांकि, अमेरिकी मीडिया इस पर जरा भी ध्यान नहीं दे रहा। द वे ऑफ द नाइफ नाम की किताब में बताया गया है कि पाकिस्तान के कबायली इलाकों में आतंकवादियों के ठिकानों और प्रशिक्षण शिविरों पर ड्रोन हमलों के लिए पाकिस्तान और अमेरिका में बाकायदा एक समझौता हुआ था। अमेरिकी सेना को ड्रोन हमलों की इजाजत देने के लिए पाकिस्तान सरकार ने यह शर्त रखी कि ये हमले उन प्रशिक्षण शिविरों पर नहीं किए जाएंगे , जो पाक अधिकृत कश्मीर में चलाए जा रहे हैं। ये वही शिविर हैं, जहां पाकिस्तान भारतीय कश्मीर में भेजने के लिए आतंकवादी तैयार करता है। यह खुलासा एक साथ कई चीजें बताता है। एक तो यह कि पाकिस्तानी इलाके में हर ड्रोन हमले के बाद पाकिस्तान इस बात पर हंगामा करता है कि यह उसकी संप्रभुता का उल्लंघन है। जाहिर है कि यह हंगामा एक नाटक है। लेकिन यह कोई नई बात नहीं , क्योंकि पूरी दुनिया जानती है कि पाकिस्तान इस कला में महारत हासिल कर चुका है। असली बात यह है कि समझौता बताता है कि पाक अधिकृत कश्मीर में आतंकवादी शिविर अब भी बाकायदा काम कर रहे हैं और इसकी जानकारी पाकिस्तान ने अमेरिका को दे दी है। दुनिया भर से आतंकवाद का खात्मा करने की कसमें खाने वाला अमेरिका उसे जानकर आंखें मूंदने का वायदा कर चुका है। यह वही अमेरिका है , जिसने भारत से आग्रह किया था कि वह उत्तरी सीमा से तनाव कम करे , ताकि पाकिस्तानी सेना अफगान सीमा से सटे इलाके पर ध्यान दे सके। यानी वह तनाव कम करने का दबाव भारत पर तो डाल रहा था , लेकिन उसने हालात का सच जानते हुए भी पाकिस्तान को इस जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया था। वैसे कोई बड़ी बात नहीं कि पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आईएसआई ने तालिबान को प्रशिक्षण देने वाले कुछ शिविर ड्रोन हमलों से बचाने के लिए कबायली इलाकों से हटाकर पाक अधिकृत कश्मीर में स्थानांतरित भी कर दिए हों। यह अमेरिका जानता है कि तालिबान पाकिस्तान का सबसे बड़ा हथियार रहे हैं, भारत के खिलाफ भी , अफगानिस्तान के खिलाफ भी और खुद अमेरिका के खिलाफ भी। यह सब तब है , जब भारत ने अफगानिस्तान में नाटो देशों के बाद अमेरिका को सबसे ज्यादा मदद दी है। अमेरिका चाहे कहे कुछ भी , लेकिन एक बात सच है कि वह अफगानिस्तान में अपनी और सिर्फ अपनी लड़ाई लड़ रहा है। पहले वह अल कायदा के खात्मे की लड़ाई लड़ रहा था और अब वह खुद को इस पचड़े से बाहर निकालने की लड़ाई लड़ रहा है। और अपने असर के चलते उसने इन दोनों ही चरणों में भारत समेत दुनिया के कई देशों का इस्तेमाल किया है। हालांकि , भारत ने अफगानिस्तान से संबंधित जो भी नीति अपनाई या वहां जो कुछ भी किया , वह अपने हितों को ध्यान में रखकर ही किया और इसका उसे फायदा मिला है। लेकिन कश्मीर समस्या में अमेरिका की दिलचस्पी न पहले बहुत ज्यादा थी, और न अब है। कश्मीर की लड़ाई भारत की अपनी लड़ाई है और यह उसे खुद ही लड़नी है।

इनमें भी वैज्ञानिकों ने ऐसी जुड़वां संतानों को चुना , जिनमें से एक आशावादी और एक निराशावादी था। वैज्ञानिकों ने पाया कि भले ही जेनेटिक संरचना लगभग एक जैसी हो , कुछ जीन्स एक कहते हैं, यानी बाहरी प्रभावों से कुछ जीन्स का प्रभावशाली हो जाना और कुछ का निष्क्रिय हो जाना , जैसे विद्युत बल्बों की एक सीरीज में कुछ बल्ब बुझा दिए जाएं और कुछ जलाए जाएं। यह सही है कि हम अपनी जेनेटिक संरचना नहीं बदल सकते, लेकिन वैज्ञानिक मानते हैं कि हम अपने जीन्स को 'स्विच ऑन' और 'स्विच ऑफ' कर सकते हैं, यानी काफी हद तक हमें विरासत में जो जेनेटिक संरचना मिली है , उसे हम चाहें तो नियंत्रित कर सकते हैं। ऐसा बाहरी प्रभावों, सामाजिक-सांस्कृतिक वजहों से हो सकता है और चाहें , तो कोशिश करके हम खुद भी कुछ बदलाव ला सकते हैं। वैज्ञानिकों ने एक और बात मार्के की कही है कि हमारे स्वभाव पर इस बात का बहुत प्रभाव पड़ता है कि मां ने हमारी परवरिश कैसे की या बचपन में मां का प्यार कितना नसीब हुआ। अगर मां आशावादी और तनाव रहित है, तो उसके प्यार और सुरक्षा से दिमाग में ग्लुको कॉर्टिकॉइड रिसेप्टर ज्यादा सक्रिय होते हैं। ये रिसेप्टर तय करते हैं कि कोई व्यक्ति अपने रोजमर्रा के जीवन में कितना तनाव झेल सकता है। आशावादी होना अच्छा है, यह हम सभी मानते हैं और जैसा कि वैज्ञानिक कहते हैं कि हम चाहें, तो अपनी कोशिशों से ऐसा बन सकते हैं। इसके साथ ही वैज्ञानिक हमें यह भी बताते हैं कि आशावादी लोग निराशावादी लोगों के मुकाबले ज्यादा जीते हैं। कई अध्ययनों में इस बात की पुष्टि हुई है। अगर जिंदगी के प्रति अपना नजरिया बदलने की सायास कोशिश की जाए , तो जिंदगी को बेहतर बनाना भी मुमकिन है। चिकित्सक इसके लिए कई मनोवैज्ञानिक तरीके भी बताते हैं। ध्यान करने से भी दिमाग को शांत और प्रसन्न बनाने में मदद मिलती है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि अपने आसपास क्या गलत है, उससे ज्यादा क्या सही है, यह देखने की आदत डालें। शिकायत करने और हर चीज को गलत बताने का अपना मजा है , अपने आप को 'गर्दिश में आसमान का तारा' बताने से भी कहीं न कहीं आपका अहंकार तुष्ट होता है , लेकिन जिंदगी के उजालों को देखना अपने और अपने आसपास के लिए ज्यादा अच्छा है। विज्ञान कहता है कि आप चाहें , तो ऐसा कर सकते हैं। बिहार के सारण जिले में जहरीला मिड डे मील खाने से बच्चों की मौत सिर्फ दुखद नहीं , शर्मनाक है। यह सिर्फ स्थानीय प्रशासन के लिए ही शर्मनाक नहीं है , बल्कि समूचे देश के लिए ग्लानि का विषय है। भारत में तमाम सरकारी कामकाज में लापरवाही आम है और हम इसके आदी हो गए हैं। जो लोग आर्थिक रूप से बेहतर हैं, वे अपने लिए इस तंत्र के बाहर बेहतर सुविधाएं पा लेते हैं , इसलिए इस तंत्र की लापरवाही और संवेदनहीनता की मार सबसे गरीब लोगों पर ही पड़ती है। स्कूलों में मिड डे मील खाने वाले बच्चे आम तौर पर समाज के सबसे कमजोर तबकों से आते हैं, इसलिए वे ही इसे खाने का खतरा उठाते हैं। अगर यह योजना बच्चों का सिर्फ पेट भरने के लिए नहीं , बल्कि उनके लिए अच्छा पोषण सुनिश्चित करने के लिए है , तो इसमें सबसे ज्यादा ध्यान खाने की गुणवत्ता पर दिया जाना चाहिए। लेकिन स्थिति यह है कि इसमें इतना भ्रष्टाचार और लापरवाही है कि कहीं अगर अच्छा और साफ-सुथरा खाना बच्चों को मिल रहा हो , तो यह अपवाद है। जो हुआ है, वह निश्चय ही बड़ी दुर्घटना है, लेकिन खाने के बुरे स्तर के बारे में लगातार खबरें आती रहती हैं।

जैसे ही मैं उन चीखते-पुकारते नगर के लोगों के पास पहुंचा मैंने उनकी आवाजों को सुना और उनके कार्यो को देखा, तो मैं रूक गया और अपने अन्तःकरण से बोला , हां आत्मबोध मनुष्य के जीवन में अति आवश्यक है और यही मानव-जीवन का एकमात्र उद्देश्य है।

क्या स्वयं सभ्यता समस्त दुखपूर्ण बहिरंग में आत्मिक जागृति के लिए एक महान ध्येय नहीं है ? तब हम किस प्रकार एक ऐसे पदार्थ के अस्तित्व से इन्कार कर सकते हैं , जिसका अस्तित्व ही अभीशिप्त योग्यता की समानता का पक्का प्रमाण है ? वर्तमान सभ्यता चाहे नाशकारी प्रयोजन ही रखती हो, कितुं ईश्वरीय विधान ने उस प्रयोजन के लिए एक ऐसी सीढ़ी प्रदान की है , जो स्वतन्त्र अस्तित्व की ओर ले जाती है।

मैंने फिर कभी यूसुफ-अल फाखरी को नहीं देखा , क्योंकि मेरे अपने प्रयत्नों के कारण, जिनके द्वारा मैं सभ्यता की बुराइयों को दूर करना चाहता था ,उसी शरद ऋतु के अन्त में मुझे उत्तरी लेबनान से देश निकाला दे दिया गया और मुझे एक ऐसे दूर देश में प्रवासी का जीवन बिताना पड़ा है , जहां के तूफान बहुत कमजोर हैं और उस देश में एक आश्रमवासी का-सा जीवन बिताना एक अच्छा-खासा पागलपन हैं, क्योंकि यहां का समाज भी बीमार है।

सन 1918 की गर्मियों की एक रात को एक मछुवे ने स्विट्जरलैण्ड के छोटे से विलेन्व्यू कस्बे के पास जिनेवा झील में अपनी नाव पर से पानी की सतह पर कुछ अजीब-सी चीज देखी। जब वह उसके नजदीक पहुंचा तो उसे पता चला कि वह शहतीरों को उल्टा-सीधा बांधकर बनाया हुआ बेड़ा है , जिसे एक नंगा आदमी एक तख्ते की मदद से जैसे-तैसे चलने की कोशिश कर रहा है। वह आदमी जाड़े से अकड़ रहा था और थकान से चूर-चूर हो रहा था।

चकित मछुवे के दिल में दया उपजी। उसने ठिठुरते आदमी को अपनी नाव पर ले लिया। उसके पास जालों को छोड़ और कुछ नहीं था। इसलिए कुछ जालों से ही उसके बदन को ढक दिया और उससे बातचीत करने की चेष्टा करने लगा , लेकिन नाव की तेली में सिकुडे बैठे उस अजनबी ने ऐसी जबान में जवाब दिया कि उसका एक अक्षर भी मछुवा नहीं समझ पाया। हारकर उसने अपनी कोशिश छोड़ दी, जाल समेटा और किनारे की ओर चल दिया।

जब सबेरे के उजाले में दिखाई देने लगा तो वह नंगा आदमी पहले की निस्तब कुछ ज्यादा खुश मालूम हुआ। उसके मुंह पर , जो आधा बेतरतीब उगी घनी मूंछों और दाढ़ी में छिपा था , मुस्कराहट खेलने लगी। वह किनारे की ओर ईशारा करके कुछ जिज्ञासा और कुछ खुशी से बार-बार एक शब्द बोलने लगा जो सुनने में रोशिया जैसा लगता था। नाव ज्यों-ज्यों जमीन के निकट आती गई उसकी आवाज में विश्वास और उल्लास बढ़ने लगा। आखिरकार नावकिनारे पर आकर लग गई। मछुओं की औरतें रात को पकड़ी गई चीजों को उतारने के लिए आई लेकिन चैंक कर चीख उठीं।

मछुवे को झील में जो मिला था , उसकी अजीबो गरीब खबरें फैलते ही गांव के दूसरे लोग वहां जमा हो गये। उनमें उस छोटी सी जगह का महापौर भी था।

Exercise- 45

अल्लाह ने उस नारी को कड़ा दण्ड़ दिया। मानवीय करूणा से ओतप्रोत मानव का ह्रदय बहुत करुण होता है। एक व्यक्ति का ह्रदय बहुत कठोर था। वह हजरत मुहम्मद के पास आया। बोला , मेरा दिल बहुत सख्त है। मैं क्या करुं ? मुहम्मद साहब का उत्तर था , अनाथों के सिर पर हाथ फेरो और भूखों को भोजन खिलाओ। नरम हो जायेगा। मानवीय सम्वेदना की कोई सीमा नहीं होती।

मुहम्मद साहब स्वंय ही मानवीय करूणा से ओत-प्रोत नहीं रहते थे, बल्कि जो उनके निकट थे, उनके अन्तर में भी वह प्रफुटित हो, यह भी वह देखते थे। एक बार एक फकीर उनके पास आया , बोला, मैं बहुत दुखी हूं। कई दिन से कुछ नहीं खाया। मुहम्ममद साहब ने तुरन्त सन्देश भेजा कि एक फकीर भूखा आया है। उसके लिए कुछ खाने को हो तो भेजो। तब कहीं से जबाब आया , हमारे घरो में पानी के सिवाय कुछ नहीं है।

मुहम्मद साहब के पास तब कई व्यक्ति बैठे थे। उन्होने उनसे पूछा , क्या कोई इसे अपना मेहमान बना सकता है ? उनमें से एक व्यक्ति खड़ा हुआ। उसका नाम था अबूतुल्ला। उसने कहा , मैं बना सकता हूं। वह फकीर को अपने घर ले गया। अन्दर जाकर उसने अपनी पत्नी से पूछा, एक फकीर मेरे साथ है।

क्या उसके लिए खाने को कुछ है? पत्नी ने उत्तर दिया, केवल बच्चों का पेट भर सके इतना खाना घर में है। अबूतुल्ला ने कहा , बच्चों को किसी तरह बहला-फुसलाकर भूखा ही सुला दो। मेहमानके आने पर ऐसा जाहिर करना , जैसे हम भी साथ खायेंगे। जब वह खाने के लिए हाथ बढाये तो तुम ठीक करने के बहाने चिराग के पास जाना और उसे गुल कर देना। पत्नी ने ऐसा ही किया। उसमें जो कुछ भी है, वह सभी मिथ्या है।

आविष्कार तथा खोज तो मनुष्य अपने उस समय के मनोरंजन और आराम के लिए करता है , जब वह पूर्णतया थककर हार गया हो। देशीय दूरी को जीतना और समुद्रों पर विजय पाना ऐसा नश्वर फल है जो न तो आत्मा को संतुष्ट कर सकता है , न ह्रदय का पोषण तथा उसका विकास ही क्योंकि वह विजय नितान्त ही अप्राकृतिक है।

जिन रचनाओं और सिद्धांतो को मनुष्य कला और ज्ञान कहकर पुकारता है , वे बंधन की उन कड़ियों और सुनहरी जंजीरो के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है , जिन्हें मनुष्य अपने साथ घसीटता चलता है और जिनके चमचमाते प्रतिबिम्बों तथा झनझनाहट से वह प्रसन्न होता रहता है।

वास्तव में वे मजबूत पिंजरे मनुष्य ने शताब्दियों पहले बनाना आरंभ किया था कितुं तब वह यह नहीं जानता था कि उन्हें वह अन्दर की तरफ से बना रहा और शीघ्र ही वह स्वयं बंदी बन जायेगा हमेशा-हमेशा के लिए। हां-हां, मनुष्य के कर्म निष्फल हैं और उसके उद्देश्य निरर्थक हैं और इस पृथ्वी पर सभी कुछ निस्सार है।

SONI TYPING TUTOR

आजकल चित्रकला में भी बड़ा पैसा है और पेंटिंग या कलात्मक वस्तुओं में निवेश करना बड़ा फायदेमंद धंधा है। इन सबके बावजूद यह आकलन नहीं किया गया है कि एक आर्थिक गतिविधि की तरह कला की स्थिति क्या है और यह तो रहस्य ही है कि कलाकृतियों की कीमत के मानदंड क्या हैं? पर अब कला के अर्थशास्त्र पर गंभीर शोध शुरू हो गए हैं। खासकर आर्थिक मंदी के दौर में कला की आर्थिक ताकत महत्वपूर्ण हो गई है। अमेरिकी शोधकर्ताओं का आकलन है कि उनके देश में कला में लगभग 70,000 करोड़ रुपये सालाना का लेन-देन होता है और तकरीबन 41 लाख लोगों को कला व इससे संबंधित गतिविधियों से रोजगार मिलता है। उनका कहना है कि कला का महत्व सिर्फ यह नहीं है कि उससे मनोरंजन होता है , वह समाज में नई पहल और रचनात्मकता की भी बुनियाद होती है। यहां कला का अर्थ सिर्फ रूढ़ अर्थों में कला नहीं है , ऐसे तमाम काम हैं, जो रचनात्मक हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि जो शहर या इलाके किसी एक उद्योग या पेशे से जुड़े होते हैं, मंदी में उनके नष्ट होने की आशंका भी ज्यादा होती है। अगर उस एक उद्योग या पेशे में मंदी आई , तो समूचे शहर या इलाके की स्थिति खराब हो जाती है। अमेरिका में डेट्राइट शहर अपने कार उद्योग के लिए जाना जाता था, कार उद्योग में मंदी की वजह से डेट्राइट के बदहाल होने की आशंका है। कला के अर्थशास्त्र में काम करने वाले लोगों का कहना है कि अगर समाज में कलात्मकता और रचनात्मकता की जगह बनाई जाए , तो उससे हर इलाके या समाज में वैविध्य व नएपन का संचार हो सकता है और इकहरी अर्थव्यवस्था की वजह से उसके बदहाल होने की आशंका घट जाती है। कलात्मक और बहुआयामी समाज के पनपने की संभावना ज्यादा होती है। किसी भी समाज में कला की ठीक-ठीक आर्थिक उपयोगिता तय करना मुश्किल है , क्योंकि उसके कई सारे परिणामों को आंकड़ों में नहीं व्यक्त किया जा सकता। फिल्म या ऐसे ही व्यावसायिक माध्यमों का अर्थशास्त्र काफी जटिल और अमूर्त होता है। हिंदी में ही सैकड़ों फिल्में बनती हैं , जिनमें से ज्यादातर डूब जाती हैं, लेकिन इस उद्योग में पैसा लगाने वाले आते रहते हैं। कई सितारे फ्लॉप पर फ्लॉप के बाद भी तरक्की करते हैं, तो कई सफलता के बावजूद गायब हो जाते हैं। जो कलाएं इस तरह से व्यावसायिक नहीं हैं , उनका गणित ज्यादा कठिन है। क्यों किसी कलाकार की कृति करोड़ों में बिकती है और क्यों किसी की कृति हजारों में भी नहीं बिक पाती? किसी कला का किसी जमाने में जलवा होता है , और बीस साल बाद उसे कोई नीं पूछता। दरअसल, कला का रिश्ता इंसानी भावनाओं से होता है , इसलिए उसके अर्थशास्त्र को तर्क की भाषा में पकड़ना मुश्किल है। लेकिन अब यह समझ में आ रहा है कि समाज में अर्थव्यवस्था को चलाए रखने और आगे बढ़ाने में कला की बड़ी भागीदारी होती है। आखिर सिनेमा से ही कितने रोजगार जुड़े हैं और इन पर आर्थिक मंदी का वैसा असर नहीं हुआ , जैसा कई उद्यमों में हुआ है। यह संयोग ही है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और अंतरराष्ट्रीय रेटिंग एजेंसी मूडीज , दोनों ने लगभग एक साथ यह उम्मीद जताई है कि भारत की सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की विकास दर अगले साल से छह-सात प्रतिशत तक हो जाएगी। मूडीज का यह कहना है कि भारतीय अर्थव्यवस्था जितनी नीचे पहुंच सकती थी , उतनी पहुंच गई है और वर्ष 2013 में विकास दर लगभग 6.2 प्रतिशत के आसपास रहेगी, जो 2014 में सात प्रतिशत तक पहुंच जाएगी।

Exercise- 47

क्या एक आदिवासी पुलिस अफसर की मौत राज्य के राजनीतिक-प्रशासनिक नेतृत्व को झकझोर पाएगी ? एक जमाना था, जब माना जाता था कि कसरत करने वालों का दिमाग ठस हो जाता है। कसी हुई टीशर्ट में अपनी मांसपेशियां दिखाते घूमने वाले कई नौजवानों को देखकर अब भी यह बात कुछ हद तक सही लगती है, लेकिन अब सब मानते हैं कि कसरत करना शरीर ही नहीं , दिमाग के लिए भी अच्छा होता है। इस पर शोध करने वाले वैज्ञानिक यह तो जानते थे कि कसरत करने से घबराहट और उत्तेजना की प्रवृत्ति कम होती है और मानसिक शांति और स्थिरता आती है , लेकिन उन्हें इस बात का जवाब नहीं मिल रहा था कि यह होता कैसे है? यह सवाल इसलिए खड़ा होता है , क्योंकि कसरत करने से दिमाग में कई कोशिकाएं तेजी से बनती हैं। दिमाग की कोशिकाओं को न्यूरॉन कहा जाता है और नए न्यूरॉन बनने का अर्थ यह है कि दिमाग में ज्यादा उत्साह और तेजी आ रही है। न्यूरॉन विद्युत चुंबकीय संकेतों के जरिये अपना काम करते हैं। जब ऐसी कोई गतिविधि हो, जिसमें तेजी और स्फूर्ति की जरूरत हो , तो न्यूरॉन जल्दी-जल्दी संकेत देते हैं। नए न्यूरॉनों का स्वभाव भी थोड़ा जोशीला होता है और वे जरा-सी उत्तेजना में ढेर सारे संकेत देने लगते हैं, जिससे दिमाग और शरीर को चौकन्ना होने का संकेत मिलता है। वैज्ञानिकों का सवाल यह था कि अगर कसरत से नए न्यूरॉन बनते हैं, तब तो इससे दिमाग को ज्यादा सतर्क और उत्तेजित हो जाना चाहिए , फिर कसरत से दिमाग में शांति कैसे आती है? दरअसल, दिमाग का सतर्क और उत्तेजित हो जाना तब तो ठीक है, जब कोई संकट हो या ऐसा कोई काम हो, जिसमें अतिरिक्त सतर्कता या ऊर्जा की जरूरत है, लेकिन अगर न्यूरॉन को तेज-तेज संकेत देने की आदत हो जाए, तो सामान्य वक्त में भी दिमाग में उत्तेजना और घबराहट पैदा हो जाती है। यह सेहत के लिए बुरा है, क्योंकि इससे शरीर भी लगातार तनाव में रहता है। यह देखा गया है कि कसरत करने से यह प्रवृत्ति घट जाती है, लेकिन यह कैसे होता है, इसे जानने के लिए वैज्ञानिकों ने एक प्रयोग किया। उन्होंने चूहों के दो समूह बनाए, एक समूह को आराम की जिंदगी बसर करने दी और दूसरे समूह को एक मशीन पर दौड़ने की कसरत करवाई। उन्होंने उनके दिमाग में नए न्यूरॉन के व्यवहार की जांच की। देखा यह गया कि दौड़ने वाले चूहों के दिमाग में नए न्यूरॉन अपेक्षाकृत ज्यादा तादाद में बने , जो कि स्वाभाविक था। स्वाभाविक यह भी था कि ये न्यूरॉन जल्दी-जल्दी विद्युत चुंबकीय संकेत दे रहे थे, लेकिन उन्होंने पाया कि दौड़ने वाले चूहों के दिमाग में कुछ नए न्यूरॉन बने थे, जो 'गाबा' नामक रसायन बना रहे थे। यह रसायन दिमाग को शांत रहने के संकेत देता है। इससे वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ये नए न्यूरॉन दूसरे उत्तेजित होने वाले न्यूरॉन को शांत कर रहे थे। और इसका असर उन चूहों के व्यवहार में भी दिखाई दिया। उत्तेजना दरअसल जीवों की सुरक्षा प्रणाली का अंग है। यह खतरे की घंटी बजाती है और पूरे शरीर को सतर्क हो जाने को कहती है। अगर खतरे की घंटी ही न बजे, तो जीव अपनी सुरक्षा के लिए सावधान न हों। लेकिन हमेशा खतरे की घंटी अगर बजती रही, तो यह 'भेड़िया आया-भेड़िया आया' वाली कहानी जैसा हो जाएगा। सामान्य अवस्था में शरीर और मन का शांत और तनावरहित होना स्वास्थ्य के लिहाज से बेहतर होता है। कसरत करने से बनने वाले 'गाबा' न्यूरॉन शोर करने वाले न्यूरॉन को वैसे ही शांत करते हैं,

जैविक विकास क्रम में उसका होना जरूरी है , यानी वह हमारी जेनेटिक संरचना का हिस्सा है। इसीलिए प्रकृति उन लोगों की जैविक संरचना को ज्यादा स्वस्थ और टिकाऊ बनाती है , जिनका सुख सिर्फ अपने तक सीमित नहीं है। विज्ञान यही बताता है कि किसी तात्कालिक लाभ को छोड़कर किसी बड़े उद्देश्य या अच्छे इरादे से काम करने वाले लोग प्रकृति को ज्यादा प्रिय हैं। अंतरराष्ट्रीय निवेश बैंक गोल्डमैन सैश ने भारतीय बाजार में निवेश को 'कमजोर' की श्रेणी में दर्ज किया है। गोल्डमैन सैश का कहना है कि चालू वित्तीय वर्ष की दूसरी तिमाही के आंकड़ों से यही लगता है कि निवेश में बढ़ोतरी के आसार नहीं हैं। उसका यह भी कयास है कि आने वाले दिनों में विकास दर धीमी रहेगी और रुपये को गिरने से बचाने के लिए रिजर्व बैंक बाजार में नकदी पर नियंत्रण की कोशिश करेगा। ऐसे में , भारतीय शेयर बाजार में निवेश बहुत आकर्षक नहीं है। गोल्डमैन सैश का अनुमान है कि रुपया इस वर्ष 60 रुपये प्रति डॉलर के आसपास ही रहेगा , लेकिन 2016 तक यह कीमत 65 रुपये तक जा सकती है। 2016 तक भारतीय और विश्व अर्थव्यवस्था का क्या होगा , यह अंदाजा लगाना कुछ जोखिम भरा है , लेकिन गोल्डमैन सैश के आकलन का प्रभाव भारत में निवेश के माहौल पर जरूर होगा। भारत सरकार जिस आतुरता से भारतीय बाजार में निवेश चाह रही है , उसे इससे कुछ झटका लगेगा। गोल्डमैन सैश का अनुमान कुछ तथ्यों पर आधारित है , पहला यह है कि 2014 में लोकसभा चुनाव होने हैं और ऐसे में सरकार आर्थिक मोर्चे पर गंभीरता से सक्रिय नहीं रह सकती। दूसरी और सबसे बड़ी समस्या चालू खाते का घाटा है , जो सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी के 4.8 प्रतिशत तक पहुंच गया है। अर्थव्यवस्था की दशा-दिशा भविष्य में नई सरकार पर निर्भर करेगी। इस बीच या इसके बाद भी चालू खाते का घाटा कम करने के लिए सरकार बहुत कुछ नहीं कर सकती। क्योंकि हमारा ज्यादातर आयात का खर्च खनिज तेल के मद में होता है , जिसे कम करना तकरीबन नामुमकिन है। अगर किसी वजह से अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल के दाम कम हुए , तो शायद इस मोर्चे पर राहत मिले। रुपये को सहारा देने के लिहाज से रिजर्व बैंक के पास भी बहुत विकल्प नहीं है। उसने नकदी घटाने की कवायद की है और एक तरह से ब्याज दरें भी बढ़ा दी हैं। ज्यादा ब्याज दरें बढ़ाने से जो विकास दर में थोड़ा-बहुत सुधार हो रहा है , वह भी रुक जाएगा , इससे निवेश की उम्मीद और कम हो जाएगी। इससे भी रुपये पर दबाव बढ़ जाएगा। अब रुपये की स्थिति में सुधार की उम्मीद यही है कि गिरते हुए रुपये की वजह से निर्यात आधारित उद्योगों को कुछ फायदा हो , जैसा गोल्डमैन सैश का भी कहना है। अगर रुपया 65 रुपये प्रति डॉलर तक गिरता है , तो फिलहाल उसे बचाने का कोई खास उपाय मुमकिन नहीं है , क्योंकि जिन वजहों से ऐसा हुआ है , वे हालात एक दिन में पैदा नहीं हुए हैं। सरकार ने अपने पूरे कार्यकाल में विकास को बनाए रखने में जो दिक्कतें थीं , उन्हें हटाने का काम नहीं किया है। यह सही है कि रुपये का ताजा संकट अमेरिकी अर्थव्यवस्था के सुधरने और अमेरिका में नकदी पर नियंत्रण के संकेतों से है , लेकिन हमने अपनी अर्थव्यवस्था को भी निवेशकों के लिए आकर्षक बनाए रखने की कोशिश नहीं की। यह भी जरूरी था कि जब रुपया 45 रुपये प्रति डॉलर के स्तर पर था , तब रिजर्व बैंक ने डॉलर का भंडार ज्यादा बड़ा करने की कोशिश नहीं की , इसके उलट डॉलर की फिजूलखर्ची होने दी।

मुंबई के वर्ली इलाके में स्थित आलीशान कैंपा कोला कंपाउंड में जो आवासीय इमारतें हैं , उनमें बड़े पैमाने पर अवध निर्माण हुआ है, यह साबित हो चुका है। यह निर्माण कुख्यात माफिया सरगना यूसुफ पटेल ने करवाया था। उस स्थान पर पांच मंजिला पांच इमारतें बनाने के लिए मंजूरी मिली थी , जबकि दस-दस मंजिलें बनाई गईं और दो तो पूरी तरह से अवध इमारतें बना दी गईं , यानी जितना वध निर्माण था , उससे ज्यादा अवध निर्माण हुआ। कैंपा कोला कंपाउंड का यह निर्माण 1980 से 1989 के दरमियान हुआ था और बनाए गए फ्लैट बाजार भाव से काफी कम कीमत पर बेचे गए थे। फ्लैट खरीदने वालों का दावा है कि उन्हें नहीं बताया गया था कि ये फ्लैट अवध रूप से बनाए गए हैं , हालांकि इन इमारतों के आर्किटेक्ट का कहना है कि काफी सारे खरीदार यह सच जानते थे और उन्हें आश्वासन दिया गया था कि बाद में ये फ्लैट नियमित कर दिए जाएंगे। आर्किटेक्ट की बात इसलिए सही लगती है, क्योंकि ज्यादातर खरीदार पढ़े-लिखे लोग हैं और उन्हें इस बात पर शक होना चाहिए था कि आखिर इतने सस्ते में उन्हें ये फ्लैट क्यों मिल रहे हैं ? चूंकि ये फ्लैट अवध थे , इसलिए बृहनमुंबई नगर निगम ने इन्हें कब्जा प्रमाण पत्र और पानी का कनेक्शन नहीं दिया था , इससे भी उन्हें शक होना चाहिए था। लगभग पचीस साल तक यह सब ऐसे ही चलता रहा , जबकि कुछ फ्लैट मालिक पानी के कनेक्शन न मिलने को लेकर अदालत में चले गए। वहां नगर निगम ने बताया कि ये फ्लैट गैरकानूनी हैं और फिर यह मामला सुप्रीम कोर्ट तक चला गया। इसका निष्कर्ष यह है कि बिल्डर , कई सारे फ्लैट मालिक और नगर निगम सभी जानते थे कि फ्लैट अवध हैं , पच्चीस साल बाद अदालत के आदेश से नगर निगम उन्हें तुड़वाने आ गया और अब शीर्ष अदालत के आदेश से फ्लैट मालिकों को राहत मिली है। यह कहानी मुंबई के कैंपा कोला कंपाउंड की है , लेकिन ऐसी लाखों कहानियां देश के छोटे-बड़े तमाम शहरों में मौजूद हैं। अकेले मुंबई में लगभग 55,000 इमारतें ऐसी हैं, जिनके अवध होने की वजह से उनके निवासियों को कब्जा प्रमाण पत्र नहीं मिले हैं। दिल्ली में लगभग 25 प्रतिशत निर्माण अवध हैं। भारत का शहरी निर्माण क्षेत्र इसी तरह की अनियमितताओं पर चल रहा है, इसकी वजह से शहरों का सही ढंग से विकास नहीं हो रहा है और करोड़ों लोगों को कायदे के मकान नहीं मिल पा रहे हैं। तमाम नगर निगम और विकास प्राधिकरण समस्या को सुलझने की बजाय उन्हें ज्यादा उलझने के लिए जिम्मेदार हैं। बिल्डर-नेता-अपराधी गठजोड़ का स्वार्थ अवध कारोबार में है , इसलिए यह गोरखधंधा और तेजी से फैलता जा रहा है। आम आदमी , जो अपने लिए एक घर चाहता है , वह इस गठजोड़ के रहमोकरम पर निर्भर है और अक्सर उसे ये लोग चूना लगाकर अपनी जेबें भर लेते हैं। जब तक शहरों में आम नागरिकों की जरूरतों के मुताबिक नियम नहीं बनाए जाते , तब तक न हमारे शहरों का विकास ठीक से होगा , न मकानों की कमी दूर हो सकेगी, और न ही आम आदमी के ठगे जाने का यह सिलसिला ही खत्म हो पाएगा। नाम न देखें तो क्या देखें। इस फैसले का असर दूरगामी हो सकता है। सुप्रीम कोर्ट का कहना है कि किसी भी संज्ञेय अपराध की शिकायत पर प्रथम सूचना रिपोर्ट यानी एफआईआर दर्ज करना पुलिस के लिए अनिवार्य होगा। जो पुलिस अधिकारी एफआईआर दर्ज करने से मना करेगा, उसे सजा दी जाएगी। पहले भी प्रक्रिया में यही था,

Exercise- 50

फिर महंगाई से आम जनता त्रस्त है। खुदरा बाजार में रोजमर्रा इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं के दाम काफी बढ़ गए हैं। जिस मौसम में साग-सब्जियों का उत्पादन होता है उस समय इनकी कीमतें कम होती हैं लेकिन इस बार ऐसा नहीं हो रहा। लगभग पिछले दो माह से प्याज और टमाटर की कीमतें काफी ऊंची बनी हुई हैं।

बाजार में दोनों वस्तुएं 50 से 60 रुपए किलो बिक रही हैं। यद्यपि सरकार महंगाई काबू में होने का आंकड़ा पेश करती है और इसे अपनी उपलब्धियों में शामिल करती है लेकिन व्यावहारिक धरातल पर महंगाई नियंत्रण से बाहर लगती है। इस मौसम में टमाटर के दाम तो बढ़ जाते हैं लेकिन प्याज क्यों महंगा है? प्याज को लेकर बाजार में आग क्यों लगी हुई है, यह समझ से बाहर है।

प्याज और टमाटर जैसी वस्तुओं की कीमतों में संतुलन बिगड़ने की वजह भंडारण की पर्याप्त सुविधा न होना भी है और किसानों से खरीद नीति में भी व्यावहारिकता का अभाव है।

सर्दियों में अंडे के दामों का बढ़ना आम माना जाता है लेकिन इस बार इसके दाम आसमान को छू रहे हैं। अंडा 7 रुपए में बिक रहा है जो कि करीब-करीब चिकन की कीमत के बराबर माना जा रहा है। पुणे की अंडा मंडी में फिलहाल 100 अंडे 585 रुपए में बिक रहे हैं, जिनकी प्रति अंडा कीमत देखी जाए तो बाजार में 6.50 से 7.50 रुपए पहुंच गई है। इस हिसाब से अंडा 120 से 135 रुपए प्रति किलो पहुंच गया है जबकि चिकन की कीमत 130 से 150 रुपए है। इस बार अंडे के दामों में जिस तरह से इजाफा हो रहा है वह पहली बार देखा गया है।

सब्जियों की कीमतें काफी बढ़ी हुई हैं, इसलिए लोग इनके मुकाबले अंडे खाना ज्यादा पसन्द करते हैं। देश में अंडा जल्दी और भारी मात्रा में सप्लाई होता है। लोगों के पास आसानी से पहुंच जाने की वजह से भी यह लोगों की पहली पसन्द बना हुआ है। देश में अंडों की दर नियंत्रण के लिए एनईसीसी की स्थापना की गई है। एनईसीसी की ओर से विगत दो सप्ताह में प्रति अंडे की कीमत में 40 पैसे की बढ़ौतरी की गई। देश में 17 स्थानों पर एनईसीसी की शाखाएं हैं।

गत माह थोक महंगाई 3.59 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गई , जबकि सितम्बर में यह 2.6 प्रतिशत थी। एक माह में महंगाई के सूचकांक में लगभग एक फीसदी वृद्धि हुई। केन्द्रीय वाणिज्य मंत्रालय ने मंगलवार को इस सम्बन्ध में आंकड़े जारी किए। आंकड़ों के अनुसार डब्ल्यूपीआई में खाद्य समूह का सूचकांक 2.23 प्रतिशत बढ़ा है।

फल एवं सब्जी के दाम लगभग 10 प्रतिशत बढ़े हैं। चाय, अंडा, चिकन सहित रोजमर्रा की वस्तुएं भी 2 से 5 प्रतिशत महंगी हुई हैं। अखाद्य वस्तुओं की कीमत में भी लगभग 9 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। फल, सब्जी, चाय एवं खाद्य तेल की कीमतों में वृद्धि को इसके लिए जिम्मेदार माना जा रहा है। फुटकर महंगाई की दर भी पिछले 7 महीने के स्तर पर पहुंच गई है। महंगाई का असर खान-पान के साथ ही अन्य क्षेत्रों पर भी पड़ा है। महंगाई ने सस्ते ऋण की उम्मीदों पर भी पानी फेर दिया है।

Exercise- 51

अफगानिस्तान से अमेरिका के चले जाने के बाद अमेरिकी दबाव घट जाएगा और मुमकिन है कि अलगाववादियों को सीमा पार से ज्यादा मदद मिलने लगे। जरूरी यह है कि इसके पहले कश्मीर के हालात को सामान्य बनाने की पहल की जाए। कश्मीर तक रेल लाइन बिछाने का प्रस्ताव सबसे पहले उन्नीसवीं शताब्दी में आया था। तब इसकी राह में कई राजनीतिक अड़चनें थीं , साथ ही तकनीक भी इतनी विकसित नहीं थी कि इस योजना पर अमल हो सके। कश्मीर रेलवे को व्यावहारिक रूप सबसे पहले 1983 में दिया गया, जब भारत सरकार ने इसकी योजना मंजूर की। यह आसान काम नहीं था, लेकिन 30 वर्षों बाद भी इसका पूरा न हो पाना राजनीतिक अनिश्चिय और प्रशासनिक ढील को भी दिखाता है। यही अनिश्चय और ढील कश्मीर समस्या को सुलझाने में भी दिखती है। 2017 में कश्मीर रेलवे परियोजना को पूरा करने का लक्ष्य है। हम उम्मीद करें कि यह योजना इस लक्ष्य को पा लेगी और तब कश्मीर में स्थायी शांति स्थापित हो चुकी होगी। इटली के पूर्व प्रधानमंत्री सिल्वियो बर्लुस्कोनी शायद एक दिन भी जेल में न बिताएं , लेकिन एक अवयस्क लड़की के साथ यौन संबंध बनाने और जांच को प्रभावित करने के आरोप में उन्हें जो सजा मिली है , उससे उनके राजनीतिक भविष्य के आगे संकट खड़ा हो गया है। इससे भी ज्यादा बड़ी समस्या यह है कि इटली के राजनीतिक-आर्थिक तंत्र पर संकट आ गया है , क्योंकि इटली की राजनीति राजनीतिक संगठनों पर नहीं, व्यक्तियों पर आधारित है। यह अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है कि एक पूर्व प्रधानमंत्री को ऐसी सजा दी गई, लेकिन इटली में राजनेताओं को सजा मिलने का इतिहास है। लगभग दो दशक पहले तमाम राजनीतिक पार्टियों के बड़े-बड़े नेताओं को भ्रष्टाचार के लिए सजा मिली थी। साफ-सफाई की वह कोशिश इतनी जबर्दस्त थी कि तमाम राजनीतिक पार्टियां ध्वस्त हो गईं। बर्लुस्कोनी ने इसके बाद ही सत्ता संभाली, लेकिन बजाय राजनीतिक तंत्र को सुधारने के वह तमाम किस्म के विवादों में घिरते रहे। उनके सार्वजनिक जीवन में ऐसा शायद ही कोई दौर होगा , जब उन पर कोई मुकदमा न चला हो। ताजा फैसले के खिलाफ वह अपील करेंगे और ऊपरी अदालतों में अभी यह मामला वर्षो तक खिंच सकता है। मुश्किल यही है कि अब बर्लुस्कोनी 76 साल के हो गए हैं और भले ही राजनीति में उनका महत्व बना रहे, लेकिन फिर से सत्ता हासिल करना उनके लिए मुश्किल हो गया है। बर्लुस्कोनी ने सत्ता जब संभाली थी , तब भ्रष्टाचार के आरोपों से सभी पार्टियों के तहस-नहस होने से एक शून्य पैदा हो गया था। वह उठापटक और जोड़-तोड़ की राजनीति करते रहे और 20 साल बाद भी इटली में कोई सुसंगठित राजनीतिक पार्टी नहीं है। बर्लुस्कोनी नामी उद्योगपति हैं और उनके अपने कई टीवी चैनल हैं , अक्सर लोग इस बात के औचित्य पर चर्चा करते रहे हैं कि मीडिया के अधिकतर हिस्से पर किसी प्रधानमंत्री की मिल्कियत लोकतंत्र के नजरिये से कितनी जायज है ? कहने को वह आर्थिक रूप से अनुदार विचारधारा के हैं , पर इटली की अर्थव्यवस्था को उन्होंने कुप्रबंध व फिजूलखर्ची के चलते संकट में डाल दिया। यूरो क्षेत्र का जो मौजूदा आर्थिक संकट है , वह बड़ी हद तक इटली की वजह से है। दिक्कत यह है कि इस राजनीतिक आर्थिक संकट से इटली को निकालने के लिए कोई नेता या पार्टी नहीं है। बर्लुस्कोनी ने एक राजनीतिक शून्य का फायदा उठाकर सत्ता हासिल की थी और आज भी वह शून्य मौजूद है। दो दशक पहले भ्रष्टाचार के बावजूद इटली कीअर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ रही थी

SONITYPINGTUTOR

कभी कभी बाल सुधार गृह बच्चों को सुधारने की बजाय उन्हें शातिर अपराधियों की संगत में पक्के अपराधी बना डालते हैं। इसलिए कोई छोटा-मोटा अपराध किए बच्चों और गंभीर अपराध करने वाले बच्चों में फर्क करना जरूरी है वैसे ही एकाध अपराध किए बच्चों और आपराधिक रिकॉर्ड वाले बच्चों में फर्क करना भी जरूरी है। किसी अपराधी की उम्र तय करने के मानकों पर भी विचार किया जाना चाहिए। स्कूल प्रमाणपत्र को निस्संदेह प्रमाण मानना इसलिए ठीक नहीं है क्योंकि हमारे देश में जन्म प्रमाणपत्र लेने का चलन अब बढ़ा है , आम तौर पर स्कूल में भर्ती के वक्त जो उम्र बता दी जाती है , वही सच मान ली जाती है और भारत में उम्र कम दर्ज करने का चलन बहुत आम है। अगर बच्चे अपराधी बनते हैं , तो इसकी जिम्मेदारी समाज की भी है। यह भी समाज और सरकार की जिम्मेदारी है कि एकाध अपराध किए बच्चे शातिर अपराधी न बनें बल्कि अच्छे नागरिक बनें। निर्भया और शक्ति मिल मामले में जो प्रतिक्रियाएं आई हैं उनमें से बहुत सी गुस्से और बदले की भावना से भी आई हैं लेकिन यह भी सच है कि गंभीर अपराध करने वाले बच्चों के मामले में पुनर्विचार की जरूरत है , क्योंकि मौजूदा कानून से कई समस्याएं भी पैदा हो रही हैं। सुप्रीम कोर्ट ने संसद से कहा है कि वह घरेलू हिंसा अधिनियम में ऐसी तब्दीलियां करे, जिनसे 'लिव इन' रिश्तों में बंधी महिलाओं और उनके बच्चों को भी उसके तहत सुरक्षा मिल सके। अब तक लिव इन रिश्ते का कोई कानूनी आधार नहीं है। सुप्रीम कोर्ट ने कुछ ऐसे मानक सुझाए हैं, जिनके पूरा करने पर लिव इन रिश्ते को भी कानूनन शादी की तरह माना जाए। लिव इन रिश्ता भारत में नई बात है। जब भारत का संविधान लिखा जा रहा था , तब ऐसे किसी रिश्ते की कल्पना नहीं थी। अब कई दंपती इस तरह के रिश्ते में रहते हैं और भविष्य में उनकी तादाद शायद बढ़ेगी ही, घटेगी नहीं। अगर एक निश्चित वक्त से ज्यादा दिनों तक साथ रहने वाले स्त्री-पुरुष के रिश्तों को कानूनन मान्यता मिल सके, तो इससे रिश्ते में भी एक ठहराव और सुरक्षा आएगी और उनके बच्चों के कानूनी अधिकार तय किए जा सकते हैं। यह भी अजीब बात है कि सुप्रीम कोर्ट ने यह बात एक लिव इन रिश्ते के टूटने पर महिला द्वारा गुजारा भत्ते का दावा ठुकराते हुए कही है। सुप्रीम कोर्ट का यह कहना है कि लिव इन रिश्ते की जब मौजूदा कानूनों में कोई वैधता ही नहीं है , तो उसके टूटने को शादी टूटने का दर्जा कैसे दिया जा सकता है? ऐसे में, महिला को गुजारा भत्ता मिलना कानूनन मुमकिन नहीं है। इसीलिए अदालत चाहती है कि इस पर कोई स्पष्ट कानून बनाया जाना जरूरी है। यह माना जाता है कि लिव इन रिश्ता एक अनौपचारिक समझदारी और जिम्मेदारी पर आधारित है , इसलिए इसे कानून की औपचारिक मान्यता की जरूरत नहीं है। यह बात तब तक ठीक रहती है, जब तक कि आपसी समझ और जिम्मेदारी बनी रहती है। लेकिन जरूरी नहीं कि हमेशा यह समझ बनी रहे। दिक्कत तब होती है , जब संबंधों में कड़वाहट आने लगती है। तब ऐसे रिश्ते का टूटना ज्यादा आसान होता है , क्योंकि उसमें शादी जैसी सामाजिक , धार्मिक और कानूनी बंदिश नहीं होती। शादी के मामले में तलाक की प्रक्रिया इतनी जटिल और लंबी होती है कि वह अक्सर शादी को बनाए रखने का कारण बन जाती है। शादी के बंधन में बंधे स्त्री-पुरुष के कानूनी अधिकार साफ-साफ परिभाषित हैं। लिव इन रिश्ते में यह हो सकता है कि दोनों साझा संपत्ति बना लें, यह भी हो सकता है

बेरोजगारी लगातार बढ़ रही है और निवेशकों के हौसले पस्त हैं। महंगाई के चलते देश की मुद्रानीति और वित्तीय स्थिति पर किस तरह के संकट हैं , इसका जिक्र तो खुद रिजर्व बैंक के गवर्नर द्वारा जारी वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट 2013 में ही है। देश का पिछले कुछ साल का इतिहास तो यही बताता है कि देश ने अस्थिरता के दौर में भी काफी तरक्की की है। देश में उदारीकरण का मौजूदा दौर जिस सरकार ने शुरू किया, वह अस्थिर ही नहीं थी, लगातार राजनीतिक संकटों से भी घिरी रही। और अपने आखिरी दौर में तो नरसिंह राव की वह सरकार लगभग अल्पमत में ही थी। फिर भी कोई असर नहीं पड़ा। अटल बिहारी वाजपेयी की 13 महीने चली सरकार को किसी भी पैमाने पर स्थायी सरकार नहीं कहा जा सकता था। वह हमेशा ही तलवार की धार पर चलती रही, लेकिन उदारीकरण और तरक्की के मामले में उस सरकार ने कोई कसर नहीं छोड़ी थी। दिलचस्प बात यह है कि उस समय तमाम अर्थशास्त्री यह कहने लगे थे कि सरकार कैसी भी हो , किसी की भी हो , लेकिन अब उदारीकरण और तेज तरक्की को रोका नहीं जा सकेगा। लेकिन अब रघुराम राजन जो कह रहे हैं , वह बिल्कुल ही उल्टी बात है। पूरे देश ने, देश की राजनीति ने और यहां तक कि राजनीतिज्ञों ने एक बात अब ठीक से समझ ली है कि साझा सरकार फिलहाल देश की हकीकत है। अब सभी राजनीतिक दल यही सोचकर चुनाव लड़ते हैं और अपनी रणनीति तय करते हैं। कहीं न कहीं देश के औद्योगिक घरानों ने भी हकीकत को स्वीकार कर लिया है। लेकिन रघुराम राजन के बयान से लगता है कि कुछ अर्थशास्त्री शायद इस हकीकत को अभी तक स्वीकार नहीं पाए हैं। रिजर्व बैंक के गवर्नर की चिंता में कुछ हद तक सच्चाई हो सकती है , यह भी सच है कि लोक-लुभावन आर्थिक नीतियों ने अर्थव्यवस्था को काफी नुकसान पहुंचाया है। लेकिन हमें अपने आगे बढ़ने का रास्ता भी इसी राजनीतिक हकीकत से निकालना है। आम आदमी पार्टी के गठन से लेकर अब तक के उसके संक्षिप्त सफर में परंपरागत राजनीति की कई परिपाटियां टूटी हैं, इसी तरह दिल्ली विधानसभा में उसके विश्वास मत में भी काफी कुछ अलग है। 'आप' ने कांग्रेस के समर्थन से सरकार बनाई है , लेकिन दोनों पार्टियों के बीच संबंध कतई मधुर नहीं हैं। ऐसा पहले भी होता आया है कि घोर विरोधी पार्टियों ने एक-दूसरे के खिलाफ चुनाव लड़ने के बावजूद मिलकर सरकार बनाई। लेकिन इस गठबंधन में खास बात यह है कि साथ आने के बावजूद दोनों पार्टियों ने अपना परस्पर विरोध न खत्म किया है , न ही इसे छिपाया है। 'आप' की सरकार ने विश्वास मत पाने के पहले जो एक-दो बड़े फैसले किए हैं , उनमें दिल्ली में बिजली सप्लाई करने वाली निजी कंपनियों का सीएजी से ऑडिट करवाना सबसे महत्वपूर्ण है। मुमकिन है कि इस ऑडिट में पूर्ववर्ती कांग्रेस सरकार पर कुछ आरोप सामने आ जाएं , बल्कि मुख्यमंत्री केजरीवाल का कहना यह है कि हाईकोर्ट के कथित आदेश की आड़ में शीला दीक्षित की सरकार ऑडिट से बच रही थी। इसके बावजूद कांग्रेस ने 'आप' की सरकार को समर्थन दिया है। इस बात पर दोनों पार्टियों के विरोधी टिप्पणी भी कर रहे हैं, लेकिन राजनीति का यह एक नया और दिलचस्प प्रयोग फिलहाल तो जारी रहेगा। गठबंधन के सारे ही प्रयोग राजनीतिक सुविधा के लिए होते हैं, लेकिन उन पर कुछ सैद्धांतिक मुलम्मा चढ़ा दिया जाता है। इस प्रयोग में ऐसा कोई मुलम्मा नहीं है। दिल्ली में तुरंत फिर से चुनाव न हों और दिल्ली वासियों को सरकार मिल सके,

Exercise- 54

यह बात दंतकथाओं का हिस्सा बन चुकी है कि पुरुष अपनी शादी की वर्षगांठ और पत्नी का जन्मदिन भूल जाते हैं। हर पुरुष और स्त्री इसके एक-दो चुटकुले या वास्तविक किस्से सुना सकता है। लेकिन क्या यह सिर्फ एक धारणा है या इसमें कोई असलियत भी है? नॉर्वेनियन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी के कुछ शोधकर्ताओं ने इस पर शोध किया, तो पता लगा कि यह सच है। उनका कहना है कि पुरुष महिलाओं से ज्यादा भूलते हैं, और इसका उम्र से कोई ताल्लुक नहीं है। 30 और 60 वर्ष के पुरुष एक जैसे भुलक्कड़ हो सकते हैं। शोधकर्ताओं ने यहां जो शब्द इस्तेमाल किया है , वह 'ओवरलुक' यानी अनदेखा करना या उपेक्षा करना भी है, यानी पुरुषों का दिमाग बहुत सारी बातों को महत्व ही नहीं देता। इस शोध में वैज्ञानिकों ने 48,000 लोगों को शामिल किया। शोधकर्ताओं ने पाया कि पुरुष और महिलाएं, दोनों ही भूलते हैं, लेकिन पुरुष ज्यादा भूलते हैं। हालांकि वे यह नहीं बता पाए कि पुरुष क्यों ज्यादा भूलते हैं, लेकिन शायद एक वजह दिमाग के सोचने के तरीके में फर्क है। कुछ अन्य शोधों में यह पता चला है कि बुद्धि की तीव्रता पुरुष और औरतों में एक जैसी होती है, लेकिन दोनों में एक बुनियादी फर्क होता है। पुरुष आम तौर पर किसी काम की तफसील की परवाह न करके व्यापक परिदृश्य पर ज्यादा ध्यान देते हैं , जबकि महिलाएं उस काम को बेहतर ढंग से करती हैं, जिनमें हर तफसील का ध्यान रखना जरूरी है। यह प्रवृत्ति भले ही दिमाग का हिस्सा बन गई हो, लेकिन यह कहना शायद गलत होगा कि दिमाग की बनावट की वजह से ऐसा होता है। ज्यादा सही यह कहना होगा कि पुरुष और महिलाएं ऐसा सोचते हैं, इसलिए दिमाग की बनावट ऐसी हो गई है। आदिम काल से पुरुष और महिलाओं के काम परंपरागत ढंग से बंटे हुए रहे हैं , जिनमें पुरुष घर के बाहर की जिम्मेदारियां उठाता रहा है और स्त्रियां घर चलाती रही हैं , इसलिए उनके दिमागों की संरचना भी वैसी ही हो गई है। जीवशास्त्र का नियम है कि 'फॉर्म फॉलोज द फंक्शन' यानी रूप या ढांचा कार्य के मुताबिक बनता है। शरीर के किसी हिस्से की संरचना उससे लिए जाने वाले कार्य के मुताबिक ढल जाती है, इसका उलटा नहीं होता। अगर हम दिमाग को भी एक खास काम के लिए प्रशिक्षित करेंगे, तो उसकी संरचना में भी उसके अनुकूल बदलाव आ सकते हैं। जाहिर है, जो संरचना हजारों साल के विकास क्रम में बनी है, वह अचानक नहीं बदल सकती, लेकिन वह अपरिवर्तनीय भी नहीं है। हमें जो शरीर और दिमाग की संरचना मिली है , वह मानव जाति के ही नहीं, बल्कि समूची सृष्टि के करोड़ों साल के अनुभवों से बनी है, इसलिए यह सोचना तो बेकार है कि हम इसे जैसा चाहे, वैसा ढाल लेंगे, लेकिन हर व्यक्ति अपने और अपनी भावी पीढ़ियों के लिए नई शुरुआत कर सकता है। इसलिए हम कह सकते हैं कि अगर पुरुष चाहें , तो ऐसे काम में सफल हो सकते हैं, जिसमें छोटी-छोटी तफसील का ध्यान रखना जरूरी हो। सर्जरी एक ऐसा काम है , जिसमें किसी भी बात की उपेक्षा करना घातक हो सकता है , लेकिन पुरुष सर्जन सफल होते हैं। वैसे ही महिलाएं व्यापक योजना बनाने जैसे कामों में सफल हो सकती हैं , भारत के कई बैंकों की मुखिया आजकल महिलाएं हैं। हो सकता है कि आने वाले दौर में पुरुष और महिलाओं के दिमाग का यह फर्क कम हो जाए। लेकिन यह फर्क अगली एक-दो पीढ़ी में कम नहीं हो सकता। इसलिए महिलाएं पुरुषों के भुलक्कड़पन के लिए क्षमा करें और पुरुष कम से कम दो-चार खास दिन याद रखें , तो दोनों का ही भला होगा।

SONITYPINGTUTOR

लेकिन, मैं निराश नहीं हुई , लगी रही और 2012 के स्कूल गेम्स में हाई जंप में मैंने पहला स्थान हासिल किया तो सुभाष सरकार सर ने मुझे ट्रेनिंग के लिए चुन लिया लेकिन , फिर भी मुझे कोई खास ट्रेनिंग नहीं दी गई। 2013 में सर ने मुझे कोलकाता स्पोर्ट्स अथॉरिटी ऑफ इंडिया (साई) के नेताजी सुभाष ईस्टर्न सेंटर में शिफ्ट होने के लिए कहा। यहां आना मेरे जीवन का टर्निंग पॉइंट साबित हुआ।

जब तक गांव में थी और सारा दिन मैदान में प्रैक्टिस करती थी तो गांव वाले बोलते , घर में रहाकर, काली हो जाएगी, कोई शादी भी नहीं करेगा। और ये पक्की बात है कि यदि गांव में रहती तो मेरे मां-बाप मेरा कितना भी सपोर्ट करते लेकिन, फिर भी समाज के दबाव में अब तक मेरी शादी कर दी गई होती।

कोलकाता सेंटर में आकर मुझे अहसास हुआ कि एक लड़की भी खेल को फुलटाइम कॅरिअर चुन सकती है। इसका तत्काल फायदा यह हुआ कि मेरी ट्रेनिंग सहित सभी खर्चों का बोझ मेरी मां के कंधों से हट गया। भारतीय खेल प्राधिकरण के परिसर में आने पर सर ने मुझे हाई जंप से हैप्टाथलॉन में आने का सुझाव दिया।

मैंने नेशनल जूनियर एथलेटिक्स चैंपियनशिप में हिस्सा लिया और हैप्टाथलॉन में दूसरे स्थान पर रही। कभी पीठ, कभी टखने, कभी घुटने की चोट मुझे परेशान करती रही और पैर का स्थायी दर्द तो मेरे जीवन का हिस्सा ही बन गया लेकिन, मुझे ऐसे दर्द की आदत-सी हो गई।

पैर की समस्या तो बहुत विचित्र है , मेरे दोनों पैरों में छह-छह अंगुलियां हैंै। मैंने तमाम ब्रांड के जूते ट्राय किए पर कोई भी मुझे फिट नहीं आता। पांच नंबर का जूता फंसता है और छह नंबर का जूता ढीला आता है। छठी अंगुली के फंसे रहने से पैर में दर्द बना रहता है।

मैंने भी तय किया है कि छठी अंगुली को हटाने के लिए सर्जरी नहीं कराऊंगी , बल्कि प्रयास करूंगी कि कोई मेरे लिए कस्टमाइज जूते बना दे। अभी तो मेरे जूते दर्द तो देते ही हैं , जल्दी फट भी जाते हैं। बहरहाल, इसी कश्मकश के बीच 2014 में इंचियान, साउथ कोरिया में हुए एशियन गेम्स में सबसे छोटी हैप्टाथलॉन एथलीट के रूप में मैंने हिस्सा लिया और पांचवें पायदान पर आई।

पिछले साल एशियन चैंपियनशिप और फेडरेशन कप दोनों में मैंने गोल्ड हासिल किया। बीच-बीच में चोट लगती रही और मैं उससे उबरती रही। इसी दौरान मैंने कोलकाता यूनिवर्सिटी में बैचलर इन फिजिकल एजुकेशन की पढ़ाई शुरू कर दी। अभी मेरे थर्ड ईयर का रिजल्ट आने वाला है।

मुझे दो महीने पहले जून से पीठ और टखने में नई इंजरी आ गई। मुंबई-दिल्ली तक इलाज के लिए गई, दर्द कुछ कम हुआ पर हटा नहीं। मेरे संगी-साथी कहने लगे थे कि अब क्या मेडल लाएगी ? कभी-कभी मेरा मनोबल भी कमजोर होने लगता लेकिन, फिर मुझे अपने घर के हालात और मां-बाबा की याद आती कि यदि मैंने हिम्मत तोड़ दी तो उनका दर्द मैं कभी खत्म नहीं कर पाऊंगी।

प्राकृतिक तरीकों से ऐसा शरीर बनाना तकरीबन असंभव है। बाजार में शरीर सौष्ठव के लिए सैकड़ों किस्म के सप्लीमेंट मिलते हैं। इनमें से कुछ तो आहार सप्लीमेंट हैं और एक हद तक सुरक्षित हैं। जो रासायनिक दवाएं बाजार में मिलती हैं , उनमें से ज्यादातर खतरनाक हैं। इनमें से कई पर यह जानकारी नहीं होती कि वे स्टेरॉइड हैं या खतरनाक हैं। उनके साथ दी गई जानकारी ध्यान से पढ़ी जाए, तो यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि उनके निर्माता क्या छिपा रहे हैं। वैसे तो एक हद से ज्यादा प्रोटीन या विटामिन भी खतरनाक हो सकते हैं , या फैट को आहार से पूरी तरह हटा देना कई बीमारियों की वजह बन सकता है। बॉडी बिल्डिंग प्रतियोगिताओं के बारे में जानकारी इकट्ठा की जाए, तो पता लगता है कि ऐसा दर्शनीय शरीर बनाना और उसका प्रदर्शन करना अक्सर सेहत की कीमत पर ही संभव है। शाहरुख खान की तरह सिक्स पैक बनाना या सलमान खान की तरह बाईसेप्स से ज्यादा शरीर का सामान्य बने रहना बेहतर है। फिल्म स्टार भले ही परदे पर दर्जनों लोगों को पीट देते हैं , लेकिन वे सचमुच उतने ताकतवर और स्वस्थ नहीं होते। उनके दर्शनीय शरीर के पीछे मेकअप, कैमरा और लाइटिंग का खेल होता है। दिखावटी शरीर का मोह कितना खतरनाक हो सकता है, इसका प्रमाण सरमद अलादिन है।

राज्यसभा में विपक्ष के नेता अरुण जेटली की जासूसी के मामले में जांच अभी अपनी तार्किक परिणति पर नहीं पहुंची , लेकिन समूचे प्रसंग से यह पता चलता है कि हमारे देश में नियमों का गंभीर उल्लंघन कर पाना कितना आसान है। गृह मंत्री सुशील कुमार शिंदे के राज्यसभा में बयान से पता चलता है कि वह अरुण जेटली की जासूसी के आरोप को गंभीरता से ले रहे हैं। शिंदे का कहना है कि अरुण जेटली का फोन टैप नहीं किया गया, यानी उनकी बातचीत नहीं सुनी गई, लेकिन उनका कॉल रिकॉर्ड निकलवाया गया है। यानी वह किस-किस से कितनी देर तक फोन पर बात करते हैं , इसका रिकॉर्ड निकाला गया। गृह मंत्री का कहना है कि निजी जासूस के कहने पर दिल्ली पुलिस के एक कांस्टेबल ने यह काम किया , जो साल भर से ड्यूटी पर नहीं गया है। यह एक अजीब बात है कि पुलिस का एक कांस्टेबल इतनी आसानी से एक वरिष्ठ राजनेता के बारे में गोपनीय जानकारी हासिल कर सकता है। यह प्रसंग बताता है कि कितनी कम रिश्वत में पुलिस के एक कांस्टेबल से ऐसा गंभीर अपराध करवाया जा सकता है। किसी व्यक्ति की निजता की रक्षा की अवधारणा हमारे यहां बहुत ढीली-ढाली है। सरकारी या रसूखदार लोगों को यह नहीं बताया जाता कि भारत के नागरिक होने के नाते ही किसी व्यक्ति को कुछ अधिकार हासिल हैं और उनका सम्मान करना जरूरी है। पुलिस का एक सिपाही भी किसी को धमकाना , अपशब्द बोलना या पीटना अपना सहज अधिकार मानता है, ऐसे में किसी के फोन रिकॉर्ड को हासिल करना उसके लिए कोई बड़ी बात नहीं है। यहां एक महत्वपूर्ण व्यक्ति की निजता पर आक्रमण हुआ है , इसलिए इतना शोर मच रहा है। आम नागरिक तो अक्सर अपने सम्मान या निजता का उल्लंघन सरकारी कर्मचारियों के हाथों होता देखता रहता है। एक सबक तो इससे यह लिया जा सकता है कि कोई कितने ही बड़े वीवीआईपी क्यों न हों , अगर देश में नियमों और कानूनों का सम्मान नहीं है , तो वे भी सुरक्षित नहीं हैं। एक पुलिस का कांस्टेबल सौ रुपये के लिए किसी पटरीवाले को डंडा मार सकता है , तो 1,500 रुपये के लिए किसी वीआईपी के कॉल रिकॉर्ड भी हासिल कर सकता है। दूसरा मुद्दा यह है

Exercise- 57

लगभग आधी युवावस्था और आधे से ज्यादा जीवन सामने होता है और आप अपने सबसे प्रिय काम को छोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं। यह देखने में आया है कि काफी सारे खिलाड़ी इस खालीपन की वजह से भटक जाते हैं, लेकिन बहुत सारे खिलाड़ी हैं, जो खेल से संबंधित किसी काम में लग जाते हैं, कुछ कोचिंग करने लगते हैं, कुछ कमेंटरी करने लगते हैं, कुछ खेल से जुड़े रहते हैं और अपने लिए रोजगार का भी इंतजाम कर लेते हैं। सचिन जिस तरह के संस्कारी और अनुशासित व्यक्ति हैं, उसके चलते उनके बहकने की आशंका तो नहीं है, लेकिन यह देखना दिलचस्प होगा कि क्रिकेट के प्रति इस कदर समर्पित सचिन अब क्या करेंगे ? सचिन का बड़प्पन सिर्फ एक खिलाड़ी की सफलता की कथा नहीं है, वह इस बात का भी उदाहरण है कि खेल में इतने आक्रामक और प्रतिस्पर्धी होते हुए भी वह विनम्रता और शालीनता की मिसाल रहे। बहुत छोटी उम्र में ग्लैमर और पैसा खिलाड़ियों को अक्सर अहंकारी बना देता है, लेकिन अपने जमाने के सबसे लोकप्रिय और सफल खिलाड़ी होते हुए भी वह मैदान में और बाहर ऊंचे आचरण की मिसाल रहे। यह स्वभाव और उनकी एकाग्रता, लगन और मेहनत करने की क्षमता रिटायरमेंट के बाद भी उनकी ऊर्जा को व्यर्थ नहीं जाने देगी, इसकी हम उम्मीद करते हैं। कोई नहीं चाहेगा कि रिटायरमेंट के बाद सचिन युग की समाप्ति हो जाए, बल्कि हम यह चाहते हैं कि अब उनकी दूसरी पारी शुरू हो। एक आम मध्यमवर्गीय परिवार में बढ़े-पले सचिन नए जमाने की युवा भारतीय प्रतिभा के प्रतीक पुरुष बन गए हैं। अब उम्मीद है कि यह प्रतिभा अपनी परिपक्व समझ और अनुभव के साथ नए शिखर छुएगी।

राजनीतिक पार्टियां आमतौर पर लोकलाज का लिहाज तभी करती हैं, जब ऐसा करना बहुत ही जरूरी हो जाता है। जब चुनाव का माहौल होता है, तो अक्सर लोकलाज की कीमत वोटों के तराजू में ही तौली जाती है। भारतीय जनता पार्टी के कुछ विधायकों पर पिछले दिनों हुए सांप्रदायिक दंगों के सिलसिले में मामले दर्ज हुए हैं और वे कुछ दिन जेल भी काट आए हैं। यह कोई ऐसा गौरवपूर्ण कार्य नहीं है, जिसके लिए किसी का सम्मान किया जाए। लेकिन भाजपा ने दो विधायकों का विशेष रूप से सम्मान करना जरूरी समझा और आगरा में अपने प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी की रैली में बाकायदा उनका सम्मान किया गया। इन विधायकों में से एक संगीत सोम पर वह फर्जी वीडियो प्रसारित करने का आरोप है, जिसकी वजह से दंगे भड़क गए थे। दूसरे विधायक सुरेश राणा पर तो एक और मामला सम्मान वाले दिन ही दर्ज हुआ, जिसमें उन पर आरोप है कि जून माह में उन्होंने शामली के एक दंगे में दंगाई भीड़ का नेतृत्व किया था। जहां भी सांप्रदायिक दंगे होते हैं, वहां दंगों के काफी वक्त बाद तक लोगों में वैमनस्य, नफरत और शक बने रहते हैं। एक जिम्मेदार नेतृत्व की कोशिश होनी चाहिए कि नफरत मिटे व दंगों के शिकार संप्रदायों में फिर सौहार्द के रिश्ते कायम हों। यहां कोशिश यह दिखती है कि इन विधायकों को गौरवान्वित करके नफरत व अलगाव को कायम रखा जाए। यह माना जा सकता है कि जब तक किसी पर आरोप साबित न हो जाए, तब तक उसे अपराधी न माना जाए। इन विधायकों पर आरोप अभी साबित नहीं हुए हैं, फिर भी इस बात के भी कोई सबूत नहीं हैं कि इन जन-प्रतिनिधियों ने दंगों को रोकने और हिंसा न होने देने की कोई कोशिश की थी, जो कि इनका कर्तव्य था। जन-प्रतिनिधि का कर्तव्य किसी संप्रदाय, जाति या समुदाय के प्रति नहीं होता, बल्कि अपने चुनाव क्षेत्र

उसने कुछ इतने अटपटे अंदाज से बोलना शुरू किया कि उस पर आज भी हम अपनी हंसी नहीं रोक पाते हैं। मुझे माफ करना, अगर मेरे आने से आपको काम में कोई बाधा हुई हो, लेकिन आपसे जान-पहचान करने के लिए मैं बड़ा उत्सुक हूं। मैं मोची हूं। गात्तिलब शूल्त्स मेरा नाम है। सड़क के उस पार ठीक सामने वाले उस छोटे-से घर में रहता हूं, जिसे आप अपनी खिड़की से देख सकते हैं।

कल मै अपने विवाह की रजत जयंती मना रहा हूं और मैं आपको तथा आपकी लड़कियों को आमंत्रित करता हूं कि मेरे यहां आयें और प्रीति-भोज में शामिल हों। ताबूतसाज ने सिर झुका कर निमंत्रण स्वीकार कर लिया और मोची से बैठने तथा चाय पीने का अनुरोध किया। मोची बैठ गया। वह कुछ इतने खुले दिल का था कि शिघ्र ही दोनों अत्यंत घुल-मिलकर बातें करने लगे। , कहिये, आपके धंधे का क्या हाल-चाल है। आद्रियान ने पूछा। शूल्त्स ने जवाब दिया , कभी अच्छा, कभी बुरा, सब चलता है। यह बात जरूर है कि मेरा माल आपसे भिन्न है।

जो जीवित हैं, वे बिना जूतों के भी रह सकते हैं , लेकिन मरने के बाद तो ताबूत के बिना काम चल नहीं सकता। बिल्कुल ठीक कहते हो , आद्रियान ने सहमति प्रकट की , लेकिन एक बात है। माना कि अगर जीवित आदमी के पास पैसा नहीं है , तो वह बिना जूतों के रह जाये और तुम्हें टाल जाये लेकिन मृत भिखारी के साथ ऐसी बात नहीं। बिना कुछ खर्च किये ही वह ताबूत पा जाता है। इस तरह बातचीत का यह सिलसिला कुद देर और चलता रहा।

आखिर मोची उठा और अपने निमंत्रण को एक बार फिर दोहराते हुए उसने ताबूतसाज से विदा ली। अगले दिन, ठीक दोपहर के समय, ताबूतसाज और उसकी लड़कियां नये खरीदे हुए घर के दरवाजे से बाहर निकले और अपने पड़ोसी से मिलने चल दिए। मोची का छोटा-सा कमरा अतिथियों से भरा था।उनमें अधिकाशं जमर्न दस्तकार, उनकी पत्नियां और ऐसे युवक मौजूद थे , जो उनकी शागिर्दी कर रहे थे।

रूसी सरकारी कारिन्दों में से केवल एक ही वहां मौजूद था -पुलिस का सिपाही यूर्को। जाति का वह चूखोन था और बावजूद इसके कि उसका पद निम्न स्तर का था , मेजबान उसकी आवभगत में खास तौर से जुटा था। पच्चीस साल से पूरी फरमाबरदारी के साथ वह अपनी नौकरी बजा रहा था।

1812 के अग्निकाण्ड ने प्राचीन राजधानी को ध्वस्त करने के साथ-साथ उसकी पीली संतरी-चौकी को भी खाक में मिला दिया था। लेकिन दुश्मन क दुम दबाकर भागते ही उसकी जगह पर एक नयी संतरी-चौकी का उदय हो गया सलेटी रंग की और सफेद यूनानी ढंग के पायों से अलंकृत , और सिर से पांव तक लैस यूर्को उसके सामने अब फिर, पहले की ही भांति, इधर-से-उधर गश्त लगाने लगा।

निकीत्स्की दरवाजे के इर्द-गिर्द बसे सभी जर्मनों से वह परिचित था और उनमें से कुछ तो ऐसे थे , जो इतवार की रात उसकी संतरी-चौकी में ही काट देते थे। आद्रियान भी उससे जान-पहचान करने में पीछे नहीं रहा और जब अतिथियों ने मेज पर बैठना शुरू किया, तो ये दोनों एक-दूसरे के साथ बैठे।

इस मैदान से कई ऐतिहासिक स्मृतियां जुड़ी हैं और यहां कई नामी क्रिकेट खिलाड़ियों ने क्रिकेट के शुरुआती सबक सीखे हैं। भारत का जैसे-जैसे शहरीकरण हो रहा है , वैसे-वैसे इन समस्याओं को गंभीरता से देखने की जरूरत है। वह वक्त ज्यादा दूर नहीं , जब भारत की बहुसंख्य आबादी शहरों में बसेगी। मानव सभ्यता की यह स्वाभाविक गति है कि लोग गांवों से शहरों में आकर बसते है। शहरीकरण के कई फायदे हैं, लेकिन उसके साथ कई समस्याएं भी खड़ी होंगी। इनमें सार्वजनिक सुविधाओं व खुली जगहों की रक्षा भी एक समस्या होगी। शहरों की खूबसूरती को बढ़ाना जरूरी है और हम यह मान सकते हैं कि ज्यादातर अवैध निर्माण किसी जगह की खूबसूरती को बढ़ाते नहीं हैं। सार्वजनिक स्थलों की सुरक्षा करना सरकार का काम तो है ही , लेकिन समाज को भी उनका सम्मान करना सीखना होगा। जैसे-जैसे शहर बड़े होते जाते हैं , सार्वजनिक स्थलों की जरूरत बढ़ती जाती है। एक छोटे कस्बे में सड़क पर कोई असुविधा हो , तो उससे कुछ दिक्कत होती है , लेकिन किसी महानगर में सड़क पर जरा-सा व्यवधान लाखों लोगों का कामकाज बिगाड़ सकता है। कानून का पालन करना सरकार, जनता सबकी जिम्मेदारी है और इसके लिए हर बार सुप्रीम कोर्ट को ही कहना पड़े , यह कोई अच्छी बात नहीं है। केंद्र सरकार ने सस्ते दाम पर मिलने वाले घरेलू गैस सिलेंडरों की तादाद छह से नौ करके आम जनता को कुछ राहत पहुंचाई है। पिछले लंबे दौर में शायद ही किसी सरकारी फैसले का इतना व्यापक विरोध हुआ हो, जितना सब्सिडी वाले गैस सिलेंडरों की संख्या छह तक सीमित करने के फैसले का हुआ था। डीजल के दाम में बढ़ोतरी और रेलवे किराये में वृद्धि का इतना विरोध नहीं हुआ , शायद इसलिए कि इन फैसलों का असर आम नागरिक के रोजमर्रा के जीवन पर उतना नहीं पड़ता और लोग भी यह मान रहे थे कि डीजल के दाम और रेलवे किरायों का बढ़ना कुछ हद तक लाजिमी था। गैस सिलेंडर महंगे दाम पर खरीदने से अचानक घरेलू बजट पर भारी बोझ आ जाता है। आम तौर पर किसी भी औसत परिवार का काम महीने में एक सिलेंडर से नहीं चलता, और ऐसे में सिर्फ छह सस्ते सिलेंडर मिलने से कोई खास राहत नहीं मिल रही थी। सालाना नौ सिलेंडर मिलने से अब एक औसत परिवार को लगभग आधे सिलेंडर सस्ते में मिल जाएंगे। अगर राज्य सरकारें मेहरबान हो जाएं और तीन सिलेंडरों पर अपनी ओर से रियायत दे दें, तो लोगों पर से आर्थिक बोझ काफी हद तक कम हो सकता है। यह सही है कि सरकार गैस सिलेंडरों की सब्सिडी के रूप में काफी बड़ी रकम खर्च करती है। आंकड़े बताते हैं कि गैस सिलेंडरों की सब्सिडी का बोझ सालाना 18,000 करोड़ रुपये के आसपास है। बजट घाटे को कम करने के लिए सब्सिडी को घटाना बहुत जरूरी है। साथ ही, अगर खनिज तेज के मामले में आयात पर निर्भरता कम करनी है , तो पेट्रोलियम पदार्थों के दाम अंतरराष्ट्रीय बाजार के स्तर पर ले जाना जरूरी है। फिलहाल हम अपनी जरूरत का 80 फीसदी तेल आयात करते हैं। समस्या यह है कि दामों पर नियंत्रण की वजह से निजी पूंजी के इस क्षेत्र में निवेश को प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता। घरेलू उत्पादन कम होने की एक बड़ी वजह यह भी है। सब्सिडी से कई दूसरी दिक्कतें भी होती हैं। मसलन , पेट्रोल के दाम लगातार बढ़ाए जाते हैं, क्योंकि यह माना जाता है कि यह सुविधा संपन्न लोगों का ईंधन है , जबकि डीजल खेती, सार्वजनिक परिवहन व माल ढुलाई में काम आता है।

वे यह भी मानती हैं कि इस दिन कम से कम पीछे मुड़कर आकलन करने और आगे मोर्चे पर बढ़ने का हौसला तो निश्चित मिलता है। आठ मार्च को महिला दिवस अमेरिका में बेशक 1909 से मनाया जा रहा हो, पर हमारे देश में इसे सही तरीके से जामा पहनाया गया 1975 में। आज 38 वर्ष बाद शायद ही कोई स्त्री 'क्या खोया-क्या पाया' के खेल में अपने को उलझाना चाहती है। यह समय हमारे देश की स्त्रियों के लिए पहले से कहीं ज्यादा चुनौतियों भरा है। गांव , देहात, कस्बों से लेकर शहरी समाज तक में कन्या को जीने के लिए , अपनी अस्मिता बनाए रखने के लिए और अपने रहने लायक एक परिवेश बनाने की जद्दोजहद करनी पडम् रही है। पहले के मुकाबले लडम्किर्यों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार तेजी से बढम है। शिक्षा ने स्त्रियों को सोचने-समझने और अपने आपको पहचानने की ताकत दी है। इस ताकत का इस्तेमाल स्त्रियां हर क्षेत्र में कर रही हैं। शिक्षा के साथ ही आत्मनिर्भरता का पक्ष भी जुडम हुआ है और ग्रामीण से लेकर शहरी नौकरी-पेशा महिलाओं में पिछले दस साल में लगभग 11 प्रतिशत का इजाफा हुआ है। ये सारे आंकडम्े प्रोत्साहन से भरे हैं। हमारे देश की बेटियां जमीनी हकीकत से रूबरू हैं और अपने व परिवार के लिए एक बेहतर भविष्य बनाने की तैयारी कर रही हैं। बेटियों की सुरक्षा का यक्ष प्रश्न हमेशा से उपलब्धियों को अपनी कालिख से धोता आ रहा है। लडम्कियों की सुरक्षा आज पूरे देश के लिए एक ऐसा मर्मातक सवाल है , जिसका जवाब और उपचार जल्द से जल्द हम सबको देना और होगा। दिसंबर में देश की राजधानी में हुए जघन्य बलात्कार कांड के बाद जरूर ऐसा लगने लगा था कि लाखों लडम्कियों की आवाज और आक्रोश का सकारात्मक असर होगा। देश भर में बलात्कार और स्त्री सुरक्षा को लेकर कई दिनों तक प्रदर्शन हुए, सरकार की तरफ से तमाम आश्वासन आए। कानून में बदलाव से लेकर पुलिस की चाक-चौकसी भी दुरुस्त की गई। बावजूद इन प्रयासों के आज भी हर दिन इस तरह की घटनाएं उतनी ही घट रही हैं, जितनी पहले थी। लगभग सवा तीन लाख की जनसंख्या वाले देश मालदीव में पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद की गिरफ्तारी अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में एक छोटी-सी घटना है , लेकिन भारत के लिए यह एक बड़ा झटका है। दो हफ्ते पहले ही नशीद ने राजधानी माले में भारतीय दूतावास में शरण ली थी। वह बाहर तभी आए थे, जब वर्तमान राष्ट्रपति मुहम्मद वहीद हसन ने भारत को आश्वासन दिया था कि नशीद को गिरफ्तार नहीं किया जाएगा और ऐसी कोई कार्रवाई नहीं की जाएगी , जिससे नशीद को अगले चुनावों में भाग लेने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जाए। दो हफ्ते के भीतर ही वायदा तोड़ दिया गया और हालात जैसे हैं, उनमें यही लग रहा है कि नशीद को जेल भेजने व राष्ट्रपति चुनाव न लड़ने देने की तैयारियां हो चुकी हैं। यह गिरफ्तारी सीधे-सीधे भारतीय विदेश नीति को चुनौती है। इस चुनौती में यह सवाल भी है कि अगर भारत की सीमा से 400 किलोमीटर दूर एक छोटा-सा देश भारत की परवाह नहीं करता , तो फिर वह किस आधार पर विश्व महाशक्ति बनने की उम्मीद करता है ? हिंद महासागर क्षेत्र में भारत की प्रतिष्ठा को इससे आघात पहुंचा है और दुनिया के दूसरे देश भी यह सोच सकते हैं कि इस क्षेत्र में भारत प्रभावहीन है। भारतीय विदेश नीति की बड़ी गलती या लापरवाही तो यही थी कि सरकार एक साल पहले मोहम्मद नशीद की सरकार के तख्तापलट का अंदाजा नहीं लगा पाई और उसने नई सरकार को तुरंत स्वीकार कर लिया।

यह व्यापक अध्ययन बताता है कि कैसे लोगों के कट्टरवादी या संकीर्ण होने की आशंका है। आखिरकार आज कोई व्यक्ति अगर यह मानता है कि चमड़ी के रंग से इंसान की श्रेष्ठता तय होती है , तो उसकी अक्ल पर ही शक किया जाना चाहिए, चाहे वह अमेरिका के किसी नस्लवादी संगठन का हो या भारत में गोरेपन की क्रीम की बिक्री बढ़ाने वाला हो। संभव है कि उसके इस दुराग्रह का फायदा उठाने वाला कोई बहुत चतुर और बुद्धिमान व्यक्ति हो। दरअसल, कम समझ वाला इंसान हर चीज की निहायत सरल व्याख्या और निदान चाहता है। वह मानवीय परिस्थितियों की जटिलता व व्यापकता नहीं समझ सकता। वह सिर्फ इतना सोच और समझ सकता है कि किसी व्यक्ति या समूह को खत्म कर देने से सब कुछ ठीक हो जाएगा। यह भी प्रमाणित तथ्य है कि दूसरों को भी अपने ही जैसा समझने और उनकी तकलीफों को अपनी तकलीफ समझने की संवेदनशीलता ऊंचे दर्जे की मानसिक क्षमता से आती है। इसलिए कम संज्ञान वाले लोगों को हिंसा या विध्वंस से भी दिक्कत नहीं होती। यानी हम तरह-तरह के कट्टरवादियों की अक्ल पर तरस खाते हैं, तो यह वैज्ञानिक नजरिये से भी सही है। कुछ ही दिनों पहले के तमाम बुरे अनुभवों और तनावों के बाद विदेश मंत्री सलमान खुर्शीद की चीन यात्रा सद्भावपूर्ण माहौल में ही हुई है। जाहिर है , सीमा पर तीन हफ्ते चले गतिरोध को दोनों ही पक्षों ने पीछे छोड़ दिया है। खुर्शीद ने यह साफ तौर पर कहा कि सीमा पर गतिरोध का मामला बातचीत में नहीं उठा। सलमान खुर्शीद की यह यात्रा नए चीनी प्रधानमंत्री ली केकियांग की भारत यात्रा के सिलसिले में हुई है , जो इसी महीने प्रस्तावित है। चीन में राजनीतिक परिवर्तन के बाद उसके प्रधानमंत्री की यह पहली आधिकारिक विदेश यात्रा है। इससे पता चलता है कि यह यात्रा राजनयिक रूप से कितनी महत्वपूर्ण है और यह भी साफ होता है कि तमाम शक-शुबहों के बावजूद भारत से संबंध चीन के लिए बहुत मायने रखता है। जब सीमा पर विवाद जारी था, तब भी यह उम्मीद थी कि भारतीय विदेश मंत्री की चीन यात्रा के पहले यह विवाद सुलझा लिया जाएगा, क्योंकि चीनी प्रधानमंत्री की पहली विदेश यात्रा पर इस विवाद की छाया चीन नहीं पड़ने दे सकता। अगर भारत यह यात्रा रद्द करने का फैसला करता , तो दुनिया में चीनी हितों को बड़ा धक्का पहुंचता और चीन की बेइज्जती होती। भारत का चीन से सीमा विवाद चलता रहेगा , लेकिन दोनों देशों में इतनी समझदारी है कि इस विवाद को वे उन क्षेत्रों से दूर रखें , जिनमें परस्पर सहयोग जरूरी है। तेजी से विकसित होते देशों के संगठन ब्रिक्स में ये दोनों साडीदार हैं और कई अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी विश्व व्यापार संगठन और पर्यावरण के मुद्दों पर ये दोनों साथ रहे हैं। इन मामलों में भारत व चीन के हित एक जैसे ही हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि दोनों देशों का आपसी व्यापार लगातार तेजी से बढ़ रहा है। सन 2001 के बाद से अब तक द्विपक्षीय व्यापार में लगभग 30 गुना की बढ़ोतरी हुई है। इस दशक के तीन ही वर्षो में यह डेढ़ गुना हो गया है। भारत में चीन का निवेश भी बढ़ता जा रहा है , वैसे ही चीन में भारतीय उद्योग-व्यापार ने भारी निवेश किया है। कई बड़े और मंझले आकार के भारतीय उद्योग इन दिनों चीन में मौजूद हैं। जाहिर है , जब खरबों रुपये का निवेश एक-दूसरे के यहां हो और आर्थिक हित इतने जुड़े हों, तो कोई भी देश सीमा विवाद को इतना नहीं खींचना चाहेगा कि उसका असर आर्थिक संबंधों पर पड़े।

Exercise- 62

इंग्लैंड में यह खेल जरूर खेला जाता है , लेकिन वहां भी क्रिकेट में पैसा नहीं है। इस लिस्ट में दोनों भारतीय क्रिकेटर ही हैं, जिनका लगभग सारा पैसा भारत से ही आता है। हो सकता है कि अगले कुछ वर्षों में कुछ और क्रिकेटर इस लिस्ट में आ जाएं। बहुत मुमकिन है कि कम से कम शुरुआती कुछ नाम भारतीय क्रिकेटरों के ही हों, क्योंकि खेल से ज्यादा कमाई विज्ञापनों से होती है और भारतीय जनता को लुभाने के लिए भारतीय सितारों को ही अनुबंधित किया जाएगा। यह अच्छी बात है कि क्रिकेट में पैसा आ रहा है और वे दिन बीत गए, जब किसी अंतरराष्ट्रीय खिलाड़ी के पास भी दो ही बल्ले होते थे , या खेल में अच्छे-खासे कैरियर को छोड़कर खिलाड़ी कोई सुरक्षित नौकरी ढूंढते थे। लेकिन इस पैसे के साथ जो बुराइयां आई हैं , वे इस खुशी को कम करती हैं। अभी भारतीय क्रिकेट में स्पॉट फिक्सिंग और सट्टेबाजी को लेकर बवाल मचा हुआ है। इसी के साथ बीसीसीआई के कामकाज और उसमें खेल व व्यावसायिक स्वार्थ के घालमेल की भी चर्चा है। खेल का व्यवसायीकरण हो, तो कोई बुरी बात नहीं। व्यापार के साथ पैसा आता है , जो खेल को अच्छी तरह चलाने के लिए जरूरी है, लेकिन जो व्यापार हो, वह साफ-सुथरा हो और अच्छे व्यापार की आर्थिक व नैतिक मर्यादाओं के अनुकूल हो। धौनी अच्छे खिलाड़ी हैं, इसमें कोई शक नहीं, लेकिन विवादास्पद बोर्ड अध्यक्ष एन श्रीनिवासन के साथ उनके व्यावसायिक रिश्ते व एक खेल प्रबंधन कंपनी रिति स्पोर्ट्स में उनकी भागीदारी को लेकर सवाल उठ रहे हैं। पारदर्शी और साफ-सुथरा कारोबार करना कितना जरूरी है , यह धौनी से जुड़े एक उदाहरण से साफ होता है। रिति स्पोर्ट्स ने कहा कि साल 2010 में उसने धौनी से 210 करोड़ रुपये का करार किया, उसका दावा है कि यह पैसा धौनी को दे दिया गया है। लेकिन खबरें बताती हैं कि इन तीन वर्षों में रिति स्पोर्ट्स की कुल कमाई सिर्फ 110 करोड़ रुपये थी। इससे संदेह होता है कि शायद सिर्फ प्रचार के लिए 210 करोड़ रुपये की बात फैलाई गई। हमारे खिलाड़ी ही नहीं, हमारी अर्थव्यवस्था भी अब बड़े पैसे की दुनिया में शामिल हो गई है , ऐसे में अर्थव्यवस्था को भी साफ-सुथरा रखना जरूरी है, ताकि खिलाड़ियों की मेहनत की कमाई पर किसी संदेह का दाग न लगे। सरकार ने तमाम विकास कार्यों के लिए सार्वजनिक व निजी क्षेत्र की भागीदारी (पीपीपी) का जो रास्ता अख्तियार किया है , उसकी सफलता को लेकर कई संदेह खड़े हो रहे हैं। तटस्थता से देखने पर यह अच्छा मॉडल मालूम होता है और कई देशों में इसकी सफलता को देखा जा सकता है , लेकिन भारत में यह मॉडल तमाम उलझनों व गड़बड़ियों में घिरा हुआ है। इसकी वजह इस मॉडल के सिद्धांत में नहीं , बल्कि इसके अमल में है और इसका उदाहरण राजमार्गों के निर्माण में देखा जा सकता है। भारत में राजमार्गों के निर्माण की गति बहुत धीमी है और उन्हें लेकर शिकायतें भी बहुत हैं। सबसे बड़ी शिकायत तो अपर्याप्त सुविधाओं के बावजूद भारी टोल वसूलने की है। अच्छा यह है कि अब सरकार ने राजमार्ग पूरा बन जाने के बाद ही टोल वसूलने की मंजूरी देने का फैसला किया है। अब तक यही होता रहा है कि 75 प्रतिशत निर्माण हो चुकने के बाद अस्थायी प्रमाणपत्र मिलने के साथ ही टोल वसूलने का काम शुरू हो जाता है। इससे काम करने वाली कंपनी की प्राथमिकता काम पूरा करने की बजाय टोल वसूली बन जाती है। अक्सर टोल वसूली के शुरू होने के बाद वर्षों तक कुछ न कुछ काम लटके रहते हैं या यात्रियों के लिए नई समस्याएं पैदा हो जाती हैं,

यह सही है कि हम अपनी जेनेटिक संरचना नहीं बदल सकते, लेकिन वैज्ञानिक मानते हैं कि हम अपने जीन्स को 'स्विच ऑन' और 'स्विच ऑफ' कर सकते हैं, यानी काफी हद तक हमें विरासत में जो जेनेटिक संरचना मिली है, उसे हम चाहें तो नियंत्रित कर सकते हैं। ऐसा बाहरी प्रभावों , सामाजिक-सांस्कृतिक वजहों से हो सकता है और चाहें, तो कोशिश करके हम खुद भी कुछ बदलाव ला सकते हैं। वैज्ञानिकों ने एक और बात मार्के की कही है कि हमारे स्वभाव पर इस बात का बहुत प्रभाव पड़ता है कि मां ने हमारी परवरिश कैसे की या बचपन में मां का प्यार कितना नसीब हुआ। अगर मां आशावादी और तनाव रहित है , तो उसके प्यार और सुरक्षा से दिमाग में ग्लुको कॉर्टिकॉइड रिसेप्टर ज्यादा सक्रिय होते हैं। ये रिसेप्टर तय करते हैं कि कोई व्यक्ति अपने रोजमर्रा के जीवन में कितना तनाव झेल सकता है। आशावादी होना अच्छा है , यह हम सभी मानते हैं और जैसा कि वैज्ञानिक कहते हैं कि हम चाहें , तो अपनी कोशिशों से ऐसा बन सकते हैं। इसके साथ ही वैज्ञानिक हमें यह भी बताते हैं कि आशावादी लोग निराशावादी लोगों के मुकाबले ज्यादा जीते हैं। कई अध्ययनों में इस बात की पुष्टि हुई है। अगर जिंदगी के प्रति अपना नजरिया बदलने की सायास कोशिश की जाए, तो जिंदगी को बेहतर बनाना भी मुमकिन है। चिकित्सक इसके लिए कई मनोवैज्ञानिक तरीके भी बताते हैं। ध्यान करने से भी दिमाग को शांत और प्रसन्न बनाने में मदद मिलती है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि अपने आसपास क्या गलत है, उससे ज्यादा क्या सही है, यह देखने की आदत डालें। शिकायत करने और हर चीज को गलत बताने का अपना मजा है, अपने आप को 'गर्दिश में आसमान का तारा' बताने से भी कहीं न कहीं आपका अहंकार तुष्ट होता है , लेकिन जिंदगी के उजालों को देखना अपने और अपने आसपास के लिए ज्यादा अच्छा है। विज्ञान कहता है कि आप चाहें, तो ऐसा कर सकते हैं। गुडगांव के पब में एक पार्टी में सौ से ज्यादा किशोरों का हुक्का और शराब पीते पकड़े जाना सनसनीखेज खबर जरूर है , लेकिन यह शायद कोई असाधारण या दुर्लभ घटना नहीं है। यह एक खुला रहस्य है कि सिर्फ दिल्ली या इसके आसपास ही नहीं , देश के तमाम शहरों के पबों में किशोरों के लिए शराब और धूम्रपान सुलभ हो जाता है, खासकर अगर ये बच्चे बड़ी तादाद में हों या 'पार्टी' कर रहे हों। ऐसे कुछ होटल या पब होंगे, जो नियमों का सख्ती से पालन करते होंगे, लेकिन ऐसों की तादाद भी कम नहीं है, जो मुनाफे के लिए ऐसे बहुत सारे नियमों को ताक पर रखने के लिए तैयार हो जाते हैं। इक्का-दुक्का किशोर को तो ऐसी जगहों पर शायद प्रवेश न मिले , लेकिन पार्टियों में बड़ी तादाद में बच्चे होते हैं और मुनाफा भी बड़ा होता है , इसलिए लालच भी बड़ा होता है। चोरी-छिपे कभी-कभी शराब पीने या फिर धूम्रपान की शरारत तो हर वक्त होती रही है , लेकिन नए दौर में शराब पीने को नया ग्लैमर और स्वीकार्यता मिल गई है, इसलिए नौजवानों और यहां तक कि किशोरों में शराबखोरी ज्यादा बढ़ गई है। आधुनिक संस्कृति में शराब की पार्टी को जैसा महत्व मिल गया है, उसमें किशोरावस्था में नियमित रूप से शराब पीने वाले बच्चों की तादाद बढ़ने लगी है और यह खतरनाक बात है। आधुनिक वक्त में एक-एक करके लगभग बाकी सारे नशों को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया है, लेकिन शराब पीना पश्चिमी संस्कृति के दबाव में बढ़ता जा रहा है। पश्चिमी संस्कृति में शराब सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से एक मान्य नशा है,

इन धमाकों से प्रभावित लोगों और उनके परिजनों के नुकसान की भरपायी तो नहीं हो सकती, लेकिन मुंबई की विशेष मकोका अदालत के फैसले से दोषियों को सजा मिलने का कुछ संतोष जरूर होगा। इस बात का भी हमें संतोष होना चाहिए कि पुलिस ने इस तरह से मामले की जांच की और सबूत जुटाए कि अदालती कसौटी पर वे खरे उतरे। यह हमारे यहां का आम चलन है कि ऐसी किसी वारदात के बाद काफी सारे लोगों की गिरफ्तारी के साथ मामला सुलझाने का दावा किया जाता है। उसके बाद अदालत में आरोप-पत्र दाखिल करने में ही बरसों लग जाते हैं और जब उसके भी बरसों बाद पहली अदालत से मामले का फैसला आता है , तो आरोपी छूट जाते हैं। इस मामले में भी नौ साल तो हो ही चुके हैं और इसके बाद मामला हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट तक भी जा सकता है। अगर आरोपी दोषी हैं, तो इतने दिनों बाद न्याय मिलने से न्याय का बहुत कुछ असर तो जाता ही रहता है, न ही अपराध से प्रभावित लोगों को यह राहत मिलती है कि उनके अपराधी न्याय की गिरफ्त में आ गए। अगर आरोपी निर्दोष हैं , तो भी यह अन्याय है कि निर्दोष नागरिकों को इतने साल जेल में रहना पड़ा। ऐसे मामलों के कई आरोपी जब पकड़े गए थे , तब नौजवान थे और जब तक निर्दोष छूटे , तब तक उनकी आधी जिंदगी बीत गई थी। उनकी युवावस्था का वह दौर , जब उनका भविष्य और करियर संवरना था , बर्बाद हो गया और उनका जीवन बिखर गया। ऐसे अपराधों के कई आरोपी डॉक्टर और इंजीनियर रहे हैं और आतंकवादी होने के कलंक और बरसों जेल में बिताने की वजह से वे अपने पेशे में कोई तरक्की करने की स्थिति में नहीं रहे। कम से कम इस मामले में यह तो कहा जा सकता है कि 13 में से 12 लोग दोषी साबित हुए हैं। पुलिस की अपराधों की जांच करने की क्षमता बढ़ाना और न्याय की रफ्तार बढ़ाना बहुत जरूरी है। इसके लिए पुलिसकर्मियों की तादाद बढ़ाने , उन्हें ज्यादा संसाधन देने और राजनीतिक दबाव से बचाने जैसे कदम उठाए जाने चाहिए, उसी तरह अदालतों में भी जजों की संख्या बढ़ाने से लेकर अदालती प्रक्रिया में सुधार जैसे कदम उठाने में देर नहीं की जानी चाहिए। लेकिन न पुलिस सुधार, न ही न्यायिक सुधारों पर ध्यान दिया जा रहा है और न्यायिक प्रक्रिया न्याय दिलवाने का नहीं, न्याय को टालने का जरिया बनती जा रही है। दूसरा मुद्दा आतंकवाद से प्रभावित लोगों के पुनर्वास का है। अनुभव यह है कि किसी वारदात के होने के तुरंत बाद तमाम किस्म की घोषणाएं की जाती हैं , लेकिन जैसे-जैसे वक्त गुजरता जाता है , लालफीताशाही और सरकारी रवैये की वजह से वारदात से प्रभावित लोग अपने हाल पर छूट जाते हैं। हमारे देश में वैसे ही सामाजिक सुरक्षा की बड़ी कमी है, इसलिए ऐसी वारदात के शिकार लोगों के लिए पुनर्वास की योजनाएं बनाना और उन्हें वास्तव में अमल में लाना जरूरी है। 11 जुलाई के लोकल ट्रेन धमाकों के शिकार लोगों को भी ऐसी शिकायतें हैं। न्याय और पुनर्वास , दोनों मोर्चों पर बहुत कुछ करने की जरूरत है , मुंबई की आतंकी वारदात पर हुआ ताजा फैसला भी यही कहानी कहता है। आठ साल पहले बराक ओबामा ऐसे पहले अफ्रीकी-अमेरिकी बने थे , जिसे किसी बड़ी राजनीतिक पार्टी ने राष्ट्रपति उम्मीदवार मनोनीत किया था। जुलाई में हिलेरी क्लिंटन ऐसी पहली महिला बनेंगी, जिसे किसी अहम सियासी जमात ने राष्ट्रपति प्रत्याशी नामजद किया। श्रीमती क्लिंटन इससे भी बड़ी बाधा पार कर अमेरिका की पहली महिला राष्ट्रपति बन पाती हैं या नहीं,

राहुल गांधी के कांग्रेस अध्यक्ष पद के लिए एकमात्र नामांकन की प्रक्रिया पर सवाल उठाने का हक न तो किसी दूसरी राजनीतिक पार्टी को है और न ही सत्ता पर काबिज सरकार के किसी भी व्यक्ति को क्योकि यह पार्टी के अपने भीतर की प्रजातांत्रिक प्रक्रिया है जिसके लिए बाकायदा चुनाव अधिकारी और पर्यवेक्षक तैनात हैं।

उनके चुनाव को वंशवाद के आवरण में देखना भी पूरी तरह गलत है क्योंकि उन्हें कांग्रेस पार्टी के चार करोड़ से अधिक कार्यकर्ता इस पद पर देखना चाहते हैं। लोकतन्त्र में वंशवाद बिना आम जनता या मतदाताओं की सहमति और उनकी तसदीक के नहीं चल सकता अतः जब भी हम वंशवाद का उलाहना कांग्रेस पार्टी को देने की कोशिश करते हैं तो उस जनता को सीधे निशाने पर ले लेते हैं जो इस परंपरा से आये नेताओं को अपना समर्थन देती है और उन्हें जननायक बना देती है।

यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि कोई भी राजनीतिक दल वंश के वशीभूत होकर अपनी प्रणाली में किसी व्यक्ति को पद पर तो बिठा सकता है मगर उसे नेता नहीं बना सकता। यह काम सिर्फ भारत की महान जनता ही कर सकती है और वह तभी करती है जब उसे तसल्ली हो जाती है कि बेटे या बेटी में अपने बाप के बराबर की काबलियत है या नहीं।

मोती लाल नेहरू के पुत्र जवाहर लाल नेहरू में इस देश की जनता ने स्वतन्त्रता से पहले यही गुण नहीं देखा था बल्कि यह भी यकीन पा लिया था कि जवाहर लाल अपने पिता से भी बढ़कर काबिल हैं, तभी जाकर वह आजादी से पहले के भारत में युवा हृदय सम्राट और जननेता बने थे।

इसी प्रकार इन्दिरा गांधी को भी भारत के लोगों ने हर कसौटी पर कसा और जब देख लिया कि वह अपने पिता के नक्शे कदम पर चलते हुए भारत को बुलन्दियों तक पहुंचा सकती हैं तो उन्होंने इंदिरा जी को प्रियदर्शनी बना दिया। राजीव गांधी पर भी लोगों ने भरोसा किया था परन्तु जनापेक्षाओं पर पूरा नहीं उतर पाये मगर उन्होंने अपने शासनकाल में भारत को 21वीं सदी की दहलीज पर ले जाने में कोई कसर भी नहीं छोड़ी और कम्प्यूटर क्रान्ति करके इस देश की युवा पीढ़ी को पूरी दुनिया में अपने ज्ञान का आलोक फैलाने का अवसर प्रदान किया।

इतना ही नहीं दूरसंचार क्रान्ति की नींव भी उन्होंने ही डाली और सी-डाट संचार प्रणाली के जरिये सीधे ग्रामीण भारत को जोड़ डाला था। दरअसल नेहरू –इंदिरा–राजीव की वंश बेल को हम भारत की जनता के आशीर्वाद से ही फली –फूली पायेंगे। अतः हम इसे रूढिवादी दायरे में वंशवाद नहीं कहेंगे बल्कि विरासत कहेंगे।

विरासत और वंश में मूलभूत अन्तर वह होता है जो जन्म और कर्म में होता है। लोकतन्त्र में व्यक्ति किसी वंश में जन्म लेने से ही उसकी विरासत का हकदार तभी बन सकता है जबकि आम जनता उसे इस योग्य समझे। श्री राहुल गांधी अपने परिवार की इसी विरासत के हकदार अब जाकर बनने की प्रक्रिया में पहुंचे हैं क्योंकि वह इस देश की जनता के मन की बातें खुलकर बेधड़क होकर कह रहे हैं।

लाखों मकानों के अनबिके रहने के बावजूद बिल्डर दाम कम करके ग्राहकों को नहीं आकर्षित कर पा रहे हैं। इसकी काफी कुछ जवाबदेही तो सरकारी नीतियों और योजनाओं में गड़बड़ी की है , जिसकी वजह से यह क्षेत्र फंसा हुआ है। यह स्थिति काफी हद तक पूरी अर्थव्यवस्था की है , जिसके विकास के लिए ब्याज दरों में कमी सिर्फ एक तरीका है। ब्याज दरों में कमी अच्छी शुरुआत है और हमें उम्मीद करनी चाहिए कि अगला बजट भी अच्छी खबरें लाएगा।

प्याज आम इस्तेमाल की सब्जी है , लेकिन इसकी ताकत का अंदाजा उन राजनेताओं को है , जिनको इसने चुनाव हरवाया था। कम से कम दो चुनावों में प्याज के दाम अहम मुद्दा बन गए थे और दोनों में तत्कालीन सत्तारूढ़ पार्टी को हारना पड़ा था। दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित अगर राजधानी में प्याज के बढ़ते दाम से फिक्रमंद हैं , तो यह समझा जा सकता है। उन्हें इस साल विधानसभा चुनावों का सामना करना है। बहरहाल, प्याज के दाम बढ़ने की सबसे बड़ी वजह यह है कि इस साल इसका उत्पादन कम हुआ है। प्याज की खेती मुख्यतः महाराष्ट्र और गुजरात में होती है और इन दोनों ही राज्यों में बारिश कम हुई है, जिसकी वजह से प्याज कम क्षेत्र में बोया गया। साल 2012 में 40,000 हेक्टेयर जमीन पर खरीफ के मौसम में और 10,000 हेक्टेयर में रबी के मौसम में प्याज बोया गया था, इस साल यह 22,000 हेक्टेयर खरीफ में और 8,000 हेक्टेयर रबी में बोया गया है। कुछ प्याज सिंचित जमीन पर बोया जाता है और कुछ ऐसी जमीन पर , जिसकी सिंचाई बारिश पर निर्भर होती है। इस साल सिर्फ सिंचित जमीन पर प्याज बोया जा सका और बारिश की कमी की वजह से असिंचित जमीन पर किसानों ने प्याज नहीं बोया। उत्पादन में कमी की वजह से मंडियों में आवक भी लगभग एक तिहाई घट गई है। उत्पादन कम होने से दाम बढ़ना तो लाजिमी है, लेकिन होता यह है कि जब कमी होती है , तो बड़े व्यापारी जमाखोरी करने लगते हैं और हर स्तर पर मुनाफाखोरी बढ़ने लगती है, इससे ज्यादा दाम बढ़ जाते हैं। दाम बढ़ने का सिलसिला जब शुरू होता है , तो वह लगभग अवास्तविक स्तर पर पहुंच जाता है। कुछ खास ब्राह्मण-वणिक जाति के लोगों के अलावा प्याज समूचे भारत के रसोईघरों का अनिवार्य हिस्सा है और रोजमर्रा के खाने में इस्तेमाल होता है। परंपरागत रूप से रोटी-प्याज को गरीबों का भोजन माना जाता है और प्याज के दाम सब्जियों में काफी कम होते हैं। इसलिए जब प्याज के दाम बढ़ते हैं , तो इसे लोग सरकार की अकर्मण्यता का प्रमाण मानते हैं और अक्सर इसका नतीजा चुनावों में देखने को मिलता है। यही वजह है कि दिल्ली में प्याज के दाम बढ़ने पर राज्य सरकार तुरंत हरकत में आ गई और उसने अपनी ओर से प्याज की सप्लाई बढ़ाने के उपाय शुरू कर दिए। मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने कृषि मंत्री शरद पवार को भी चिट्ठी लिखी है कि कृषि मंत्रालय प्याज की सप्लाई बढ़ाने के लिए उपाय करे , जिनमें प्याज के निर्यात पर पाबंदी लगाना भी शामिल है , हालांकि कृषि मंत्रालय ने फिलहाल प्याज का निर्यात रोकने से मना कर दिया है। प्याज या अन्य कृषि उत्पादों के दाम स्थिर रहें , इसके लिए सबसे ज्यादा जरूरी है कि खेती में अनियमितता घटाई जाए , इसके लिए सिंचाई और दूसरे इंतजाम बेहतर किए जाएं। जिन फसलों का समर्थन मूल्य सरकार तय करती है , उन्हें छोड़ बाकी फसलों के दामों में भी बड़ी अनिश्चितता रहती है। जब फसल ज्यादा होती है , तो दाम गिरते हैं। दाम गिरते हैं , तो किसान अगली बार उस फसल को कम उगाते हैं और तब दाम बढ़ जाते हैं।

एमएसएफ वह सुविधा है, जिसके तहत बैंक अचानक जरूरत पड़ने पर रिजर्व बैंक से पैसा ले सकते हैं। यह दर रेपो रेट से एक प्रतिशत ज्यादा थी, अब यह तीन प्रतिशत ज्यादा हो गई। इन दोनों कदमों का असर यह होगा कि बाजार में नकदी कम होगी और जो पैसा विदेशी मुद्रा बाजार में सट्टेबाजी में लगता था , वह घट जाएगा। इससे डॉलर के मुकाबले रुपये की गिरावट थम सकती है। जिस वक्त ऐसा लग रहा था कि भारतीय अर्थव्यवस्था बुरे दौर से निकल रही है, उसी वक्त रुपये की कीमत घटने से उसे फिर झटका लगा है। डॉलर की मांग बढ़ने की सबसे बड़ी वजह यह है कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था से बेहतर खबरें आ रही हैं। अमेरिका में निवेश बढ़ा है, उत्पादन में भी बढ़ोतरी हुई है और रोजगार भी ज्यादा पैदा हो रहे हैं। अमेरिका में शेल गैस के उत्पादन की सफलता ने अमेरिकी अर्थव्यवस्था के बारे में ज्यादा उम्मीदें बढ़ा दी हैं, क्योंकि अमेरिका में सस्ती व प्रचुर गैस की संभावना वहां के औद्योगिक उत्पादन के लिए बहुत मुफीद होगी। माना यह जा रहा है कि एक दशक के अंदर अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा फॉसिल ईंधन उत्पादक देश बन जाएगा। फिलहाल अचानक डॉलर के महंगा होने का कारण इस तरह के संकेत हैं कि अमेरिका में अर्थव्यवस्था को तेज करने के लिए जो मौद्रिक प्रोत्साहन नीतियां चल रही हैं , उन्हें जल्दी ही खत्म किया जा सकता है। इससे यह हुआ कि दुनिया भर से डॉलर की मांग बढ़ गई और तमाम मुद्राएं डॉलर के मुकाबले कमजोर पड़ गईं। भारत में इसकी मार ज्यादा तगड़ी इसलिए पड़ी कि निवेशकों को भारतीय अर्थव्यवस्था फिलहाल निवेश के लिए बहुत आकर्षक नहीं लग रही है और भारत का विशाल चालू खाते का घाटा उन्हें पैसा लगाने से हत्सोसाहित कर रहा है। सारी एशियाई मुद्राओं में भारतीय रुपया ही सबसे ज्यादा कमजोर हुआ है , जिससे आयात महंगा हुआ। भारत का सबसे ज्यादा आयात खनिज तेल का होता है , जो महंगा पड़ने लगा है। महंगाई का असर दूसरे क्षेत्रों में भी देखा जा रहा है, जो कि खतरे का संकेत है। इस संकट का वास्तविक निदान तो यह है कि हमारी अर्थव्यवस्था निवेशकों के लिए आकर्षक बने। यह तब होगा , जब चालू खाते का घाटा कम होगा , औद्योगिक उत्पादन के तेजी से बढ़ने के आसार दिखेंगे और महंगाई काबू में रहेगी। अगर ऐसा होगा , तो भारतीय अर्थव्यवस्था में निवेश होगा और रुपये की कीमत भी बेहतर होगी। एक बड़ी दिक्कत यह है कि सरकार यदा-कदा कुछ कदम उठाने की घोषणा जरूर करती है, लेकिन फिर खामोश हो जाती है। इसके अलावा , ऐसे संकेत नहीं मिल रहे हैं कि अर्थव्यवस्था को धीमी करने वाले जो कारण है, सरकार उनका स्थायी निदान करने के लिए कदम उठा रही है। सरकार की नजर अब 2014 के आम चुनावों पर है। ऐसे में बड़े सुधारों की गुंजाइश तो कम है , लेकिन जो इक्का-दुक्का कोशिशें हो रही हैं, वे काम कर जाएं, तो अर्थव्यवस्था ठीक-ठाक हालत में चलती रह सकती है। खेल मंत्रालय ने महान हॉकी खिलाड़ी मेजर ध्यानचंद का नाम भारत रत्न के लिए प्रस्तावित किया है। खबर यह है कि खेल मंत्रालय ने ध्यानचंद और सचिन तेंदुलकर के नाम पर विचार किया और फिलहाल ध्यानचंद का नाम प्रस्तावित करने का फैसला किया। सचिन तेंदुलकर की प्रतिभा व योगदान के बारे में कोई शुबहा नहीं है, लेकिन अच्छा यही होगा कि उनके नाम पर गंभीरता से विचार कुछ वर्षों के बाद किया जाए। इस बात में भी कोई शक नहीं है कि ध्यानचंद आधुनिक भारत के इतिहास के बड़े खिलाड़ियों में ही नहीं, बल्कि महानतम

इस दिवाली से यह उम्मीद की जा रही थी कि महंगाई के बावजूद उपभोक्ता सामान के कारोबार में तेजी दिखाई देगी। इस उम्मीद के पीछे का अनुमान यह था कि रबी की फसल अच्छी रहने के कारण इस समय ग्रामीण समाज के पास जो धन आया है , उसे वह त्योहार के मौके पर उपभोक्ता सामान पर खर्च करेगा। अगर ऐसा हुआ, तो विकास दर भी कुछ ऊपर जाएगी। लेकिन अभी यह कहना मुश्किल है कि यह सब चार दिन की चांदनी जैसा ही होगा या इसका कोई दूरगामी असर भी बनेगा। एक तो अभी हमें पता नहीं है कि अगर बाजार में मामूली-सा सुधार हुआ भी , तो उसका पूरी अर्थव्यवस्था पर कोई सीधा असर पड़ेगा या नहीं। दूसरे , पिछले कुछ साल का अनुभव यही बताता है कि इस तरह से उत्पादों की मांग और आपूर्ति बढ़ने से रोजगार के नए अवसर बहुत ज्यादा नहीं पैदा होते। अर्थशास्त्रियों के मन में यह डर तो है ही कि अब आम चुनाव बहुत दूर नहीं है। ऐसे में , यह उम्मीद बहुत कम है कि सरकारें अर्थव्यवस्था के मूल आधार को मजबूत बनाने की कोशिश गंभीरता से करेंगी। यह वोट बटोरने का समय है , अर्थव्यवस्था की सुध लेने का नहीं। अगर शेयर बाजार को भी गौर से देखें, तो बाजार इस समय उससे आगे की यात्रा कर रहा है , जहां से वह साल 2008 में पीछे लौट गया था। यानी इस पांच साल का हासिल कुछ नहीं है। लेकिन उसका आगे बढ़ना अच्छी खबर जरूर है। कोई चार दशकों से, जब भी चुनाव आता है, तो अधिकतर राजनीतिक पार्टियां और उनके दिग्गज नेता देश के सामने विकास का कोई नया व अनोखा मॉडल न रखकर , कांग्रेस के वंशवाद पर हमला बोलने लगते हैं। भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी ने , जो इन दिनों लोगों के दिल-ओ-दिमाग पर छाने की कोशिश कर रहे हैं , वंशवाद की राजनीति को एक नया शब्द दिया है यानी राहुल गांधी। जब इस शब्द पर कांग्रेस की ओर से तीखी प्रतिक्रिया शुरू हुई , तो उन्होंने कहा कि शहजादा कहना छोड़ दूंगा , यदि कांग्रेस वंशवाद छोड़ दे।' नरेंद्र मोदी के इस अंदाज-ए-बयां पर चुनावी सभाओं में तालियां भी खूब बजती हैं , ठीक उसी तरह, जैसे कोई राहुल को बबुआ या युवराज कहता था , तो वे बजती थीं। मगर शायद मोदी को यह पता नहीं है कि वंशवाद की राजनीति पर कांग्रेस का कोई कॉपीराइट नहीं है। हो सकता है कि मोदी जान-बूझकर अनजान बन रहे हैं। पहली बार 1967 में समाजवादी चिंतक राममनोहर लोहिया ने उत्तर प्रदेश के फूलपुर लोकसभा क्षेत्र में 'नेहरू वंश' के तर्क के जरिये जवाहरलाल नेहरू की बहन विजय लक्ष्मी पंडित के खिलाफ जनेश्वर मिश्र की तरफ से मोर्चा खोला था। वह खुद कन्नौज से चुनाव लड़ रहे थे। पर आज कश्मीर से लेकर केरल और महाराष्ट्र से ओडिशा तक की राजनीति में सियासी वंशों की ही हुक्मरानी है। एक आंकड़े के अनुसार , साल 2004 के चुनाव में कोई 120 परिवारों ने 250 क्षेत्रों से चुनाव लड़े थे। लोग कहते हैं कि जैसे शब्द सामंती प्रथा की देन हैं। और ये शब्द गरीबों को परियों की कहानियों की तरह लुभाते हैं। यह एक मानसिकता है, जिसे राजनीतिक विश्लेषक मार्क टुली इंग्लैंड से आयातित सामंती परंपरा की देन मानते हैं। दरअसल , जिस तरह पुराने जमाने में शहजादे, युवराज, राजकुमारी या प्रिंस-प्रिंसेज आदि लोगों के दिल और दिमाग पर जादुई असर छोड़ते थे, उसी तरह राजनीति के शहजादों को भी लोग देखते हैं और कुछ हद तक उनकी ओर आकर्षित होते हैं। उनसे लोग ढेर सारी उम्मीदें जोड़ देते हैं।

Exercise- 69

लोग ऊंचे पदों पर कल तक बैठे थे और सत्ता में नहीं हैं और जब ऐसे लोग अपनी पोजीशन का दुरुपयोग करते हुए लाखों-करोड़ों-अरबों का हेरफेर करते हैं तो उन पर शिकंजा कसा ही जाना चाहिए। हमारे देश में भ्रष्टाचार को लेकर जिस तरह से आरोप बड़े पदों पर बैठे लोगों पर लगे हैं तो जब उनके खिलाफ कार्यवाही की प्रक्रिया शुरू होती है तो वे चीखने-चिल्लाने लगते हैं।

पिछले दिनों पूर्व वित्त एवं गृहमंत्री रहे पी.सी. चिदम्बरम और उनके बेटे उद्योगपति कार्ति चिदम्बरम के अलावा राजद सुप्रीमो लालू यादव के यहां सीबीआई के छापे पड़े तो उनकी चीखो-चिल्लाहट समझ आती है। ईडी और आयकर विभाग ने अब इनके खिलाफ शिकंजा कस लिया है।

पी.सी. चिदम्बरम और उनके बेटे कार्ति को लेकर हैरानगी इस बात की है कि जब उनके खिलाफ आय से अधिक संपत्ति के मामले में एक्शन लिए जाने की बात हो रही थी तो खुद चिदम्बरम साहब कह रहे थे कि आपको कार्यवाही से किसने रोका है और अब जब इनकी बेनामी संपत्ति और आय से अधिक धन का पता चल रहा है तो ये लोग चिल्ला-चिल्लाकर कह रहे हैं कि हमारे खिलाफ राजनीतिक बदले के तहत यह कार्यवाही की जा रही है।

हमारा सवाल यह है कि पुत्र कार्ति चिदम्बरम और पिता पी.सी. चिदम्बरम को किसने यह इजाजत दे दी कि वे कानून को ताक पर रखकर जहां चाहें निवेश करें और जहां चाहें पैसा ट्रांसफर करें। आखिरकार इन नेताओं को मनमानी की छूट क्यों मिली हुई थी? इन्हीं चीजों का पता लगाने के लिए अगर सीबीआई या इनकम टैक्स विभाग या ईडी आगे बढ़ रहे हैं तो फिर अब ये राजनीतिक विद्वेष के आरोप क्यों लगा रहे हैं।

अब तो ईडी ने कार्ति चिदम्बरम के खिलाफ मामला भी मनी लांड्रिंग को लेकर दर्ज कर लिया है। लिहाजा उनसे पूछताछ का मार्ग प्रशस्त हो गया है और चिदम्बरम भी शिकंजे में ही हैं। यह बात अलग है कि बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री और राजद के चीफ लालू यादव के ठिकानों पर भी इनकम टैक्स विभाग ने दिल्ली से लेकर पटना तक छापेमारी की है।

विभाग को लगता है कि उनके पास एक हजार करोड़ से भी ज्यादा की बेनामी संपत्ति है। आज लालू भले ही केंद्र सरकार पर राजनीतिक बदला लेने का आरोप लगा सकते हैं लेकिन लालू को यह भी याद रखना होगा कि जब कांग्रेस के शासन में उनके खिलाफ सीबीआई के छापे पड़े थे और बाद में यह कार्यवाही रुक गई तो तब अपने इस मैनेजमेंट कौशल को लेकर वह चुप क्यों रहे।

चारा घोटाले में लालू आकंठ लिपटे हुए हैं। लिहाजा कुछ कहने से पहले लालू को अपने गिरेबान में जरूर झांक लेना चाहिए। चिदम्बरम और उनके बेटे के खिलाफ सीबीआई ने विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड द्वारा उनकी कंपनी 9एक्स मीडिया को मंजूरी मिलने को लेकर छापेमारी दिल्ली से चेन्नई तक की गई। मनी ट्रांसफर के केस भी सामने आ रहे हैं तभी तो ईडी ने उनके खिलाफ मनी लांड्रिंग का मामला दर्ज किया है।

SONI TYPING TUTOR

कुछ दिनों पहले एडवर्ड स्नोडेन के रहस्योद्घाटन की वजह से अमेरिका को दुनिया भर में शक की नजरों से देखा जा रहा है और कुछ देशों से उसके रिश्तों में फर्क भी पड़ा है , जिनमें ब्राजील व रूस हैं। अब नए रहस्योद्घाटन ने अमेरिका के करीबी मित्रों को भी नाराज कर दिया है। ब्रिटेन के अलावा लगभग सभी यूरोपीय देशों ने अमेरिकी जासूसी की तल्ख आलोचना की है। इनमें बेल्जियम और नीदरलैंड जैसे देश भी हैं , जो परंपरागत रूप से अमेरिकी मित्र हैं। इन देशों ने अमेरिकी जासूसों के विरुद्ध कार्रवाई करने की मांग की है , हालांकि यह देखना होगा कि ये देश क्या कर पाते हैं। कोई भी देश फिलहाल अमेरिका से आर्थिक लेन-देन पर पाबंदी या कटौती नहीं चाहेगा , क्योंकि अभी वैश्विक मंदी से उबरने के लिए अमेरिका से ज्यादा से ज्यादा आर्थिक सहयोग जरूरी है। अगर जासूसी से प्रभावित देश सिर्फ अपना विरोध दर्ज कराकर भी रह गए , तो इसका मतलब यह नहीं है कि अमेरिका पर इस विरोध की आंच नहीं आएगी। जो अमेरिका ने किया , उसे जायज ठहराना किसी भी तरह से मुमकिन नहीं है। जैसा कि जर्मनी की राष्ट्राध्यक्ष एंजेला मर्केल ने कहा है कि जो कुछ भी तकनीकी रूप से संभव है , उसे करना जायज नहीं ठहराया जा सकता। नई सूचना तकनीक ने अपने दुरुपयोग के भी रास्ते ईजाद किए हैं , लेकिन आखिरकार दुनिया रिश्तों पर चलती है और रिश्तों में सम्मान व परस्पर विश्वास बहुत जरूरी है। ऐसा नहीं है कि मित्र देशों को ही अमेरिका की जरूरत है , अमेरिका को भी मित्रों की जरूरत है। आखिरकार दुनिया में कई ऐसी समस्याएं हैं , जिन्हें सुलझाने के लिए अमेरिका को मित्रों का सहयोग चाहिए। अगर अमेरिका यह चाहता है कि उसके मित्र देश सिर्फ स्वार्थ या दबाव में ही सहयोग न करें , तो उसे जासूसी का यह जंजाल पूरी तरह खत्म करना होगा। ऐसा लग रहा है कि एनएसए पूरी दुनिया में एक स्वायत्त संगठन बन गया है , जिस पर किसी भी देश के , यहां तक कि अमेरिकी कानूनों का भी बस नहीं है। आतंकवाद से लड़ाई और अपनी सुरक्षा के नाम पर इस तरह की गतिविधियां चलाने का हक अमेरिकी सरकार को नहीं है। कुछ समस्या अमेरिका के अहंकार और अपनी सुरक्षा के प्रति कुछ अतिरिक्त सतर्कता की है , और कुछ समस्या तकनीक की भी है। सूचना तकनीक जितनी तेजी से विकसित हुई है , उसमें उसकी मर्यादाओं , नैतिकता और सदुपयोग-दुरुपयोग के बारे में सोचने का वक्त ही नहीं मिला है। जब एक समस्या सामने आती है , तब हम उस पर सोचते हैं और तब तक एक और समस्या खड़ी हो जाती है। साइबर वर्ल्ड में निजता और गोपनीयता की रक्षा कितना कठिन काम है , यह लगातार सामने आ रहा है। लेकिन यह तो निर्विवाद है कि सूचना से ज्यादा कीमती परस्पर विश्वास है , और इसकी कीमत पर सूचना हासिल करना महंगा सौदा है। सन 1947-48 से लेकर लगभग 1970 तक का वक्त भारतीय फिल्म संगीत का स्वर्णिम युग कहा जा सकता है। इस दौर ने फिल्मी गीतों को लोकप्रिय संगीत की एक अलग विधा की तरह पहचान दी। इस संगीत का स्तर या इनकी रचनाशीलता अक्सर उन फिल्मों से कहीं ज्यादा ऊंची थी , जिनके एक हिस्से की तरह यह संगीत होता था। मन्ना डे इसी दौर के गायक थे। भारत की आजादी के आसपास कई युवा कलाकार फिल्मी दुनिया में अपनी जगह बनाने आए थे , उन्हीं में से एक मन्ना डे थे। मन्ना डे की तालीम भारतीय शास्त्रीय संगीत में पुख्ता अंदाज में हुई थी और अगर वह चाहते , तो शास्त्रीय संगीत में नाम कमा सकते थे।

Exercise- 71

गुजरात चुनावों की वजह से संसद का शीतकालीन सत्र टाल कर केन्द्र की भाजपा सरकार ने स्वयं ही आलोचना को निमन्त्रण दिया है। इसे विपक्षी दल कांग्रेस पार्टी सत्ताधारी दल की कमजोरी के रूप में दिखाने का प्रयास कर रही है। हमने जिस लोकतान्त्रिक प्रणाली को अपनाया है उसमें संसद के सर्वोच्च होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं होना चाहिए क्योंकि केवल इसी में सत्ता पर काबिज सरकार की जवाब-तलबी की जा सकती है।

यह जवाबदेही जनता के उन चुने हुए प्रतिनिधियों के प्रति होती है जिन्हें आम जनता अपने वोट की ताकत पर चुनकर लोकसभा में भेजती है।

यह बेवजह नहीं है कि हमारे संविधान में केवल लोकसभा को ही किसी सरकार को बनाने या हटाने का अधिकार दिया गया है जबकि दूसरे सदन राज्यसभा , जिसे उच्च सदन कहा जाता है , को केवल सरकार की नीतियों की समालोचना करने का अधिकार ही प्राप्त है। अतः किसी भी चुनी हुई सरकार का यह पहला कर्तव्य बनता है कि वह लोकसभा को अपने कामकाज का पूरा हिसाब-किताब दे।

सवाल यह नहीं होता है कि सरकार में विपक्ष की आलाेचना सहने की क्षमता है या नहीं बल्कि असली सवाल यह होता है कि उसमें पांच वर्ष बाद होने वाले चुनावों से पूर्व ही बीच-बीच में जनता की अपेक्षाओं पर खरा उतरने की कूव्वत है या नहीं। यह कार्य संसद का सामना किये बिना किसी भी बड़ी से बड़ी जनसभा का आयोजन करके नहीं किया जा सकता है।

इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि संसद में सरकार की तरफ से जो भी जवाब दिया जायेगा वह पुख्ता तौर पर विश्वसनीय होगा, उसमें थोड़ा भी घालमेल होने पर सरकार के खिलाफ देश को गुमराह करने के लिए मानहानि का प्रस्ताव आ जायेगा जबकि जनसभाओं में किसी भी पार्टी का कोई भी नेता तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर पेश कर सकता है। विपक्ष का मुख्य आरोप है कि सरकार नोटबन्दी और जीएसटी लागू होने से हुए परिणामों के डर से संसद का शीतकालीन सत्र बुलाने से भाग रही है।

जाहिर है कि नोटबन्दी के परिणामों की सबूतों के साथ तसदीक केवल संसद के पटल पर ही हो सकती है क्योंकि सरकार जो भी आंकड़े पेश करेगी वे पुख्ता सबूतों के साथ ही होंगे। यह तर्क लोकतन्त्र में वाजिब कहा जायेगा कि जब पिछले वर्ष 8 नवम्बर को नोटबन्दी की घोषणा प्रधानमन्त्री ने की थी तो उसके एक सप्ताह बाद ही आयोजित संसद के सत्र में इस मुद्दे पर उनके बयान की मांग की गई थी मगर काफी शोर-शराबे के बाद ही यह काम हो सका था।

संसद में नोटबन्दी के बाद अपने नोट बदलवाने के लिए लाइनों में लगे 100 से अधिक व्यक्तियों की मृत्यु हो जाने पर उन्हें श्रद्धांजलि देने के लिए विपक्षी दल शोक प्रस्ताव भी लाना चाहते थे , यह भी संभव नहीं हो पाया था। इसके साथ ही जीएसटी लागू करने के लिए जब सरकार ने संसद में आधी रात को एक भव्य समारोह का आयोजन किया था तो भी कांग्रेस पार्टी ने इसका बहिष्कार किया था।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 72

जब देश में विगत वर्ष 8 नवम्बर को रात्रि आठ बजे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने एक हजार और पांच सौ रुपए के बड़े नोटों को बंद करने की घोषणा की थी तो देश के 80 प्रतिशत गरीब लोगों के मन में यह धारणा थी कि सरकार के इस कदम से व्याप्त सर्वत्र भ्रष्टाचार से मुक्ति मिलेगी और जिन लोगों ने कालाधन तिजोरियों में छुपा रखा है वह रातों-रात रद्दी हो जाएगा।

सरकार ने पचास दिन का समय आम लोगों को दिया कि वे अपने पुराने नोट नए नोटों में बदलवा लें मगर इसके लिए मारामारी न करें , सरकार धीरे–धीरे उनके सभी पुराने नोट इस अवधि में बदल देगी। वे कम से कम जरूरी नकदी बैंकों से बदलवा कर अपना रोजमर्रा का काम चलाएं। इस काम में थोड़ी दिक्कत लोगों को उठानी पड़ेगी मगर अर्थव्यवस्था की सफाई हो जाएगी।

जो कालाधन छिपाए बैठे हैं वे अपने अवैध नोटों को बदलवाने के लिए फर्जी लोगों का इस्तेमाल न करें। स्वयं प्रधानमंत्री ने अपील की कि अगर कोई धनवान व्यक्ति अपने नोट बदलवाने के लिए गरीबों को लालच दे तो उसके चक्कर में मत पड़िये और उसके पुराने नोट बदल कर उसे मत दी जिए।

इसके लिए जन-धन खातों की दो लाख रु. की सीमा भी निर्धारित कर दी गई। भारत के हर शहर की दरो-दीवार गवाह है कि आम लोगों ने सरकार की हर बात पर यकीन किया और पूरी ईमानदारी के साथ सैकड़ों मुश्किलें सहते हुए भी बैंकों के आगे लम्बी-लम्बी लाइनें लगाकर अपनी गाढ़ी कमाई के पुराने नोट पूरे इंतजार के साथ बदलें।

मध्यम व सामान्य वर्ग के परिवारों के लोगों ने अपने जीवनभर की कमाई बैंकाेंं में जमा कराकर सोचा अब संभवतः उनके दिन बदलेंगे और भ्रष्टाचार की कमाई से कोठियां खड़ी करने वालों को कानून के सामने पूरा हिसाब–किताब देना पड़ेगा कि उन्होंने नोट जमा करने के लिए कौन से तरीके अपनाए थे मगर अफसोस बैंकों में जितने भी पुराने नोट प्रचलन में थे या तिजोरियों में रखे हुए थे , सभी जमा हो गए और इस यकीन के साथ जमा हुए कि सारा का सारा धन वैध है।

रिजर्व बैंक पूरे नौ महीने तक ये आंकड़े देने से हिचकता रहा कि कितने पुराने नोट बैंकों में जमा हो चुके हैं। वह ये आंकड़े तो देता रहा कि उसने कितनी नई मुद्रा के नोट छाप कर बाजार में उतार दिए हैं। सरकार की तरफ से कहा गया कि ज्यादा से ज्यादा भुगतान इलैक्ट्रानिक माध्यम से करने के लिए जरूरी है कि कम से कम लेन–देन नकद रोकड़ा में हो।

छोटे-छोटे काम धंधा करने वालों से कहा जाने लगा कि वे रुपए का लेन –देन नकद की जगह इलैक्ट्रोनिक विधि से करें मगर भारत की इस हकीकत को भुला दिया गया कि इसका 80 प्रतिशत हिस्सा इंडिया नहीं बल्कि भारत है।

इस भारत के रहने वाले लोग गांवों या छोटे कस्बों से आते हैं और छोटा –मोटा रोजगार करके अपना जीवनयापन करते हैं। बुरे वक्तों के लिए दो पैसे जोड़ कर रखते हैं।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 73

मैं अतीत की बात कर रहा हूं तो आपको ले चलना चाहता हूं उस अतीत की ओर जो भारत और रूस की मैत्री का सुनहरा अतीत है। एक ऐसा अतीत, जिसकी डोर हम सफलतापूर्वक बढ़ा नहीं सके। अगर हम ऐसा कर पाते तो भारत-रूस मैत्री की फिजां कुछ और ही होती। बात 20 दिसम्बर 1955 की है। यह भारत के लिए ऐतिहासिक अवसर था।

ऐतिहासिक इसलिए कह रहा हूं कि उस दिन पूर्व सोवियत संघ के राष्ट्रपति बुल्गानिन और प्रधानमंत्री ख्रुश्चेव दोनों ही भारत आए थे। दोनों ने ही उस दिन यादगार भाषण दिए। तब भारत को आजाद हुए मात्र 8 वर्ष हुए थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा था : आज आपके महान राष्ट द्वारा हमारा जो स्वागत किया जा रहा है उसे हम इस रूप में नहीं लेते कि यह एक देश द्वारा दूसरे देशों के राष्टध्यक्षों के प्रति दिखाई गई एक औपचारिकता मात्र है।

हम सचमुच इसे इस रूप में नहीं लेते। हम भारत और सोवियत संघ की मैत्री को एक ऐसे अटूट बन्धन के रूप में लेते हैं जो बन्धन शाश्वत है और सदा के लिए है। यह महज औपचारिक स्वागत या रस्म अदायगी नहीं। धीरे-धीरे दिल्ली और मास्को की दूरियां कम होती जा रही हैं और हम ऐसा महसूस करते हैं कि हमारी मित्रता और एक-दूसरे के प्रति समझ दिनोंदिन प्रगाढ़ होती जा रही है।

हम यह मानते हैं कि जहां तक सरकारों और राजनीतिक दृष्टिकोण का प्रश्न है , हमारे सोचने के ढंग और हमारी कार्यशैली अलग-अलग हो सकती हैं , परन्तु इससे बढ़कर हम दोनों ही राष्ट मानवीय संवेदनाओं को ही सर्वोपरि मानते हैं। हम एक-दूसरे के पड़ोसी देश हैं और एक अच्छे पड़ोसी के क्या मायने होते हैं, हम दोनों देश अच्छी तरह समझते हैं।

हमारी मित्रता ऐसी होनी चाहिए और इसका विकास इस भांति होना चाहिए कि दोनों देशों के नागरिक इसका फायदा उठा सकें और सुख तथा दुःख में हम दोनों देश एक-दूसरे के काम आ सकें। हम दोनों देश न केवल पारस्परिक सहयोग और मित्रता के अर्थ ही समझते हैं , अपितु पूरे और खुले दिल से यह महसूस करते हैं कि हमारी मित्रता का सबसे व्यापक लक्ष्य है-विश्व शांति! भारत और रूस के पास एक महान विरासत है जिस प्रकार से हमने आजादी हासिल की है , दोनों ही देश विश्व शांति का महत्व इस परिप्रेक्ष्य में समझते हैं।

उसके बाद तो सोवियत संघ भारत का विश्वसनीय दोस्त बन गया। 1971 में भारत-पाक के दौरान जब अमेरिका ने अरब सागर की तरफ अपने सबसे बड़े नौवें बेड़े को रवाना कर दिया तो यह रूस ही था जिसने अमेरिका के जंगी बेड़े इंडीपेंडेंट को मुंहतोड़ जवाब देने के लिए अपने युद्धपोत को भेजा था।

रूस ने भारत में औद्योगिक संरचना की बुनियाद को स्थापित किया। एक-एक करके उसने स्टील कारखाने स्थापित किए। जब भारत ने कहा कि हम सेटेलाइट बनाएंगे तो अमेरिका ने हमारा मजाक उड़ाया था और कहा था कि जरूरी है आप धान उगाओ क्योंकि हिन्दुस्तानी भूखे हैं।

मसलन, उन्होंने बड़े स्तर पर सरकारी खर्च घटाने की मुहिम चलाई। इसका नतीजा यह हुआ कि वित्तीय घाटा अपेक्षित स्तर पर ही रहा। इससे यह भी उम्मीद मजबूत होती है कि अगले साल घाटा 4.8 प्रतिशत रखने का इरादा भी पूरा किया जाएगा। अगर ये आंकड़े धीरे-धीरे सामने आते हैं , तो निवेशकों का विश्वास लौटेगा और अर्थव्यवस्था पटरी पर आ सकेगी। निवेश अलाउंस बहाल करने का फैसला भी बड़े निवेशकों को आकर्षित करेगा। विदेशी निवेश को बढ़ाने में 'गार' के बारे में वित्त मंत्री का रवैया फायदेमंद होगा। इसके अलावा , कई छोटे-छोटे फैसले हैं, जो निवेशकों की दिक्कतें कम करेंगे। अगर ब्याज दरें कुछ और गिरती हैं , तो यह उम्मीद की जा सकती है कि निवेश बढ़ेगा और विकास की गति भी तेज होगी। कुछ बड़े कदम खेती के बारे में उठाने जरूरी थे, क्योंकि वित्त मंत्री ने खुद कहा कि खाद्य पदार्थों की महंगाई एक बड़ा मुद्दा है। बाकी क्षेत्रों में महंगाई काफी कम हुई है , लेकिन खाने-पीने की चीजों में यह बढ़ रही है। जैसा कि बार-बार कहा जा रहा है कि यह महंगाई मांग और पूर्ति के बीच असंतुलन से है , यानी इसको ठीक करने के लिए उत्पादन व वितरण बेहतर करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए। दूसरी हरित क्रांति की चर्चा तो कब से चल रही है , लेकिन देश के कई इलाके अभी पहली हरित क्रांति का ही इंतजार कर रहे हैं। इस बजट में खाद्य सुरक्षा को लागू करने के लिए 10,000 करोड़ रुपये का प्रावधान है और हमें उम्मीद करनी चाहिए कि वह ठीक से लागू हो, ताकि सचमुच वह 'गेम चेंजर' साबित हो सके। मध्यवर्ग का ध्यान मुख्यत: महंगाई और टैक्स दरों पर होता है। इन दिनों टैक्स दरों में बहुत बड़ा फर्क नहीं होता , लेकिन अगर हजार-दो हजार रुपये भी बचते हैं , तो मध्यवर्ग के लिए कुछ राहत होती है। इस बजट में थोड़ी-बहुत राहत तो है ही , इसके अलावा मकान के लिए मिलने वाले कर्ज पर भी छूट की सीमा बढ़ा दी गई है। वित्त मंत्री ने न सरकार की आय बढ़ाने की कोई बड़ी योजना दी है , न ही इस बजट में खर्च का कोई बहुत बड़ा मद घोषित किया है। उम्मीद यही है कि बजट की तमाम छोटी-छोटी बातों और कदमों का जोड़ अर्थव्यवस्था को मजबूत कर पाएगा। राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी की बांग्लादेश यात्रा ऐसे वक्त पर हुई है , जब बांग्लादेश एक ऐतिहासिक किस्म की उथल-पुथल से गुजर रहा है। पड़ोसी देश में एक ऐसा विशाल जन-आंदोलन खड़ा हो गया है , जिसे कट्टर तत्वों के खिलाफ किसी भी मुस्लिम देश में पहला जनतांत्रिक आंदोलन कहा जा सकता है। राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी को भी सुरक्षा वजहों से यह यात्रा रद्द करने की सलाह दी गई थी , लेकिन उन्होंने इसे नहीं माना। राष्ट्रपति ढाका के जिस होटल में रुके थे , उसके बाहर हुआ विस्फोट यह बताता है कि यात्रा में जोखिम कम नहीं था। बांग्लादेश में अपने भाषणों और इंटरव्यू में प्रणब मुखर्जी ने यह स्पष्ट कर दिया कि वह लोकतंत्र समर्थक और कट्टरवाद विरोधी ताकतों के साथ हैं। अब तक भारत ने बांग्लादेश के आंदोलन के बारे में तटस्थ रवैया अपना रखा था और इसकी आलोचना भी हुई। इस रवैये के समर्थकों का कहना है कि भारत का मुखर समर्थन लोकतंत्र विरोधी ताकतों को यह दुष्प्रचार करने का मौका देगा कि इस आंदोलन के पीछे भारत है। लेकिन प्रणब मुखर्जी की ऐसे वक्त पर यात्रा और उनके बयानों से अब भारत का पक्ष स्पष्ट हो गया है। प्रणब मुखर्जी की यात्रा रद्द न करने के पीछे तर्क यह भी हो सकता है कि संप्रग-2 के पास बांग्लादेश के साथ कुछ जरूरी कामकाज निपटाने के लिए अब बहुत कम वक्त बचा है,

यह काफी गंभीर बीमारी है, लेकिन यह वायरस भी सिर्फ मुर्गियों के संपर्क में आने वाले लोगों को ही संक्रमित करता है। वैज्ञानिक मानते हैं कि अगर यह वायरस अपनी जेनेटिक संरचना में पांच परिवर्तन कर ले, तो यह इंसानों से इंसानों में फैलने के काबिल हो जाएगा। एक परिवर्तन तो वह कर भी चुका है। सौभाग्य से अभी तक बर्ड फ्लू वायरस के ऐसा करने के उदाहरण नहीं मिलते , सिवाय चीन की उस प्रयोगशाला के। रासायनिक हथियारों के साथ जैव हथियारों के इस्तेमाल पर 1972 में एक अंतरराष्ट्रीय समझौते के तहत पाबंदी लगा दी गई थी , हालांकि चोरी-छिपे कुछ देश ऐसे हथियारों के साथ प्रयोग करते रहे थे। चेचक के अलावा जितनी भी बीमारियों के सूक्ष्मजीवियों को जैव हथियारों के लिए आजमाया गया था, वे सभी ऐसे थे, जो जानवरों में भी फैलते थे। ऐसा इसलिए था कि ऐसे वायरस या बैक्टीरिया के साथ प्रयोग करना आसान था। ऐसे प्रयोगों से दुर्घटनाएं भी हुईं। ऐसी सबसे बड़ी दुर्घटना तत्कालीन सोवियत संघ में घटी थी , जब 1979 में एक जैव हथियार प्रयोगशाला से गलती से एंथ्रेक्स के वायरस बाहर आ गए थे और उनसे 200 किलोमीटर के दायरे में भेड़ों को यह संक्रमण हो गया था। यानी प्रयोगशाला से वायरस व बैक्टीरिया निकल सकते हैं और एक बार बाहर निकलकर वे बेकाबू हो सकते हैं। अफवाह तो यह भी उड़ी थी कि एड्स का वायरस ऐसी ही किसी दुर्घटना का नतीजा था , लेकिन सबूत बताते हैं कि वह अफवाह ही थी। जेनेटिक विज्ञान के फायदे बहुत बड़े हैं , आने वाले वक्त में तो शायद यह चिकित्सा विज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष बन सकता है , लेकिन इसके खतरे भी कम नहीं हैं। हो सकता है कि देवताओं और राक्षसों की जेनेटिक संरचना में शायद थोड़ा-सा फर्क हो , लेकिन इस हेराफेरी का नतीजा कितना बड़ा होगा।

किसी चुनाव के नतीजे के बारे में भविष्यवाणी करना काफी मुश्किल होता है , लेकिन कर्नाटक के विधानसभा चुनावों के बारे में यह कहा जा सकता है कि उसके नतीजे पहले ही तय थे। यह बहुत पहले ही सबको पता चल गया था कि भाजपा इन चुनावों में हारने वाली है, सिर्फ यह तय होना था कि हार कितनी बड़ी होगी। अब नतीजे आ गए हैं और यह भी पता चल गया है कि मतदाता इन दिनों बख्शने के मूड में नहीं हैं। भाजपा को बहुमत तो छोड़िए, दूसरे नंबर के लिए भी संघर्ष करना पड़ रहा है और कांग्रेस को पूर्ण बहुमत मिल गया है। ऐसा नहीं है कि कांग्रेस ने कोई ऐसी करामात की है कि जिससे खुश होकर मतदाता ने उसे बहुमत दे दिया है। यह जनादेश भाजपा के भ्रष्टाचार , कुशासन और अंदरूनी झगड़ों के खिलाफ है। यह भी आजकल देखने में आ रहा है कि जनता कम से कम राज्यों में तो किसी एक पार्टी को पूर्ण बहुमत देती है , ताकि स्थिर सरकार बने और अगले चुनावों में उसकी जवाबदेही तय हो सके। जिन राज्यों में अच्छा और अपेक्षाकृत साफ-सुथरा प्रशासन होता है, वहां सत्तारूढ़ पार्टी के फिर से सत्ता में आने की पूरी-पूरी संभावना होती है , वरना जनता उसे अर्श से फर्श पर ला देती है। भाजपा 2014 के लोकसभा चुनावों में भ्रष्टाचार और कुशासन को मुख्य मुद्दे बनाना चाहती है और वह इन नतीजों से यह निष्कर्ष निकाल सकती है कि ये मुद्दे प्रभावी हो सकते हैं। लेकिन भाजपा को यह भी याद रखना होगा कि पिछले दिनों कम से कम दो विधानसभा चुनावों में , पहले उत्तराखंड और अब कर्नाटक में, वह इन्हीं मुद्दों पर चुनाव हारी है।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी और राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड का बहुत देरी से घटनास्थल पर पहुंचना उसी गलती की ओर इशारा करता है, जो मुंबई के आतंकवादी हमले के दौरान हुई थी। वहां सुरक्षा गार्ड के लोग जब तक पहुंचे , हालात बहुत ज्यादा खराब हो चुके थे। हालांकि , बोधगया में हालात मुंबई जैसे नहीं थे , लेकिन हम यह जानते हैं कि बम विस्फोट के बाद घटनास्थल पर पहुंचने में देरी के कारण कई महत्वपूर्ण सबूतों से हाथ धोना पड़ सकता है। तब भी इस बात की चर्चा लंबे समय तक होती रही थी कि इनकी तैनाती देश भर में कुछ इस तरह से की जाए कि कहीं भी पहुंचने में उन्हें ज्यादा समय न लगे। अब लगता है कि यह सिर्फ चर्चा भर थी। ऐसा लगता है कि सरकारी तंत्र का एक बड़ा हिस्सा आतंकवाद को मात देने की प्रतिबद्धता के साथ नहीं , बल्कि डयूटी निभाने की मानसिकता के साथ काम कर रहा है। यही वजह है कि जहां एकाधिक आतंकी हमलों के बाद ही कुछ देशों ने अपनी सुरक्षा-व्यवस्था को लगभग फौलादी बना लिया , वहीं हमारे यहां आतंकी घटनाएं हर कुछ समय बाद लगातार घटती रहती हैं। इससे भी बड़ी दिक्कत यह है कि ऐसी हर घटना के तुरंत बाद उसका राजनीतिक लाभ लेने की होड़ शुरू हो जाती है। जांच एजेंसियां अभी किसी नतीजे पर पहुंचें , इससे पहले ही बयानबाजी और आरोप-प्रत्यारोप शुरू हो जाते हैं। क्या हम अमेरिका में हुए 11 सितंबर के आतंकवादी हमले से सबक नहीं ले सकते, जिसके बाद वहां के सभी राजनीतिक दल एक स्वर में बोलने लग पड़े थे ? शायद हमारी राजनीतिक समस्या भी एक बड़ा कारण है कि सरकारी तंत्र की प्रतिबद्धता बहुत मजबूत नहीं है। गुडगांव के पब में एक पार्टी में सौ से ज्यादा किशोरों का हुक्का और शराब पीते पकड़े जाना सनसनीखेज खबर जरूर है , लेकिन यह शायद कोई असाधारण या दुर्लभ घटना नहीं है। यह एक खुला रहस्य है कि सिर्फ दिल्ली या इसके आसपास ही नहीं, देश के तमाम शहरों के पबों में किशोरों के लिए शराब और धूम्रपान सुलभ हो जाता है , खासकर अगर ये बच्चे बड़ी तादाद में हों या 'पार्टी' कर रहे हों। ऐसे कुछ होटल या पब होंगे , जो नियमों का सख्ती से पालन करते होंगे, लेकिन ऐसों की तादाद भी कम नहीं है, जो मुनाफे के लिए ऐसे बहुत सारे नियमों को ताक पर रखने के लिए तैयार हो जाते हैं। इक्का-दुक्का किशोर को तो ऐसी जगहों पर शायद प्रवेश न मिले, लेकिन पार्टियों में बड़ी तादाद में बच्चे होते हैं और मुनाफा भी बड़ा होता है , इसलिए लालच भी बड़ा होता है। चोरी-छिपे कभी-कभी शराब पीने या फिर धूम्रपान की शरारत तो हर वक्त होती रही है , लेकिन नए दौर में शराब पीने को नया ग्लैमर और स्वीकार्यता मिल गई है , इसलिए नौजवानों और यहां तक कि किशोरों में शराबखोरी ज्यादा बढ़ गई है। आधुनिक संस्कृति में शराब की पार्टी को जैसा महत्व मिल गया है , उसमें किशोरावस्था में नियमित रूप से शराब पीने वाले बच्चों की तादाद बढ़ने लगी है और यह खतरनाक बात है। आधुनिक वक्त में एक-एक करके लगभग बाकी सारे नशों को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया है , लेकिन शराब पीना पश्चिमी संस्कृति के दबाव में बढ़ता जा रहा है। पश्चिमी संस्कृति में शराब सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से एक मान्य नशा है , इसलिए वहां इसे लगभग अहानिकारक मान लिया गया है। प्रचार यह होता है कि भांग, गांजा या कोकीन जैसे अन्य नशे इसलिए खतरनाक हैं कि ज्यादा घातक नशीले पदार्थों की ओर ले जाते हैं, लेकिन प्रतिष्ठित येल यूनिवर्सिटी के एक अध्ययन का कहना है

अलबत्ता पार्टियों के लिए इसका चुनावी उपयोग तो अभी बना हुआ है। 2014 के आम चुनाव पर इस दांव का कितना असर होगा, यह जानने के लिए अभी कुछ इंतजार करना होगा।

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने गुजरात पुलिस द्वारा एक महिला की जासूसी के मामले की जांच के लिए एक कमीशन बनाने का प्रस्ताव मंजूर कर लिया है। सुप्रीम कोर्ट के किसी रिटायर्ड जज की अगुवाई में बनने वाला यह आयोग नरेंद्र मोदी के सबसे खास अमित शाह और उन पुलिस अधिकारियों से पूछताछ कर सकेगा , जिनके नाम इस जासूसी के कांड में आए हैं। जैसा कि तय था भारतीय जनता पार्टी ने इसे राजनीतिक षड़यंत्र और मोदी की लोकप्रियता से घबराकर की गई कार्रवाई बताया है , लेकिन यह भी सच है कि अगर नरेंद्र मोदी नहीं , तो उनके विश्वसनीय सिपहसालारों के लिए इस जांच से गंभीर मुश्किलें पैदा हो सकती हैं। भाजपा की आपत्ति यह है कि गुजरात सरकार इस मामले की जांच के लिए एक कमीशन बना ही चुकी है , ऐसे में केंद्र सरकार क्यों एक और कमीशन बना रही है , यह राज्य के मामले में दखल है। लेकिन इसी बीच इस मामले का रहस्योद्घाटन करने वाली वेबसाइट ने कुछ और टेप जारी किए हैं , जिनसे पता चलता है कि उस महिला की जासूसी गुजरात में ही नहीं, बल्कि राज्य के बाहर भी की गई थी। यह भी पता चलता है कि गुजरात सरकार के गृह विभाग के अफसरों ने कर्नाटक की तत्कालीन येदियुरप्पा सरकार से बेंगलुरु में उस महिला पर नजर रखने और उसके फोन टैप करने के लिए सहयोग भी मांगा था। अब यह मामला एक राज्य तक सीमित नहीं है, इसलिए इसमें केंद्र सरकार हस्तक्षेप कर सकती है। बेशक इस मामले की जांच में केंद्र सरकार की राजनीतिक दिलचस्पी है, क्योंकि इसमें भाजपा की ओर से प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी फंस रहे हैं। लेकिन इसके राजनीतिक पक्ष को छोड़ दें , तो भी हम पाते हैं कि जो आरोप लगे हैं , वे अत्यंत गंभीर हैं कि एक राज्य के गृह मंत्री और समूचा पुलिस अमला अनधिकृत रूप से एक महिला की जासूसी कर रहा था , उस पर लगातार नजर बनाए हुए था और उसके फोन से होने वाली सारी बातचीत सुन रहा था , जिसमें उसकी अपने भावी पति से होने वाली बातचीत भी शामिल है। किसी के निजी जीवन में सरकारी साधनों के जरिये ऐसी ताक-झांक अत्यंत गंभीर मसला है। अगर यह करवाने वाला व्यक्ति किसी बड़े सांविधानिक पद पर बैठा हो, तब तो ये आरोप ज्यादा गंभीर हो जाते हैं। लेकिन भारत में फिलहाल जैसा माहौल है, उसमें निष्पक्षता की बात करने की कोई जगह ही नहीं है। अगर मोदी के खिलाफ आरोप साबित भी हो गए , तो उनके पक्षधर उन्हें दोषी नहीं मानेंगे या इस मामले की गंभीरता को समझने से इनकार कर देंगे। सन 2014 के आम चुनावों के मद्देनजर माहौल इतना राजनीतिक हो गया है कि कोई भी दूसरे पक्ष की बात सुनने को तैयार नहीं है। यह सही है कि भारतीय गणतंत्र की संस्थाएं इतनी मजबूत हैं कि राजनीतिक हस्तक्षेप , भ्रष्टाचार और अडंगेबाजी के बावजूद अक्सर न्याय का पलड़ा भारी रहता है। हो सकता है कि इस मामले में भी दोषियों को देर-सवेर न्याय का सामना करने पर मजबूर होना पड़े, लेकिन फिलहाल वास्तविकता यह है कि अगर केंद्र सरकार को मोदी से लड़ना है, तो वह राजनीतिक लड़ाई ही होगी। नागरिकों के बुनियादी अधिकार , सरकारी साधनों का दुरुपयोग , व्यक्ति का सम्मान जैसे मुद्दे इस मामले से जुड़े हैं,

Exercise- 78

ऐसा किसी दूसरे व्यक्ति के सामने न आने पर सुभाष ने स्वयं कांग्रेस अध्यक्ष बने रहना चाहा। लेकिन गान्धी उन्हें अध्यक्ष पद से हटाना चाहते थे। गान्धी ने अध्यक्ष पद के लिये सीतारमैया को चुना। कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने गान्धी को खत लिखकर साझे में खेती होती थी। कुछ लेन-देन में भी साझा था। एक को दूसरे पर अटल विश्वास था।

जुम्मन जब हज करने गये थे , तब अपना घर अलगू को सौंप गये थे , और अलगू जब कभी बाहर जाते, तो जुम्मन पर अपना घर छोड़ देते थे। उनमें न खाना-पाना का व्यवहार था , न धर्म का नाता केवल विचार मिलते थे। मित्रता का मूलमंत्र भी यही है। इस मित्रता का जन्म उसी समय हुआ , जब दोनों मित्र बालक ही थे, और जुम्मन के पूज्य पिता, जुमराती, उन्हें शिक्षा प्रदान करते थे। अलगू ने गुरू जी की बहुत सेवा की थी, खूब प्याले धोये।

उनका हुक्का एक क्षण के लिए भी विश्राम न लेने पाता था , क्योंकि प्रत्येक चिलम अलगू को आध घंटे तक किताबों से अलग कर देती थी। अलगू के पिता पुराने विचारों के मनुष्य थे। उन्हें शिक्षा की अपेक्षा गुरु की सेवा पर अधिक विश्वास था। वह कहते थे कि विद्या पढ़ने से नहीं आती जो कुछ होता है, गुरु के आशीर्वाद से। बस , गुरु जी की कृपा-दृष्टि चाहिए। अतएव यदि अलगू पर जुमराती शेख के आशीर्वाद अथवा सत्संग का कुछ फल न हुआ , तो यह मानकर संतोष कर लेना कि विद्योपार्जन में मैंने यथाशक्ति कोई बात उठा नहीं रखी , विद्या उसके भाग्य ही में न थी , तो कैसे आती?

मगर जुमराती शेख स्वयं आशीर्वाद के कायल न थे। उन्हें अपने सोटे पर अधिक भरोसा था , और उसी सोटे के प्रताप से आस-पास के गाँवों में जुम्मन की पूजा होती थी। उनके लिखे हुए रेहननामे या बैनामे पर कचहरी का मुहर्रिर भी कदम न उठा सकता था। हल्के का डाकिया , कांस्टेबिल और तहसील का चपरासी--सब उनकी कृपा की आकांक्षा रखते थे। अतएव अलगू का मान उनके धन के कारण था, तो जुम्मन शेख अपनी अनमोल विद्या से ही सबके आदरपात्र बने थे।

जुम्मन शेख की एक बूढी खाला (मौसी) थी। उसके पास कुछ थोड़ी-सी मिलकियत थी परन्तु उसके निकट संबंधियों में कोई न था। जुम्मन ने लम्बे-चौड़े वादे करके वह मिलकियत अपने नाम लिखवा ली थी। जब तक दानपत्र की रजिस्ट्री न हुई थी , तब तक खालाजान का खूब आदर-सत्कार किया गया उन्हें खूब स्वादिष्ट पदार्थ खिलाये गये। हलवे-पुलाव की वर्षा- सी की गयी पर रजिस्ट्री की मोहर ने इन खातिरदारियों पर भी मानों मुहर लगा दी।

जुम्मन की पत्नी करीमन रोटियों के साथ कड़वी बातों के कुछ तेज , तीखे सालन भी देने लगी। जुम्मन शेख भी निठुर हो गये। अब बेचारी खालाजान को प्रायः नित्य ही ऐसी बातें सुननी पड़ती थी। बुढ़िया न जाने कब तक जियेगी। दो-तीन बीघे ऊसर क्या दे दिया , मानों मोल ले लिया है। बघारी दाल के बिना रोटियाँ नहीं उतरतीं।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 79

पंजाब में किसानों के कर्जे माफ करने को लेकर पिछले तीन माह से जमकर सियासत हो रही थी। उत्तर प्रदेश की योगी आदित्यनाथ सरकार द्वारा कर्ज माफी के ऐलान के बाद कई राज्यों से किसान ऋण माफी की मांग उठने लगी थी। दबाव में आकर महाराष्ट्र की फडऩवीस सरकार को भी कर्ज माफी की घोषणा करनी पड़ी।

अब पंजाब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिन्द्र सिंह ने सत्ता सम्भालने के बाद थोड़ा वक्त जरूर लिया लेकिन किसानों का दो लाख तक का कर्ज माफ कर उन्होंने बड़ा सियासी शॉट मारा है। कैप्टन ने उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र से न केवल दोगुना कर्ज माफ किया है अपितु कर्ज माफी को मुद्दा बनाकर कांग्रेस सरकार को घेरने की कोशिश कर रहे विपक्षी दलों को करारा जवाब भी दे दिया है।

विपक्ष भले ही इसे कैप्टन की नौटंकी करार दे कि उन्होंने सदन में 5 एकड़ तक भूमि वाले किसानों का पूरा कर्ज माफी का ऐलान किया था लेकिन कर्ज सिर्फ 2 लाख रुपए का ही माफ किया।

कैप्टन अमरिन्द्र सरकार ने कांग्रेस का चुनावी वादा पूरा कर दिया है क्योंकि कैप्टन साहब ने तो चुनाव प्रचार के दौरान ही किसानों से ऋण माफी के फार्म ले लिए थे। उत्तर प्रदेश , महाराष्ट्र और पंजाब के बाद अब हरियाणा , राजस्थान और अन्य राज्यों के मुख्यमंत्रियों पर दबाव बढ़ गया है। हरियाणा के 15 लाख किसानों में से साढ़े 13 लाख किसान लगभग 54 हजार करोड़ के ऋण के बोझ तले दबे हुए हैं।

हरियाणा के विपक्षी दल अब किसानों के कर्ज माफ करने के लिए दबाव बढ़ाएंगे। सवाल सबके सामने है कि यह कर्ज माफी का सिलसिला कब जाकर रुकेगा। उत्तर प्रदेश में किसानों की कर्ज माफी के लिए योगी सरकार केन्द्र सरकार से 16 हजार करोड़ का कर्ज लेगी जबकि 20 हजार करोड़ अलग-अलग विभागों का बजट काट कर इक किया जाएगा। योगी सरकार को कुल 36 हजार करोड़ की जरूरत है।

महाराष्ट्र सरकार को किसानों की कर्ज माफी की मांग के आगे झुकना पड़ा। छोटे एवं सीमांत किसानों की ऋण माफी के चलते महाराष्ट्र पर 30 हजार करोड़ का अतिरिक्त बोझ सरकारी खजाने पर पड़ेगा। उसकी भरपाई कैसे होगी इस बारे में फिलहाल कुछ स्पष्ट नहीं है। कर्ज माफी की घोषणाएं किसानों को फौरी राहत देने वाली हैं , राजनीतिक तौर पर भी ऐसी घोषणाएं लाभकारी हैं लेकिन यह वह रास्ता नहीं है जिस पर चलकर किसानों के संकट का सही तरह से समाधान किया जा सकता है।

अब मुसीबत उन राज्यों के लिए आ खड़ी हुई है जहां चुनाव होने वाले हैं। समस्या यह भी है कि किसानों के कर्ज माफी का मुद्दा अब सियासी दलों को सत्ता तक पहुंचने का शार्टकटरास्ते के तौर पर दिखने लगा है। इसकी शुरूआत भी तो राजनीतिक दलों ने ही की है। चुनाव से पहले राजनीतिक दल लोक लुभावने वायदे करते हैं। इन्हीं वायदों के चलते आग में घी डलता रहा और जब आग भड़कती है तब भी सियासत होती है।

SONI TYPING TUTOR

लेकिन ऐसा कोई सबक नहीं सीखा गया। 1993 के धमाकों के दोषियों को सजा मिलना इस प्रकरण का अंत नहीं है, क्योंकि आज भी परिस्थितियां वैसी ही हैं। हमारे तंत्र में कोई सुधार नहीं आया है। अगर हम इस प्रकरण के मूल मुद्दे को देखें , तो वह अपराध और भ्रष्टाचार का हमारे समाज में स्वीकृत ही नहीं, बल्कि सम्मानित होना है। जब तक हथियार और पैसा हमारे समाज में सम्मान और रुतबे के प्रतीक होंगे, तब तक हमारे समाज पर इस तरह के भयावह हादसों का खतरा मंडराता रहेगा। कई बिगड़े, लापरवाह संजय दत्त बनते रहेंगे। कानून ने तकरीबन 20 साल बाद धमाकों के इन दोषियों को लगभग अंतिम रूप से सजा तो दे दी, लेकिन इस दौरान हमारी सरकार और समाज ने कुछ नहीं सीखा।

आधुनिकीकरण और औद्योगीकरण के बाद इंसान की बनाने और नष्ट करने, दोनों की क्षमताएं तेजी से बढ़ी हैं। इससे दुनिया में तेजी से बदलाव आए हैं। एक बदलाव यह आया है कि कई पशु-पक्षियों और वनस्पतियों की प्रजातियां या तो खत्म हो रही हैं या खत्म होने के कगार पर हैं। ऐसे में पर्यावरण और प्रजातियों के संरक्षण के लिए भी मुहिम चल रही है, लेकिन कुछ लोग यह सवाल भी उठा रहे हैं कि क्या प्रजातियों का विलुप्त होना भी स्वाभाविक और प्राकृतिक घटना नहीं है। एक विज्ञान लेखक का कहना है कि प्रजातियों का विलुप्त होना सिर्फ आधुनिक समय की घटना नहीं है। जब से धरती पर जीवन आया है, उसके बाद से ही यह जारी है। कम से कम पांच बार धरती पर ऐसा हुआ है कि लगभग सारे जीव खत्म हो गए हैं। लाखों साल पहले धरती पर डायनासॉर रहते थे। कई मायनों में डायनासॉर का विनाश ठीक ही था। अगर हमारे वक्त में डायनासॉर होते, तो क्या होता, यह 'जुरासिक पार्क' या ऐसी ही फिल्मों से पता चलता है। शायद तब इंसान ही न होता , क्योंकि डायनासॉर के राज में छोटी प्रजातियों का पनपना बहुत मुश्किल होता। प्रजातियां धरती पर आती-जाती रहती हैं। धरती की परिस्थितियों के जो अनुकूल होती हैं, वे टिक जाती हैं, जो अपना अनुकूलन बदलती परिस्थितियों में नहीं कर पातीं, वे नष्ट हो जाती हैं। ज्यादातर प्रजातियों का जीवनकाल कुछ लाख से लेकर कुछ करोड़ तक होता है। कुछ प्रजातियां बने और बचे रहने के लिए ज्यादा मुफीद होती हैं, वे करोड़ों साल से चली आ रही हैं। सवाल है कि जीवों को बचाने के पीछे कुछ ठोस वैज्ञानिक आधार हैं या यह सिर्फ रूमानियत है।
आधुनिकीकरण के साथ ही एक रोमांटिसिज्म का आंदोलन भी चला , जिसमें प्राकृतिक और सरल-सादे जीवन को आदर्श माना गया था। महात्मा गांधी भी ऐसे विचारों से काफी प्रभावित रहे , हालांकि जवाहरलाल नेहरू इससे ज्यादा सहमत नहीं थे और अंबेडकर तो आलोचक ही थे। लेकिन यह भी सच है कि आधुनिक समय में प्रजातियों का विनाश बहुत तेजी से हुआ है और इससे प्राकृतिक संतुलन बनने की बजाय बिगड़ रहा है। और अभी जो विनाश हुआ है, वह प्राकृतिक वजहों से नहीं, इंसानी करतूतों से हुआ है। लेकिन फिर सवाल उठता है कि क्या इंसान भी प्रकृति का हिस्सा नहीं है ? उसके कार्यकलापों को प्राकृतिक घटनाचक्र का हिस्सा क्यों न माना जाए? यह सही है कि पुरानी प्रजातियों का खत्म होना और नई प्रजातियों का जन्म लेना प्राकृतिक विकास के लिए जरूरी है, लेकिन अंधाधुंध विनाश से ज्यादा समस्याएं पैदा होती हैं। तमाम जीव एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं और इनका जीवन एक-दूसरे से जुड़ा होता है।

Exercise- 81

सशस्त्र सैनिकों की तरह सेना का कोई अहिंसात्मक कार्य उनका यह कर्तव्य होगा कि वे विजय दिलाने वाले समुदायों को एकजुट करें जिसमें शांति का प्रसार, तथा ऐसी गतिविधियों का समावेश हो जो किसी भी व्यक्ति को उसके चर्च अथवा खंड में संपर्क बनाए रखते हुए अपने साथ मिला लें।

इस प्रकार की सेना को किसी भी आपात स्थिति से लड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए तथा भीड़ के क्रोध को शांत करने के लिए उसके पास मरने के लिए सैनिकों की पर्याप्त नफरी भी होनी चाहिये। प्रत्येक गांव तथा शहर तक भवनों के प्रत्येक ब्लाॅक में संगठित किया जा सकता है यदि अहिंसात्मक समाज पर हमला किया जाता है तब अहिंसा के दो मार्ग खुलते हैं।

अधिकार पाने के लिए हमलावर से सहयोग न करें बल्कि समर्पण करने की अपेक्षा मृत्यु को गले लगाना पसंद करें। दूसरा तरीका होगा ऐसी जनता द्वारा अहिंसक प्रतिरोध करना हो सकता है जिन्हें अहिंसक तरीके से प्रशिक्षित किया गया हो...इस अप्रत्याशित प्रदर्शन की अनंत राहों पर आदमियों और महिलाओं को हमलावर की इच्छा लिए आत्मसमर्पण करने की बजाए आसानी से मरना अच्छा लगता है और उसे तथा उसकी सैनिक बहादुरी के समक्ष पिघलना जरूर पड़ता है।

ऐसे किसी देश अथवा समूह जिसने अंहिसा को अपनी अंतिम नीति बना लिया है उसे परमाणु बम भी अपना दास नहीं बना सकता है। उस देश में अहिंसा का स्तर खुशी-खुशी गुजरता है तब वह प्राकृतिक तौर पर इतना अधिक बढ़ जाता है कि उसे सार्वभोमिक आदर मिलने लगता है।

इन विचारों के अनुरूप जब नाजी जर्मनी द्वारा अंग्रेजों के द्वीपों पर किए गए हमले आसन्न दिखाई दिए तब गांधी जी ने अंग्रेजों को शांति और युद्ध में अहिंसा की निम्नलिखित नीति का अनुसरण करने को कहा। मैं आपसे हथियार रखने के लिए कहना पसंद करूंगा क्योंकि ये आपको अथवा मानवता को बचाने में बेकार हैं।

आपको हिटलर और सिगनोर मुसोलिनी को आमत्रित करना होगा कि उन्हें देशों से जो कुछ चाहिए आप उन्हें अपना अधिकार कहते हैं। यदि इन सज्जनों को अपने घर पर रहने का चयन करना है तब आपको उन्हें खाली करना होगा। यदि वे तुम्हें आसानी से रास्ता नहीं देते हैं तब आप अपने आपको, पुरूषों को महिलाओं को और बच्चों की बलि देने की अनुमति देंगे किंतु अपनी निष्ठा के प्रति झुकने से इंकार करेंगे।

युद्ध के बाद दिए गए एक साक्षात्कार में उन्होंने इससे भी आगे एक विचार का प्रस्तुतीकरण किया। यहूदियों को अपने लिए स्वयं कसाई का चाकू दे देना चाहिए था। उन्हें अपने आप को समुद्री चट्टानों से समुद्र के अंदर फैंक देना चाहिए था। फिर भी गांधी जी को पता था कि इस प्रकार के अहिंसा के स्तर को अटूट विश्वास और साहस की जरूरत होगी और इसके लिए उसने महसूस कर लिया था कि यह हर किसी के पास नहीं होता है।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 82

दुश्मनों के कुछ सैनिक मारे जाएंगे और यह सैनिक नजरिये से सोचने वाले के लिए कोई बड़ी बात नहीं है। इसी वजह से ऐसे मौकों पर जो उग्र राष्ट्रभक्ति का प्रदर्शन करने वाले जोशीले बयान दिए जाते हैं, वे यथार्थ से दूर होते हैं। यह सही है कि अपने जवानों की मौत को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए, लेकिन भारत सरकार को जवाबी रणनीति सोच समझकर चलनी होगी। सबसे जरूरी यह है कि भारत यह समझे कि भारतीय उपमहाद्वीप में अमेरिका के जाने के बाद उसे ही अपनी रक्षा करनी होगी और अपने सामरिक हित भी खुद ही देखने होंगे।इसके लिए सीधी सैनिक कार्रवाइयां भले ही कोई विकल्प न हों, लेकिन हमें पाकिस्तानी सेना को इस तरह से चोट पहुंचाने की रणनीति बनानी पड़ेगी कि वह रक्षात्मक हो जाए। चीन में इतनी समझदारी है कि वह भारत के खिलाफ एक हद से ज्यादा आगे नहीं बढ़ेगा , लेकिन वह पाकिस्तान को इसके लिए उकसा सकता है। पाकिस्तानी और चीनी सेना पर दबाव बनाए बिना दोनों देशों की सरकारों से शांति वार्ताएं कभी कामयाब नहीं होंगी। यह एक ऐसा दौर है , जब भारतीय हॉकी से हम किसी अच्छी खबर की अपेक्षा नहीं करते। अगर कोई खबर आती है , तो वह हॉकी के पुनरुत्थान की संभावनाओं को क्षीण करने वाली ही होती है। ऐसे में, भारतीय लड़कियों का जूनियर विश्व कप में कांस्य पदक जीतना एक सुखद आश्चर्य है। यह पहली बार है कि भारतीय लड़कियों ने विश्व हॉकी फेडरेशन की कोई प्रतियोगिता जीती हो। इसके पहले सीनियर टीम ने वर्ष 2002 में राष्ट्रमंडल खेलों में स्वर्ण पदक जीता था। पुरुष टीम ने भी 1975 में विश्व कप जीता था , उसके बाद उसे कोई बड़ी सफलता हाथ नहीं लगी है। इससे इन लड़कियों की उपलब्धि का महत्व समझा जा सकता है। यह जीत इस मायने में भी महत्वपूर्ण है कि इस टूर्नामेंट के पहले कोई उम्मीद भी नहीं कर रहा था कि यह टीम कोई उल्लेखनीय प्रदर्शन कर पाएगी। पहले ही मैच में ऑस्ट्रेलिया से 6-1 से हारने के बाद यह धारणा और भी मजबूत हो गई थी। लेकिन पहली हार के बाद भारतीय टीम ने गजब का जुझारूपन दिखाया और वह लगातार बेहतर प्रदर्शन करती गई। भारत में हॉकी लोकप्रिय है , लेकिन हॉकी का अर्थ अब भी पुरुष हॉकी ही होता है। पुरुष हॉकी की हालत भी संतोषजनक तो नहीं है , लेकिन महिला हॉकी को तो उससे कई गुना ज्यादा उपेक्षा झेलनी होती है। शाहरुख खान की फिल्म चक दे इंडिया में महिला हॉकी टीम के संघर्षों को दिखाया गया है , लेकिन जितनी लोकप्रियता इस फिल्म को मिली , उतनी वास्तव में महिला हॉकी को कभी नहीं मिली। पिछले कुछ वर्षों से तो महिला हॉकी विवादों में ही घिरती रही है। पहले आर्थिक गड़बड़ियों के आरोप में फंसे टीम स्पांसर से स्पांसरशिप छीन ली गई, जिससे पहले ही आर्थिक संकटों में घिरी महिला हॉकी की आर्थिक स्थिति और कमजोर हो गई। पिछले राष्ट्रमंडल खेलों के पहले मुख्य कोच एम के कौशिक पर कुछ खिलाड़ियों ने यौन प्रताड़ना का आरोप लगाया और उन्हें हटना पड़ा। कौशिक बाद में बेदाग साबित हुए , लेकिन इससे महिला हॉकी को काफी धक्का लगा। इसलिए नए कोच नील हावगुड के सामने बड़ी चुनौतियां थीं। हावगुड ने एक बड़ा कदम यह उठाया कि कई जूनियर खिलाड़ियों को सीनियर टीम में भी जगह दी। इस जूनियर टीम की आधे से ज्यादा लड़कियां सीनियर टीम में भी खेलती हैं। सीनियर स्तर पर लगातार खेलने से उन्हें ज्यादा ताकतवर और अनुभवी प्रतिद्वंद्वियों से खेलना पड़ा और इससे उनका स्तर बेहतर होता चला गया। इस टूर्नामेंट में सफलता से यह दिखाई देता है कि नए कोच का यह प्रयोग सफल रहा। ऐसा नहीं है

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

राजनीतिक दुश्मनी के बावजूद दोनों देशों के आम नागरिक एक साझा संस्कृति और परंपरा के लोग हैं और जब इस एकता को अपना वर्चस्व दिखाने का मौका मिलेगा , तो तालिबान जैसे संकीर्ण संगठन किनारे छूट जाएंगे। इसलिए वे उदारता और समझदारी के जरा-से प्रदर्शन से घबरा जाते हैं। भारतीय जनता पार्टी की ओर से प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी वैसे तो विवादों के आदी रहे हैं , लेकिन लोकसभा चुनाव के माहौल में नए विवाद उन्हें मुश्किल में डाल सकते हैं। ऐसा ही एक विवाद गुजरात में एक महिला की पुलिस द्वारा निगरानी करवाने का है। आरोप यह है कि अपने 'साहब' के कहने पर गुजरात के तत्कालीन गृह मंत्री अमित शाह पुलिस के जरिये एक महिला की हर गतिविधि पर नजर रखे हुए थे और उसके तमाम फोन टैप हो रहे थे। एक खबरिया पोर्टल ने अमित शाह द्वारा इस तरह की हिदायत वाले टेप जारी किए हैं। इस विवाद से पीछा छुड़ाने के लिए गुजरात सरकार ने जो दो सदस्यीय जांच आयोग बनाया है , उससे विवाद के ठंडा पड़ने की संभावना कम है। वैसे भी चुनावी माहौल में कोई विवाद आसानी से ठंडा नहीं पड़ता और सरकार ने जांच आयोग में जिन दो सदस्यों को रखा है, उनकी निष्पक्षता पर आसानी से सवाल खड़े किए जा सकते हैं। अगर गुजरात सरकार सचमुच निष्पक्ष जांच चाहती है, तो उसे ऐसे लोगों को चुनना था, जिनकी निष्पक्षता पर कोई उंगली न उठा सके। लेकिन इस जांच कमीशन में उसने हाईकोर्ट की एक रिटायर्ड महिला जज और एक रिटायर्ड अतिरिक्त मुख्य सचिव को रखा है, जिनके बारे में कहा जा रहा है कि वे सरकार के करीबी हैं। जब भी ऐसी कोई जांच होती है , उसमें विश्वसनीयता एक बड़ा आधार होती है। हमारे देश में जांच आयोगों की विश्वसनीयता वैसे ही बहुत कम है। आमतौर पर जांच आयोगों को एक औपचारिकता या मामले को ठंडे बस्ते में डालने का जरिया माना जाता है, या फिर लीपापोती के लिए उनका इस्तेमाल किया जाता है। अगर कभी-कभार किसी जांच आयोग ने कोई निष्पक्ष और गहराई तक विश्लेषण करने वाली रिपार्ट दे भी दी , तो वह दबा दी जाती है और उसकी सिफारिशों पर अमल नहीं होता। मुंबई के सांप्रदायिक दंगों की जांच करने वाले श्रीकृष्ण आयोग की रिपोर्ट इसका ठोस उदाहरण है। ऐसे में , अगर गुजरात सरकार इस तरह का जांच आयोग बिठाती है, तो इससे संदेह दूर होने की बजाय ज्यादा गहरा हो जाएगा। इस मामले की सच्चाई सामने आना इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि यह कई नजरिये से एक गंभीर मामला है। पहली बात तो यह है कि इसमें भारत का प्रधानमंत्री बनने का दावा करने वाले एक बड़े राजनेता और उसके सबसे विश्वसनीय सहयोगी पर आरोप हैं। फिर यह एक महिला के जीवन के लगभग हर क्षण की जानकारी प्राप्त करने के लिए सरकारी मशीनरी के दुरुपयोग से जुड़े हैं, जिसमें उसका पीछा करने से लेकर टेलीफोन पर हो रही उसकी तमाम बातचीत को सुनना शामिल हैं। यह आरोप लगाया जा सकता है कि मामले का भंडाफोड़ केंद्र सरकार की एजेंसियों के जरिये हुआ है, लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि नरेंद्र मोदी अपने आप को बेदाग साबित करें। मोदी के समर्थकों की तादाद बड़ी है और मुमकिन है कि मौजूदा माहौल में इन आरोपों से उन्हें खास नुकसान न हो। भारत की आम जनता अब भी निजता की सुरक्षा और स्वतंत्रता के सवालों के प्रति ज्यादा सतर्क नहीं है। सत्ता का , खासकर पुलिस का दुरुपयोग हमारे यहां इतना आम है कि आम लोग इसे सामान्य स्थिति मानते हैं।

उसकी पहुंच कहां तक है कि उसने ऐसा कोई सम्मान हासिल कर लिया। इसके बावजूद कई काबिल लोगों को ये सम्मान मिले हैं और इनसे भारतीय गणतंत्र की वैधता जुड़ी है , इसलिए इनका निरादर नहीं होना चाहिए। पद्म सम्मानों का दुरुपयोग न हो और इसके साथ ही उनका वजन भी बना रहे , इसलिए कई स्तरों पर प्रयास जरूरी हैं। सबसे ज्यादा जरूरी तो यह है कि यथासंभव काबिल लोगों को ही ये सम्मान मिलें और जिन्हें मिलें , वे इनकी गरिमा बनाए रखने का जतन करें। कुछ साल पहले दो नामी क्रिकेट खिलाड़ियों को पद्मश्री दी गई थी, और उन्होंने राष्ट्रपति भवन में सम्मान समारोह में जाने की बजाय किसी व्यावसायिक कार्यक्रम या विज्ञापन की शूटिंग को तरजीह दी थी। ऐसे ही इन सम्मानों के गलत इस्तेमाल पर भी सख्ती जरूरी है, जैसी कि मोहन बाबू और ब्रह्मानंदन के मामले में आंध्र प्रदेश हाईकोर्ट ने की। सम्मान देने वालों और लेने वालों , दोनों को यह बार-बार याद दिलाने की जरूरत है कि ये राजकीय सम्मान हमारे गणतंत्र की गरिमा से जुड़े हुए हैं। उत्तर भारत में चल रही शीत लहर के बीच नए साल का आगाज हो चुका है। पहाड़ों पर हिमपात की खबर फैलते ही सैलानी नए साल का जश्न मनाने उनकी तरफ रुख कर चुके थे। नैनीताल में इस साल बड़ी संख्या में पर्यटक पहुंचे हैं। मगर दूसरी तरफ राजधानी दिल्ली समेत देश के कई इलाकों में बेघरों और शरणार्थी शिविरों में रह रहे बेबस लोगों के लिए यह मौसम कहर बनकर आया है। हर साल हमारे सामने कुछ ऐसा ही मंजर होता है। सर्द रातें खुशकिस्मतों के जश्न को खुशनुमा बनाती हैं, तो दूसरी तरफ बुझे अलावों से गरमी की उम्मीद तापती जिंदगियां हमारे समाज का हिस्सा हैं। ये अपने-अपने हिस्से के सुख-दुख हैं। लेकिन जानलेवा सर्दी के इन दिनों में हमारे शासन तंत्र की मानवीयता को पाला क्यों मार जाता है ? चंद रोज पहले मुजफ्फरनगर के राहत शिविरों में मरते बच्चों की खबर पर उत्तर प्रदेश के एक आला अधिकारी के लिजलिजे बयान ने जबर्दस्त हंगामा खड़ा कर दिया था। साइबेरिया की जानलेवा सर्दी और अपने सूबे के हजारों नागरिकों पर थोपे गए शिविरों की पीड़ा में फर्क करने का शऊर भी उनमें नहीं दिखा। वैसे , हमारे तंत्र की यह संवेदनहीनता किसी एक प्रांत तक महदूद नहीं है। यह जानते हुए कि इन दिनों में दिल्ली में जानलेवा सर्दी पड़ती है , मानसरोवर पार्क के पास बनी झुग्गियों को गुरुवार को तोड़ डाला गया। सैकड़ों लोग इस भीषण सर्दी में खुले आकाश के नीचे जीने को मजबूर हो गए। सरकारी जमीनों पर बनी झुग्गियों की समस्या बहुत बड़ी है और यह एक कटु सच्चाई है कि देश में नौ करोड़ से अधिक लोग ऐसी बस्तियों में जीने को मजबूर हैं। इससे निपटने के लिए एक सुविचारित आवास नीति और संवेदनशील नजरिये की दरकार है। दुर्योग से हमारे प्रशासनिक अमले को इस दिशा में काम करने की बजाय हमेशा जोर-जबर्दस्ती वाला रवैया पसंद आता है। इस बुल्डोजर नीति का विरोधाभास यह है कि दिल्ली सरकार के पास इन लोगों को मौसम की मार से बचाने के लिए पर्याप्त रैन-बसेरे भी नहीं हैं। ऐसे में , जब न्यूनतम तापमान एक-दो डिग्री के आसपास पहुंच रहा हो , तब इस तरह की कार्रवाई का औचित्य समझ से परे है। पिछले वर्ष इन्हीं दिनों में ठंड से मरने वालों की तादाद 200 से ऊपर पहुंच गई थी। लेकिन लगता नहीं कि प्रशासन ने उससे कोई सबक सीखा है। सरकार खुद मानती है कि लाखों लोग शहरों में खुले में जीते हैं। साल 2001 की जनगणना तो ऐसे लोगों की संख्या 20 लाख तक बताती है।

यह भी बताया जाता है कि रेलवे के डिब्बों को बनाने में खराब गुणवत्ता के सामान के इस्तेमाल की वजह से भी आग ज्यादा फैलने का खतरा होता है। रेलवे के डिब्बों को आग से प्रतिरोधक बनाने की टेक्नोलॉजी उपलब्ध है, जरूरत है उसे इस्तेमाल करने की। रेलवे में गुणवत्ता और सुरक्षा की उपेक्षा की वजह से रेलवे की कार्य-संस्कृति भी प्रभावित हुई है। किसी वक्त में रेलवे कर्मचारी आम तौर पर अपने काम के प्रति मुस्तैद होते थे , अब लापरवाही और गैर-जिम्मेदारी का माहौल पनप रहा है। राजनीतिक हस्तक्षेप की वजह से भी रेलवे की कार्यक्षमता प्रभावित हुई है। पिछली ज्यादातर दुर्घटनाओं में मानवीय गलती जिम्मेदार पाई गई है। अगर अब इसे सुधारने की कोशिश शुरू की गई, तो भी स्थिति के सामान्य होने में कई साल का समय लग जाएगा। लेकिन अगर अब भी इसे सुधारने की कोशिश न की गई , तो रेलवे को इन हालात से उबारना मुश्किल हो जाएगा। रेलवे इस विशाल देश के लिए बहुत महत्वपूर्ण है और संकीर्ण राजनीतिक स्वार्थों के लिए इसे और इसके यात्रियों को खतरे में डालना अच्छी बात नहीं है। आम आदमी पार्टी के दफ्तर पर हमला करने वाले लोग ज्यादा नुकसान नहीं पहुंचा पाए , उन्होंने कुछ गमले तोड़े और पोस्टर फाड़े , सौभाग्य से किसी व्यक्ति को कोई चोट नहीं पहुंची। ऐसे लोगों की मंशा भी यही होती है कि कुछ हंगामा पैदा हो और चर्चा मिल जाए। लेकिन किसी भी लोकतांत्रिक समाज में ये लोग एक बदनुमा दाग होते हैं। जिस संस्था 'हिंदू रक्षा दल' के ये सदस्य बताए जाते हैं, उसका नाम शायद ही किसी ने सुना हो और हो सकता है कि यह कोई औपचारिक संगठन न हो। यह भी मुमकिन है कि उसके सदस्य भी उतने ही हों, जितने 'आप' के दफ्तर पर हमला करने आए हों। हर समाज में ऐसे लोग होते हैं , जो किसी तरह प्रचार पाना चाहते हैं या अपने को महत्वपूर्ण साबित करना चाहते हैं। लेकिन इसके लिए अगर दूसरों को या लोकतांत्रिक मूल्यों को नुकसान पहुंचाया जाए, तो इसे कतई ठीक नहीं कहा जा सकता। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र का अनिवार्य हिस्सा है और यह जरूरी है कि विचार का जवाब विचार से ही दिया जाए। अगर किसी विचार के जवाब में हिंसा का सहारा लेना जायज हो जाए , तो अंत में सिर्फ हिंसा ही बचेगी , विचार नहीं। इसलिए 'आप' के दफ्तर पर हुए हमले की सख्त शब्दों में आलोचना की जानी चाहिए। हिंसा करने वाले लोग 'आप' के नेता और मशहूर वकील प्रशांत भूषण के कश्मीर पर बयान का विरोध कर रहे थे। प्रशांत भूषण ने कहा था कि कश्मीर में सेना की मौजूदगी पर घाटी में जनमत संग्रह करवाया जाना चाहिए और अगर बहुसंख्यक लोग सेना की वापसी चाहते हों, तो उसे वापस हो जाना चाहिए। प्रशांत भूषण का आज से नहीं, बल्कि कई साल से कश्मीर के मामले में एक रवैया है और उससे सहमत या असहमत होना एक अलग मुद्दा है , लेकिन वह कोई ऐसी बात नहीं है, जिसे कहना भी कोई अपराध हो। कश्मीर में भारत सरकार की नीति और कामकाज की आलोचना करने वाले लोग भारत में बहुत सारे हैं। प्रशांत भूषण कई मानवाधिकार समूहों के साथ मिलकर कश्मीर के मुद्दे पर सक्रिय हैं। उनसे असहमत लोग भारत में ज्यादा होंगे और उनकी पार्टी 'आप' ने ही उनके बयान से असहमति दर्शाई है। प्रशांत भूषण की इस मामले में आलोचना सिर्फ इस आधार पर की जा सकती है कि एक राजनीतिक पार्टी के जिम्मेदार सदस्य होते हुए उन्हें किसी विवादास्पद मुद्दे पर बोलते हुए सावधानी बरतनी चाहिए , क्योंकि उनके निजी विचारों को उनकी पार्टी का आधिकारिक विचार माना जा सकता है।

Exercise- 86

अब भी भारत में भले ही फांसी की सजा बरकरार हो , लेकिन फांसी बहुत कम लोगों को दी जाती है। न्याय व्यवस्था का पूरा रुझान भी इसी ओर है कि किसी की जान लेने का अप्रिय प्रसंग यथासंभव टाला जा सके। दया याचिका की सुनवाई में भी देर इसीलिए लगती है कि अक्सर राष्ट्रपति इस पर फैसला करना नहीं चाहते। नियमानुसार दया याचिका पर गृह मंत्रालय की सिफारिश पर अमल करना राष्ट्रपति के लिए लगभग अनिवार्य होता है। राष्ट्रपति उसे एक बार पुनर्विचार के लिए भेज सकते हैं , लेकिन अगर गृह मंत्रालय फांसी की सजा की सिफारिश फिर से करे, तो उसे मानने के लिए राष्ट्रपति बाध्य होते हैं। लेकिन दया याचिका पर राष्ट्रपति कितने दिनों में फैसला करें , इस बारे में कोई नियम नहीं है और इसलिए कई राष्ट्रपति इन याचिकाओं को रखे रहते हैं। अगर भारत में फांसी की सजा की पूरी प्रक्रिया को देखें , तो उसमें एक हिचकिचाहट साफ दिखाई देती है , लेकिन इससे एक दिक्कत यह भी होती है कि कैदी और उसके परिवार , हितचिंतकों की जान सांसत में रहती है। फांसी की सजा को लेकर सालों तक अनिश्चय में रहना किसी यंत्रणा से कम नहीं है। सुप्रीम कोर्ट ने इस फैसले के जरिये यह अनिश्चय खत्म कर दिया है और फांसी की सजा की तामील ज्यादा मुश्किल कर दी है। यह भी सुनिश्चित कर दिया है कि फांसी की सजा पाए कैदियों के साथ ज्यादा मानवीय व्यवहार होगा। संसद पर आतंकी हमले के दोषी अफजल गुरु को फांसी की इसलिए आलोचना हुई थी कि उसके परिवार को सूचित किए बगैर उसे फांसी दे दी गई थी। अब भी हमारे समाज में किसी अपराधी को फांसी की सजा देने की मांग होती रहती है। इसके पीछे न्याय की बजाय प्रतिशोध या 'खून के बदले खून ' जैसी भावना ज्यादा होती है। लेकिन आधुनिक समाज में न्याय व्यवस्थाएं इस भावना से नहीं चलतीं , न ही न्यायपालिका कोई बदला लेने के लिए बनी एक संस्था है। यह फैसला इस धारणा को दृढ़ करता है कि न्यायपालिका को ज्यादा मानवीय होना चाहिए और जान लेना नहीं , बल्कि जान बचाना उसका मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। इस फैसले ने कई साल से जिंदगी और मौत के बीच झूल रहे अनेक कैदियों और उनके करीबी लोगों को उम्मीद की राह दिखाई है। सरकारी दूरसंचार कंपनियां महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड (एमटीएनएल) और भारत संचार निगम लिमिटेड (बीएसएनएल) इस गणतंत्र दिवस से अपनी मोबाइल सेवाओं पर फ्री रोमिंग की घोषणा करने वाली हैं। एमटीएनएल की सेवाएं सिर्फ दिल्ली और मुंबई में हैं , इसलिए दिल्ली से मुंबई या मुंबई से दिल्ली जाने वाले एमटीएनएल के ग्राहकों को रोमिंग के लिए पैसे नहीं देने पड़ेंगे। वे स्थानीय दरों पर ही फोन कर पाएंगे। बीएसएनएल की सेवाएं देश भर में हैं , इसलिए उसकी सुविधाओं का फायदा सारे देश में हो सकेगा। बीएनएनएल पर रोमिंग के दौरान दरें स्थानीय ही रहेंगी , लेकिन अपना खर्च निकालने के लिए वह एक रुपया प्रतिदिन का शुल्क लेने का विचार कर रही है। दूरसंचार क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा इतनी ज्यादा है कि अगर ये दोनों कंपनियां यह योजना लागू कर देती हैं , तो शायद जल्दी ही निजी कंपनियां भी ऐसा करने पर मजबूर हो जाएंगी। जाहिर है, इस योजना का फायदा उन लोगों को ज्यादा होगा , जिन्हें अक्सर सफर करना पड़ता है या वे लोग इससे खुश होंगे, जो बातचीत पर इतना कम खर्च कर पाते हैं कि उन्हें रोमिंग से आने वाला खर्च भी भारी पड़ता है। कम आय वाले लोगों के लिए यह फायदे की योजना साबित हो सकती है।

Exercise- 87

गाय की महिमा को शब्दों में नहीं बांधा जा सकता। गाय हमारे जीवन से जुड़ी है , उसके दूध से लेकर मूत्र तक का उपयोग किया जाता है। पुराणों में उल्लेख है कि गाय की पूंछ छूने मात्र से ही मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। गाय के दूध में वह सारे तत्व मौजूद हैं , जो जीवन के लिए जरूरी हैं। वैज्ञानिक भी मानते हैं कि गाय के दूध में बहुत शक्ति है।

मीरा जहर पीकर भी जीवित बच गई थी क्योंकि वह पंचगव्य का सेवन करती थी लेकिन कृष्ण को पाने के लिए लोगों में मीरा जैसी भावना नहीं रही। लोग अपने लिए आलीशान इमारतें बना रहे हैं। यदि इतना धन कमाने वाले अपनी कमाई का एक हिस्सा भी गौ सेवा और उनकी रक्षा के लिए खर्च करें तो गौमाता की रक्षा होगी। समय के बदलते दौर में राम , कृष्ण और परशुराम भी आए और उन्होंने भी गायों के उद्धार का काम किया।

जब पांडव वन जा रहे थे तो उन्होंने गाय का साथ मांगा था। गाय की महिमा का सूरदास और तुलसीदास ने भी वर्णन किया है। लोग आज बाबाओं के चक्कर में फंसे हुए हैं , उन पर तो लाखों रुपए खर्च कर देते हैं लेकिन दृश्य देवी की रक्षा के लिए बहुत कम लोग आगे आ रहे हैं। आज गौवंश की हत्या और तस्करी हो रही है।

गौशालाओं में गाय मर रही हैं। जो लोग गाय पालते हैं और उसके दूध का व्यापार भी करते हैं , वे भी अपनी गायों को सड़कों और गलियों में छोड़ देते हैं। सड़कों, गलियों में घूमती गाय दुर्घटनाओं का शिकार हो जाती हैं जिससे जान-माल की क्षति भी होती है।

गौवंश बढ़ने की बजाय उसकी संख्या में निरंतर कमी आ रही है। मध्यप्रदेश में गौवंश की संख्या काफी अधिक थी लेकिन गौवंश गणना के आंकड़ों ने सरकार की गौरक्षा की नीयत पर सवाल अंकित कर दिए हैं।

विधानसभा के पटल पर प्रस्तुत संख्या के अनुसार मध्यप्रदेश में पांच साल में 2 करोड़ से अधिक गौवंश लापता हो गए हैं। बुंदेलखंड के सागर संभाग में 7 लाख गौवंश का अता-पता नहीं है।

आशंकाएं व्यक्त की जा रही हैं कि मृत गाय के शरीर से निकलने वाली बेशकीमती गौरोचन के लालच में तो गाय की हत्याएं करने वाला गिरोह सक्रिय नहीं है। गाय के पेट में बनी पथरी को गौरोचन कहा जाता है जिसका बाजार मूल्य 20 हजार रुपए प्रति ग्राम बताया जाता है , इसका इस्तेमाल आयुर्वेदिक औषधियों में होता है।

मध्यप्रदेश की शिवराज सरकार गौसंवर्धन बोर्ड के माध्यम से प्रतिवर्ष गौशालाओं को करोड़ों का अनुदान देती है लेकिन गौवंश गायब हो रहा है। ज्यादातर गौवंश आवारा और लावारिस हालत में घूमते देखा जाता है, जो कचरे के ढेर से पेट भरता है। बुंदेलखंड में गौ तस्करों सहित गौरोचन के लालची बड़ी मात्रा में गाय की हत्याएं कर रहे हैं। गौवंशों की संख्या में भी कमी से इन आरोपों को बल मिलता है कि कहीं न कहीं गाय के नाम पर बड़ा खेल हो रहा है।

Dowload the latest version from our website https://www.sonitypingtutor.com to check your accuracy and speed.

चीन लगातार भारत की घेराबंदी में जुटा हुआ है। यह भी सत्य है कि दुनिया का कोई भी राष्ट्र चीन की अनदेखी नहीं कर सकता। यहां तक कि सबसे बड़ी ताकत अमेरिका भी नहीं। चीन हर दृष्टि से ताकतवर बन रहा है और भारत के संदर्भ में उसकी ताकत को गम्भीरता से लेना ही होगा।

चीन लगातार भारत पर इस बात के लिए दबाव बना रहा था कि वह उसकी महत्वाकांक्षी वन बैल्ट वन रोड परियोजना में शामिल हो। यह परियोजना तीन महाद्वीपों एशिया , यूरोप और अफ्रीका को सीधे तौर पर जोड़ेगी। किसी एक देश का दुनिया में यह सबसे बड़ा निवेश माना जा रहा है लेकिन इसके साथ ही यह चर्चा भी शुरू हो गई है कि इस परियोजना के जरिये चीन सम्पर्क बढ़ाना चाहता है या फिर वैश्विक राजनीति में अपनी हैसियत बढ़ाना चाहता है।

ड्रैगन के इरादों से पूरी दुनिया वाकिफ है , भारत की अपनी चिंताएं हैं। इसीलिए भारत ने आज से शुरू हुए वन बैल्ट वन रोड सम्मेलन का बहिष्कार करने का निर्णय लिया है। भारत का तर्क बिल्कुल सही है कि कोई भी देश ऐसी किसी परियोजना को स्वीकार नहीं कर सकता, जो संप्रभुत्ता और क्षेत्रीय अखंडता पर उसकी मुख्य चिंता की उपेक्षा करती हो। सम्पर्क परियोजनाओं को इस तरह आगे बढ़ाने की जरूरत है, जिससे संप्रभुत्ता और क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान हो। वास्तव में इस परियोजना का एक हिस्सा पाक अधिकृत कश्मीर से होकर गुजरता है।

इसे चीन और पाकिस्तान के बीच आर्थिक कॉरीडोर भी कहा जाता है। भारत शुरू से ही इसका विरोध करता रहा है क्योंकि भारत का स्टैंड यह है कि पीओके पाकिस्तान का नहीं भारत का हिस्सा है। नेपाल चीन में शुरू हुए फोरम में हिस्सा ले रहा है। पाकिस्तान तो चीन का पहले से ही सखा बना हुआ है।

नेपाल ने तो फोरम शुरू होने से पहले ही चीन के साथ करार पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। भारत के लिए स्थिति और भी जटिल हो गई है क्योंकि अमेरिका भी यू-टर्न लेते हुए इसमें भाग ले रहा है। रूस भी इस बैठक में भाग ले रहा है। मोदी सरकार के बाद से अमेरिका और भारत के रिश्तों में नए बदलाव आए हैं लेकिन आपत्तियों के बावजूद अमेरिका का इस सम्मेलन में भाग लेना भारत के लिए बड़ा झटका है।

परम्परागत रूप से नेपाल के साथ अच्छे आर्थिक और राजनीतिक संबंध रखने वाला भारत पिछले कुछ वर्षों से चीन से लगातार स्पर्धा का सामना कर रहा है। चारों तरफ जमीनी सीमा से घिरा नेपाल आयात के मामले में प्रमुखता से भारत पर निर्भर है और समुद्री सम्पर्क के लिए पूरी तरह भारतीय बंदरगाहों पर आश्रित है। बंगलादेश भी इस फोरम में शामिल हो चुका है। चीन लगातार दोस्त खरीद रहा है।

ओबीओआर लगभग 1400 अरब डालर की परियोजना है, जिसे 2049 में पूरा किए जाने की उम्मीद है। चीन इस परियोजना की मदद से हान शासन के दौरान इस्तेमाल किए जाने वाले सिल्क रूट को फिर से जिंदा करने की जुगत में है। करीब 2000 वर्ष पहले सिल्क रूट के जरिये पश्चिमी और पूर्वी

Exercise- 89

गाँधी के विचारों का टैगोर ने जोरदार विरोध किया और कहा कि भूकंप नैतिक कारणों से नही प्राकृतिक शक्तियों से होती हैं , चाहे वह अस्पृश्यता की प्रथा के कितने ही विरुद्ध हो , गाँधी जी एक सफल लेखक थे। कई दशकों तक वे अनेक पत्रों का संपादन कर चुके थे जिसमे हरिजन , इंडियन ओपिनियन, यंग इंडिया आदि सम्मिलित हैं।

जब वे भारत में वापस आए तब उन्होंने एक मासिक पत्रिका निकाली। बाद में नवजीवन का प्रकाशन हिन्दी में भी हुआ, इसके अलावा उन्होंने लगभग हर रोज व्यक्तियों और समाचार पत्रों को पत्र लिखा गाँधी ने कुछ किताबें भी लिखी अपनी आत्मकथा के साथ , एक आत्मकथा या सत्य के साथ मेरे प्रयोग दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह , वहां के संघर्षो के बारें में , हिंद स्वराज या इंडियन होम रुल , राजनैतिक प्रचार पत्रिका और जाॅन रस्किन की अन्टू दिस लास्ट की गुजराती में व्याख्या की है।

अन्तिम निबंध को उनका अर्थशास्त्र से सम्बंधित कार्यक्रम कहा जा सकता है उन्होंने शाकाहार , भोजन और स्वास्थ्य, सामाजिक सुधार पर भी विस्तार से लिखा है। गाँधी आमतौर पर गुजराती में लिखतें थे परन्तु अपनी किताबों का हिदी और अंग्रेजी में भी अनुवाद करते थे। गाँधी का पूरा कार्य महात्मा गाँधी के संचित लेख नाम से भारत सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया है।

यह लेखन लगभग पचास हजार पन्नों में समाविष्ट है और तकरीबन सौ खंडों में प्रकाशित है। सन दो हजार में गाँधी के पुरा कार्यों का संशोधित संस्करण विवादों के घेरे में आ गया क्योंकि गाँधी के अनुयायियों ने सरकार पर राजनितिक उदेश्यों के लिए परिवर्तन शामिल करने का आरोप लगाया कह गये कि पौ फटने से पहले ही वे आ जायंगे , ताकि सूरज निकलने से पहले-पहले मुकाम पर पहुंच जाया जाय।

दीना अपने परों के बिस्तरे पर लेटा तो रहा , पर उसे नींद ने आई। रह-रहकर वह जमीन के बारे में सोचने लगता थाः "चलकर मैं कितनी जमीन नाप डालूं कुछ ठिकाना है! एक दिन में पैंतीस मील तो आसानी से कर ही लूंगा। दिन आजकल लंबे होते हैं और पैंतीस मील!-कितनी जमीन उसमें आ जायगी! उसमें से घटिया वाली तो बेच दूंगा या किराये पर उठा दूंगा , लेकिन जो चुनी हुई बढ़िया होगी वहां अपना फार्म बनाऊंगा।

दो दर्जन तो बैल फिलहाल काफी होंगे। दो आदमी भी रखने होंगे। कोई डेढ़ सौ एकड़ में तो काश्त करुंगा। बाकी चराई के लिए। दीना रातभर पड़ा जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाता रहा। देर-रात कहीं थोड़ी नींद आई। आंख झपी होगी किसी के बाहर से खिलखिलाकर हंसने की आवाज उसके कानों में आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है? उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगों का वह सरदार ही बाहर बैठा जोर-जोर से हंस रहा है।

हंसी के मारे अपना पेट पकड़ रक्खा है। पास जाकर दीना ने पूछना चाहा , "आप ऐसे हंस क्यों रहे हैं" लेकिन अभी पूछ पाया नहीं था कि देखता क्या है कि वहां सरदार तो है नहीं, बल्कि वह सौदागर

भारत श्रीलंका के खिलाफ ऐसा कोई रवैया नहीं अपनाना चाहेगा, जो कश्मीर पर उसके रवैये के उलट जाता हो। जिन इतालवी नौसैनिकों पर दो भारतीय मछुआरों की हत्या का आरोप है , उनकी वापसी से एक राजनयिक संकट निपट गया है। यह संकट अभूतपूर्व इस मायने में था कि ऐसी नजीर ताजा इतिहास में कहीं नहीं मिलती, जिसमें कोई देश दूसरे देश के सुप्रीम कोर्ट के सामने कोई वायदा करे और फिर उससे मुकर जाए। ऐसे में भारत को अंदाजा नहीं हो सकता था कि इस स्थिति का कैसे सामना किया जाए। भारत और इटली के संबंध कभी खराब नहीं रहे हैं, लेकिन इस प्रसंग से बेमतलब की कड़वाहट रिश्तों में स्थायी रूप से आ जाती। सुप्रीम कोर्ट ने भारत में इटली के राजदूत डेनियल मेनसिनी के भारत छोड़ने पर रोक लगा दी थी , हालांकि विशेषज्ञों में ऐसे कदम पर भी मतभेद थे। अगर राजनयिक स्तर पर बातचीत का यह नतीजा निकला है कि दोनों नौसैनिक भारत आ रहे हैं, तो यह एक अच्छी बात है, क्योंकि आपसी बातचीत से ही कोई हल मुमकिन भी था। इसके अलावा कोई और विकल्प नजर नहीं आ रहा था। विदेश मंत्री सलमान खुर्शीद के बयान से यह मालूम होता है कि इटली की सरकार को यह आश्वासन दिया गया है कि दोनों नौसैनिकों को मृत्युदंड नहीं दिया जाएगा। उनके मौलिक अधिकारों की रक्षा और मुकदमा पूरा होने तक उन्हें गिरफ्तार न करने का भी आश्वासन दिया गया है, यानी जब तक मुकदमा चलता रहेगा, वे दोनों जहाजी इटली के दूतावास की छत्रछाया में रहेंगे। लेकिन यह साफ है कि दोनों भारतीय न्याय व्यवस्था के सामने पेश होंगे और उनके दोषी या निर्दोष होने का फैसला भारतीय अदालतें ही करेंगी। अगर मृत्युदंड न देने की बात है , तो इसमें कुछ गलत नहीं है। दुनिया के अधिकांश देशों में मृत्युदंड का प्रावधान खत्म किया जा चुका है और ये देश यह भी चाहते हैं कि उनके नागरिकों को किसी और देश में भी मृत्युदंड नहीं मिले। जब माफिया डॉन अबू सलेम का पुर्तगाल से प्रत्यर्पण हुआ था, तब यही आश्वासन पुर्तगाल सरकार को भी दिया गया था। मुमकिन है कि इटली ने आरोपी नौसैनिकों को पहले न भेजने का फैसला इसीलिए किया हो, ताकि दबाव बनाकर कुछ शर्तें मंजूर करा ली जाएं। हमारे सोचने के लिए एक मुद्दा तो इसमें यह है कि भारतीय तंत्र की , जिसमें कानून-व्यवस्था को संभालने वाली संस्थाएं व न्याय प्रणाली शामिल हैं, ऐसी छवि क्यों है कि किसी विदेशी सरकार को अपने नागरिकों को भेजने के पहले कुछ आश्वासनों की जरूरत महसूस होती है। क्यों हमारे तंत्र में यह सहज आश्वासन शामिल नहीं है कि इसका सामना करने वाले व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की रक्षा की जाएगी ? भारतीय पुलिस की छवि, अदालतों में लगने वाला समय और जेलों की हालत ऐसी है कि कम से कम यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि किसी अभियुक्त के साथ मानवीय व्यवहार के साथ न्याय होगा। इतालवी सरकार तो अपने नागरिकों के लिए यह आश्वासन ले सकती है, लेकिन जो लाखों-करोड़ों भारतीय इस तंत्र की मार झेलते हैं, उनके मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए कौन गारंटी लेगा ? यह काम हमारी सरकार का है कि वह अपने नागरिकों के सम्मान और मानवीय अधिकारों का खयाल रखे , और अगर वह ऐसा नहीं करती , तो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हमारे तंत्र की बदनामी होती है। हमें अगर दुनिया में अपनी साख बढ़ानी है , तो इसके लिए सिर्फ बड़ी अर्थव्यवस्था नहीं, एक कुशल और मानवीय प्रशासन की भी जरूरत है, ताकि कोई हमारी न्याय व्यवस्था पर

Exercise- 91

पाकिस्तान व अमेरिका को लेकर भारत की मौजूदा सरकार की कूटनीति व विदेश नीति जब बहस का मुख्य मुद्दा बनी हुई है उसी समय यह हकीकत सामने आयी है कि पिछले दो महीने अक्तूबर व नवम्बर के दौरान चीन ने 31 बार भारतीय सीमा में अतिक्रमण किया।

तीन महीने पहले ही सिक्किम की सीमा पर स्थित तिराहे डोकलाम इलाके में दोनों देशों के बीच तनाव कम होने के बाद यह माना जा रहा था कि चीन भारतीय सीमा का सम्मान करते हुए अपनी हेकड़ी दिखाने से बाज आयेगा परन्तु यह अपेक्षा खरी नहीं उतरी। सीमा अतिक्रमण के ये आंकड़े भारत- तिब्बत सीमा पुलिस द्वारा ही रिकार्ड किये गये हैं अतः इस मामले में किसी प्रकार की राजनीति की गुंजाइश नहीं है।

दरअसल यह आत्म विश्लेषण का समय है कि सरकार सोचे कि उसकी कूटनीति में कहां खामी है और किस स्तर पर उसे अंतर्राष्ट्रीय जगत में चीन के इस रवैये के प्रति विरोध का माहौल बनाना चाहिए। हमें लगातार यह ध्यान में रखना होगा कि चीन हमारा ऐतिहासिक रूप से ऐसा सबसे निकट का पड़ोसी है जिसकी सीमाएं हमारे भौगोलिक भाग से छह तरफ से खुली हुई हैं।

इसके साथ ही चीन के साथ हमारे देश की सीमाओं का अन्तिम फैसला लटका हुआ है मगर यह वास्तव में चिन्ता की बात है कि डोकलाम विवाद के खत्म हो जाने के बाद 31 बार चीनी सेनाओं ने भारत की सीमा में प्रवेश करके यह सन्देश देने की कोशिश की है कि सीमा विवाद पर उनका नजरिया बदलने वाला नहीं है।

असल में चीन कूटनीतिक रूप से यह लगातार भारत को जताता रहता है कि अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में अमरीका के साथ जितना ज्यादा भारत जाने की कोशिश करेगा उतनी ही ज्यादा वह अपनी नजर टेढ़ी करता जायेगा।

चीन की कूटनीति का यह प्रमुख हिस्सा बन चुका है कि वह दक्षिण एशिया समेत पूरे एशिया व हिन्द महासागर से लेकर प्रशान्त सागर क्षेत्र तक में अमरीकी प्रभाव और चौधराहट को चुनौती देने की स्थिति में आये। भारत की कूटनीतिक सफलता यही होगी कि वह इन दो शक्तियों की रंजिश में खुद को महफूज रखने के तरीके खोजे और उन पर अमल करता हुआ हिन्द महासागर क्षेत्र को किसी भी स्तर पर जंग का अखाड़ा न बनने दे मगर भारत में ऐसी स्थिति पैदा करने की कोशिश की जाती है कि यदि आसियान सम्मेलन में अमरीकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प प्रशान्त महासागर से छूते इलाके को हिन्द महासागर क्षेत्र कह दें तो हम बांस पर चढ़कर उछलने लगते हैं और सोचने लगते हैं कि हमने कोई बहुत बड़ी कूटनीतिक विजय प्राप्त कर ली है मगर यह कोरा भ्रम है क्योंकि अमरीका का आज तक रिकार्ड है कि वह दोस्ती तभी तक निभाता है जब तक उसके हित सध रहे हों। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण पाकिस्तान है।

अमरीका एक तरफ इस मुल्क को दहशतगर्दी का अखाड़ा भी बताता रहता है और दूसरी तरफ उसकी फौजी और वित्तीय मदद भी करता रहता है।

कोरोना के कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चीन के खिलाफ पनप रहे असंतोष को भी भारत ने भुनाया। इससे भी चीन के रुख पर असर पड़ा, लेकिन इसमें सबसे निर्णायक भूमिका निभाई भारत द्वारा चीन पर कसे आर्थिक शिकंजे ने। चीन जल्द से जल्द दुनिया की सबसे बड़ी महाशक्ति बनना चाहता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह उसी अनुपात में अपना आर्थिक रुतबा बढ़ाने में लगा हुआ है।

ऐसे में भारत ने आर्थिक प्रतिबंधों के जरिये चीन की दुखती रग पर चोट करने का काम किया। इस कड़ी में भारत ने चीन से आने वाले प्रत्यक्ष विदेशी निवेश यानी एफडीआइ को लेकर नए प्रविधान बनाए, चीनी दूरसंचार कंपनियों के लिए राह मुश्किल की और कई चीनी एप्स पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगा दिया। इन कदमों पर चीन की बौखलाहट भरी प्रतिक्रिया ने स्वाभाविक रूप से संकेत किया कि भारत का निशाना एकदम सटीक लगा है।

भारत के सैन्य रुख ने भी चीन को अपनी उस रणनीति पर नए सिरे से विचार करने पर विवश किया, जिसमें वह अपनी ताकत का रौब दिखाकर पड़ोसियों पर मानसिक बढ़त बनाकर अपने हित साधने का काम करता है।

दोनों देशों के सैन्य नेतृत्व के बीच नौ दौर की वार्ता में भारत ने स्पष्ट कर दिया कि जब तक चीन अपेक्षित कदम नहीं उठाता , तब तक इस गतिरोध का कोई हल निकलने से रहा। इस मामले में विदेश मंत्री एस जयशंकर ने कहा था कि सीमा पर शांति स्थापित हुए बिना द्विपक्षीय संबंधों का आगे बढ़ना मुश्किल है।

ध्यान रहे कि चीन से संबंध तब बिगड़ गए थे जब गलवन घाटी में दोनों देशों के सैनिकों के बीच बिना हथियारों के खूनी संघर्ष हुआ था और जिसमें भारत के 20 जवान शहीद हो गए थे। इस संघर्ष में चीनी सैनिक भी हताहत हुए, लेकिन उसने कभी यह स्वीकार नहीं किया।

हाल में एक रूसी एजेंसी द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार उस झड़प में चीन के 45 सैनिकों के मरने की बात सामने आई है। इस नुकसान से चीन को स्पष्ट संदेश मिला कि भारत से उसे करारा जवाब मिलना तय है। वह इस तथ्य से भी भलीभांति परिचित है कि ऊंचे रण क्षेत्र में भारतीय सैनिकों जैसा अनुभव और रणकौशल उसके सैन्य बलों के पास नहीं। भारत ने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि वह पहले पलक नहीं झपकाने वाला।

भारत का रुख साफ था कि अगर चीन इस गतिरोध को लंबा खींचना चाहता है तो भारत को इससे भी गुरेज नहीं। इससे उन अन्य पड़ोसी देशों को भी संबल मिला , जो चीन की दादागीरी से परेशान हैं।

अंतरराष्ट्रीय रुख और दबाव ने भी चीन को प्रभावित किया। इन दिनों दुनिया भर में भारत की वैक्सीन मैत्री वाली कूटनीति की धूम मची है। भारत उन देशों को भी कोरोना टीका उपलब्ध करा रहा है, जिनमें से कई के नाम आम भारतीयों ने सुने भी नहीं होंगे।

राजनैतिक कारण डलहोजी ने कानून के अन्तर्गत अनेक राज्यों पर अधिकार कर लिया। इस सिद्धांत अनुसार कोई राज्य, क्षेत्र या ब्रितानीप्रभाव का क्षेत्र कंपनी के अधीन हो जायेगा , यदि क्षेत्र का राजा निसन्तान मर जाता है या शासक कंपनी की दृष्टि में अयोग्य साबित होता है। इस सिद्धांत पर कार्य करते हुए लार्ड डलहोजी और उसके उत्तराधिकारी लार्ड सतारा , नागपुर, झाँसी, अवध को कंपनी के शासन में मिला लिया।

कंपनी द्वारा तोडी गयी सन्धियों और वादों के कारण कंपनी की राजनैतिक विश्वसनियता पर भी प्रश्नचिन्ह लग चुका था। लार्ड डलहोजी की घोषणा के अनुसार बहादुर शाह के उत्तराधिकारी को ऐतिहासिक लाल किला छोड़ना पडेगा और शहर के बाहर जाना होगा और लार्ड कैन्निग की घोषणा कि बहादुर शाह के उत्तराधिकारी राजा नहीं कहलायेंगे ने मुगलों को कंपनी के विद्रोह में खडा कर दिया। सिपाहियों की आशंका सिपाही मूलतः कंपनी की बंगाल सेना मे काम करने वाले भारतीय मूल के सैनिक थे। बम्बई, मद्रास और बंगाल प्रेसीडेन्सी की अपनी अलग सेना और सेना प्रमुख होता था।

इस सेना में ब्रितानी सेना से अधिक सिपाही थे। इस सेना में दो लाख सतावन हजार सिपाही थे। बम्बई और मद्रास प्रेसीडेन्सी की सेना मे अलग अलग क्षेत्रो के लोग होने की कारण ये सेनाएं विभिन्नता से पूर्ण थी और इनमे किसी एक क्षेत्र के लोगो का प्रभुत्व नही था। परन्तु बंगाल प्रेसीडेन्सी की सेना मे भर्ती होने वाले सैनिक मुख्यतः अवध और गन्गा के मैदानी इलाको के भूमिहार ब्राह्मण और राजपूत थे।

कंपनी के प्रारम्भिक वर्षों में बंगाल सेना में जातिगत विशेषाधिकारों और रीतिरिवाजों को महत्व दिया जाता था परन्तु कलकत्ता में आधुनिकता पसन्द सरकार आने के बाद सिपाहियों में अपनी जाति खोने की आशंका व्याप्त हो गयी सेना में सिपाहियों को जाति और धर्म से सम्बन्धित चिन्ह पहनने से मना कर दिया गया। एक आदेश के अन्तर्गत सभी नये भर्ती सिपाहियों को विदेश मे कुछ समय के लिये काम करना अनिवार्य कर दिया गया।

सिपाही धीरे-धीरे सेना के जीवन के विभिन्न पहलुओं से असन्तुष्ट हो चुके थे। सेना का वेतन कम था और अवध और पंजाब जीतने के बाद सिपाहियों का भत्ता भी समाप्त कर दिया गया था। एनफील्ड बंदूक के बारे में फैली अफवाहों ने सिपाहियों की आशन्का को और बढा दिया कि कंपनी उनकी धर्म और जाति परिवर्तन करना चाहती है।

एनफील्ड बंदूक विद्रोह का प्रारम्भ एक बंदूक की वजह से हुआ। सिपाहियों को एनफील्ड बंदूक दी गयीं जो कि कैलीबर की बंदूक थी तथा पुरानी और कई दशकों से उपयोग मे लायी जा रही ब्राउन बैस के मुकाबले मे शक्तिशाली और अचूक थी। नयी बंदूक मे गोली दागने की आधुनिक प्रणाली का प्रयोग किया गया था परन्तु बंदूक में गोली भरने की प्रक्रिया पुरानी थी।

नयी एनफील्ड बंदूक भरने के लिये कारतूस को दांतों से काट कर खोलना पडता था और उसमे भरे हुए बारुद को बंदूक की नली में भर कर कारतूस में डालना पडता था।

Exercise- 94

यदि आजादी के 70 वर्ष बाद भी भारत के किसी राज्य के सरकारी स्कूल में दलित बच्चों को अलग जानवर बांधने के बाड़े में बिठाकर देश के प्रधानमन्त्री के सम्बोधन को सुनने के लिए बाध्य किया जाता है तो उस आजादी का कोई मतलब नहीं है जिसे प्राप्त करके हमने अपना वह संविधान लागू किया जिसमें प्रत्येक नागरिक को एक समान अधिकार उसकी जाति , धर्म व लिंग को परे रखकर दिये गये हैं।

ऐसे राज्य की सत्ता पर काबिज सरकार पूरे राष्ट्र के माथे पर बदनुमा दाग के अलावा और कुछ नहीं कही जा सकती। ऐसी सरकार को हम लोकतन्त्र में लोगों की सरकार किस आधार पर कह सकते हैं? हिमाचल प्रदेश के कुल्लू इलाके में पड़ने वाली चेष्टा ग्राम पंचायत के सरकारी स्कूल में विगत 16 फरवरी को प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी के परीक्षा पर चर्चा कार्यक्रम को सुनने के लिए छात्र-छात्राओं को स्कूल की प्रबन्ध समिति के मुखिया के घर बुलाया गया और उनमें से दलित छात्रों को छांटकर उन्हें टीवी लगे कमरे से बाहर ही गाय व घोड़े आदि बांधने के बाड़े में बिठा दिया गया।

दलित छात्रों ने अपने कथित ऊंची जाति वाले छात्रों से अलग जानवरों के स्थान पर बैठकर प्रधानमन्त्री का कार्यक्रम सुना। यह स्वयं में भारत की उस सामाजिक व्यवस्था पर तीखी टिप्पणी है जिसे हम रात–दिन बाबा साहेब अम्बेडकर का नाम ले-लेकर दलितों को रिझाने का प्रयास करते रहते हैं मगर देखिये क्या सितम ढहाया जा रहा है कि हिमाचल प्रदेश में अभी पिछले दिनों ही भारी बहुमत से लोगों ने सत्ता बदल किया है और भाजपा की सरकार गठित की है।

जाहिर तौर पर भाजपा को जो दो तिहाई बहुमत इन चुनावों में मिला था उसमें सभी वर्ग के लोगों की हिस्सेदारी थी। वोट देते समय यहां के लोगों ने यह नहीं सोचा होगा कि उनके दलित होने से उनके वोट की गिनती अलग खाने में रखकर होगी मगर सरकार बनने पर उन लोगों की पहचान अलग खाने में रखकर होने लगी जिनके एक वोट से सरकार का गठन हुआ था।

दलितों की नई पीढ़ी को जो लोग आज भी अहसास करा रहे हैं कि उनकी हैसियत उन बाबा साहेब से आज भी अलग नहीं है , जिन्होंने अपनी पढ़ाई कक्षा से बाहर बैठकर सिर्फ दलित होने की वजह से पूरी की थी , उन्हें इस देश की राजनैतिक व्यवस्था में हिस्सेदारी करने की छूट किसी भी कीमत पर नहीं दी जा सकती।

स्कूल की प्रबन्ध समिति के जिस मुखिया के घर पर यह घिनौना कार्य हुआ है, सर्वप्रथम उसे कानून के फन्दे में फंसना ही होगा। जरा हिम्मत तो देखिये इन गुनहगारों की कि वे भारत के लोकतन्त्र के सबसे बड़े कार्यकारी अधिकारी प्रधानमन्त्री की आवाज सुनने तक पर विद्यार्थियों पर अपनी जातिवादी मानसिकता थोपकर ऐलान कर रहे हैं कि देश की सरकार चाहे कुछ भी कहती रहे और प्रधानमन्त्री परीक्षा को निर्भय व बिना डर के साथ देने की ताकीद छात्रों से बेशक करते रहें मगर उन्हें अपनी जाति के दायरे के डर के घेरे में रहकर ही उनकी बातें सुननी होंगी।

SONITYPINGTUTOR

Exercise- 95

9/11 को अमरीका पर हुए हमले ने समूचे विश्व को हिलाकर रख दिया था। अमरीका पर तो मानो गाज ही गिर गई थी। विश्व थाने के दरोगा के घर पर चंद हमलावरों ने आक्रमण कर दिया था। भावनात्मक रूप से सारा अमरीका आहत हो गया था। ठीक ऐसे समय सनक का सार्थक उपयोग हो गया था।

बुश ने ओसामा बिन लादेन के खिलाफ बिगुल बजा दिया था। अहद लिया गया- सारे विश्व में जहां भी आतंकवाद होगा उसे समाप्त कर दिया जाएगा। बुश रोज तहरीरें देने लगे। जिन शब्दों का इस्तेमाल वह करते थे, वे अमेरिका के लोगों को अच्छे लगने लगे थे। अमेरिकावासी भी उन्माद की स्थिति में थे। उन्माद का उन्माद से मिलन हो गया था। रोज खबरें आतीं कि अलकायदा के इतने लोग मार दिए गए, ताबिलान के इतने लोग मारे गए।

तोरा-बोरा में भीषण गोलाबारी हुई तो अमेरिका के लोग गलियों और चौराहों पर खड़े होकर बड़ी स्क्रीन पर एक व्यक्ति को गुस्से में बोलते हुए पाते और वह व्यक्ति था जार्ज वाकर बुश। लोग उसके दीवाने हो गए। बुश अमेरिका की आंख के तारे हो गए , लेकिन इस अंधी दौड़ में एक ऐसी गलती कर गए जिसका खामियाजा अमेरिका को ही नहीं सारे विश्व को भुगतना पड़ रहा है।

वह गलती थी ऐसे विषम दौर में बुश-मुशर्रफ मैत्री। तब दुष्ट पाकिस्तान ने बुश के सामने झुककर कहा-मेरे आका मैं आपका सेवक। आपका गुलाम। आप अलकायदा और तालिबान काे नेस्तनाबूद कर दो। यह हुक्म का गुलाम हर हाल में आपके साथ है। अमेरिका ने एक प्राणी की कू-कू को देख उसके गले में पट्टा डाल दिया।

कुत्ता एक वफादार जानवर होता है , वह मालिक को नहीं काटता परन्तु उसने तो लादेन को अपने यहां शरण दी, अफगानिस्तान में वह अपने मालिक के खिलाफ षड्यंत्र में लगा रहा। समय पर यह साबित कर दिया कि कुत्ता अगर पागल हो जाए तो उसकी पूंछ भी सीधी हो जाती है और वह काटता भी है।

भारत ने लाख समझाने का प्रयास किया कि पाक आतंकवादी देश है , उसका वजूद विश्व शांति के लिए खतरा है। पर अमेरिका के हुक्मरान चाहे वह क्लिंटन हो, ओबामा हो सबके सब दोगली नीतियां अपनाते रहे। विदेश मंत्री के रूप में हिलेरी क्लिंटन पाकिस्तान पर नेमतें बरसाती रहीं जबकि अमेरिका जानता था कि उसकी मदद का इस्तेमाल पाक आतंकवाद को सींचने के लिए कर रहा है। अमेरिका नकेल कसता, लेकिन फिर भी उसे सहायता देता रहा।

एक तरफ अमेरिका सारे विश्व के सामने अपनी यह इमेज बनाना चाहता है कि वह आतंकवाद का सबसे बड़ा दुश्मन है। दूसरी तरफ अमरीका सबसे बड़े आतंकवादी देश को सीने से लगाकर रखे हुए है। डोनाल्ड ट्रंप के सत्ता में आने के बाद लग रहा था कि समय नई करवट लेगा लेकिन उनके नेतृत्व में भी अमेरिका दोहरी चालें चल रहा है।

SONI TYPING TUTOR

Exercise- 96

अफगानिस्तान में सोवियत संघ से लड़ने के बदले अस्सी के दशक में अमेरिका ने पाकिस्तानी परमाणु कार्यक्रम का चुपचाप समर्थन किया था, बल्कि जब भी पाकिस्तान इसकी वजह से मुश्किल में आया, अमेरिका ने उसे बचाया था। इस वजह से अमेरिका पाकिस्तानी परमाणु कार्यक्रम की खुली आलोचना नहीं कर पाता और उस पर दबाव डालने की उसकी कोशिशें भी बेकार होती हैं। ईरान के परमाणु कार्यक्रम को लेकर अमेरिका ने उससे दुश्मनी ठान रखी है और उस पर तमाम प्रतिबंध लगा रखे हैं , पर जिस पाकिस्तान की मदद से ईरान परमाणु बम बनाने की कोशिश कर रहा था , उसे कोई सजा नहीं मिली। चीन का तर्क है कि पाकिस्तान से उसका परमाणु समझौता एनएसजी (न्यूक्लियर सप्लायर ग्रुप) में उसके शामिल होने से पहले का है , इसलिए वह एनएसजी के नियमों में नहीं आता। किंतु यह सवाल सिर्फ तकनीकी नहीं है। सवाल मूलतः यह है कि पाकिस्तान इतने सारे परमाणु हथियार किस लिए बना रहा है? भारत को इससे सबसे ज्यादा खतरा है, लेकिन परमाणु खतरा किसी एक देश तक महदूद नहीं रहता , वह पूरी दुनिया का खतरा बन जाता है। अल-कायदा व तालिबान के साथ पाकिस्तानी सेना के रिश्तों के संदर्भ में पाकिस्तानी परमाणु हथियारों के खतरे की गंभीरता समझ में आती है और इसलिए पूरी दुनिया को इसके प्रति गंभीर होना चाहिए। आम आदमी के लिए सबसे बड़ी समस्या लगातार बढ़ती महंगाई है , सरकार और रिजर्व बैंक इस समस्या से निपटने में लगातार नाकाम साबित हो रहे हैं। सरकार हर बार उम्मीद करती है कि आने वाले दिनों में महंगाई घटेगी, महंगाई की दर कुछ घटती भी है, लेकिन फिर तेजी से बढ़ जाती है। सितंबर के महीने में थोक मूल्य सूचकांक 6.46 प्रतिशत पहुंच गया, जबकि अगस्त में यह 6.1 प्रतिशत और जुलाई में 5.85 प्रतिशत था। इस साल में थोक मूल्य सूचकांक का यह सर्वोच्च स्तर है और खुदरा मूल्यों में बढ़ोतरी तो इससे ज्यादा ही होगी। यह उम्मीद थी कि अच्छे मानसून की वजह से महंगाई के बढ़ने की रफ्तार कम हो जाएगी , लेकिन ऐसा दिख नहीं रहा है। महंगाई के लिए सबसे ज्यादा खाने-पीने की चीजों के दामों में भारी बढ़ोतरी जिम्मेदार है। प्याज के दाम पिछले साल सितंबर महीने के मुकाबले तीन गुने से भी ज्यादा हैं , सब्जियों के दाम 89.37 प्रतिशत ज्यादा यानी लगभग दोगुने हैं और फलों के दाम 13.54 प्रतिशत बढ़े हैं। कुलजमा खाने-पीने की चीजों में पिछले साल के मुकाबले 18.4 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। यह रुझान पिछले कई साल से है , प्याज भी पिछले कई साल से रुला रहा है, लेकिन इनके दामों को नियंत्रित करने का कोई उपाय सरकार के पास नहीं है। आम तौर पर जब विकास दर गिरती है, तो महंगाई भी घटती है। ऐसे में सरकार या केंद्रीय बैंक विकास दर बढ़ाने के लिए बाजार में नकद धन की उपलब्धता बढ़ा सकता है , लेकिन हमारे यहां महंगाई ज्यादा होने की वजह से यह भी नहीं हो पा रहा। ब्याज दर ज्यादा होने से नया निवेश भी ज्यादा नहीं हो रहा, जिससे आपूर्ति सुधारने की संभावना बन सकती है। पिछले लगभग पांच साल से कहा जा रहा है कि महंगाई बढ़ने की मुख्य वजह सप्लाई के प्रबंधन में गड़बड़ियों से है। किसान को उसकी उपज का जो मूल्य मिलता है और उपभोक्ता जिस कीमत पर उसे खरीदता है, उसमें जमीन-आसमान का फर्क है, लेकिन बीच में होने वाली यह मुनाफाखोरी रोकने के लिए बेहतर वितरण के इंतजामात कहीं देखने को नहीं मिलते। बड़े थोक व्यापारियों के एकाधिकार को तोड़ने के लिए जो नियम

नेपाल में कोईराला परिवार, सामंतवादी राजनीति के लिए मशहूर पाकिस्तान में भुट्टो परिवार का दबदबा है, तो बांग्लादेश में शेख हसीना और खालिदा जिया में ही टक्कर होता है। श्रीलंका में लोग जयवर्धने और भंडारनायके परिवार के जिक्र से लोग रोमांचित हो जाते हैं। वास्तव में , राजनीतिक वंशवाद भारत या एशिया तक ही सीमित नहीं है। यह तो तकरीबन पूरी दुनिया में है। कहते हैं कि अमेरिका में प्रजातंत्र काफी मजबूत है , मगर सभी जानते हैं कि वहां बुश , केनेडी और क्लिंटन वंश हमेशा ही चर्चा में रहे हैं। हाल ही में टाइम पत्रिका ने अमेरिका की 'पॉलिटिकल डायनेस्टी' के बारे में लिखा था: हालांकि संविधान ऐसा कुछ नहीं कहता , लेकिन सदियों से अमेरिकी लोग साफ तौर पर ऐसे लोगों को अपना प्रतिनिधि चुनते रहे हैं , जो किसी न किसी स्थापित परिवार से आते हैं। दस में से एक सांसद के परिवार का कोई सदस्य पहले भी इस पद पर रहा चुका होता है। बच्चों को सुलाने के लिए लोरियां हर समाज और संस्कृति में मौजूद हैं। इनकी मौजूदगी हमारे जीवन में इतनी आम है कि हम उनके बारे में गहराई से सोचते भी नहीं हैं , किंतु कई विशेषज्ञ लोरियों पर गंभीर वैज्ञानिक अध्ययन कर रहे हैं। अमेरिका के एक अस्पताल में एक गायक और म्यूजिक थेरेपिस्ट निक पिकेट गंभीर रूप से बीमार बच्चों की तकलीफ संगीत के जरिये कम करने की कोशिश कर रहे हैं। इनमें से कई बच्चों का हृदय प्रत्यारोपण होना है या उन्हें अन्य गंभीर हृदय रोग हैं , जिनके लिए सर्जरी की जरूरत है। पिकेट के साथ अस्पताल के डॉक्टरों की एक टीम बच्चों पर संगीत के असर का अध्ययन कर रही है। इन लोगों ने बच्चों की हृदय गति और दर्द को नापने के लिए यंत्रों के इस्तेमाल से पाया कि संगीत सुनकर बच्चों की हृदय गति कम हो जाती है और वे रिलैक्स हो जाते हैं , साथ ही उनका दर्द भी घट जाता है। ऐसा नहीं है कि सभी बच्चों में एक सा असर हो , कुछ बच्चे संगीत पसंद नहीं भी करते , लेकिन जो बच्चे संगीत पसंद करते हैं, उन पर उसका बहुत अच्छा असर पड़ता है। कुछ वैज्ञानिक इस बात का ज्यादा गहराई से अध्ययन कर रहे हैं। उनका कहना है कि संगीत का असर दिमाग के दो हिस्सों पर होता है। एक हिस्सा वह है , जो ध्वनियां सुनता और उनका विश्लेषण करता है। दूसरा हिस्सा वह है , जिस पर संगीत का भावनात्मक असर होता है। जो हिस्सा संगीत से भावनात्मक रूप से प्रतिकृत होता है, वह ज्यादा आदिम हिस्सा है, यानी ध्वनियों से भावनात्मक संबंध मानव सभ्यता में ज्यादा प्राचीन है। शोध करने वाले वैज्ञानिकों का कहना है कि संगीत की भावनात्मक प्रतिक्रिया बच्चों को कहानी सुनाने से ज्यादा प्रभावशाली होती है , इससे बच्चों में आराम और सुरक्षा का एहसास जगता है और उनमें दर्द या तकलीफ का एहसास कम हो जाता है , इस वजह से उन्हें सुलाने में संगीत फायदेमंद होता है। वे कहते हैं कि अभी यह शोध शुरुआती स्तर पर है, लेकिन उन्हें यकीन है कि भविष्य में अस्पतालों में संगीत की उपयोगिता बढ़ेगी। बच्चों में संगीत से यह भावनात्मक जुड़ाव गर्भ के अंदर से ही शुरू हो जाता है। गर्भावस्था के लगभग 24वें सप्ताह से बच्चा आवाजें सुन सकता है। बाहरी आवाजें उस तक बहुत धीमी होकर पहुंचती हैं, लेकिन सबसे साफ वह मां की आवाज सुन पाता है। शायद इसीलिए इस आवाज से उसका जुड़ाव भी ज्यादा होता है। ऐतिहासिक रूप से सबसे पुरानी लोरी का प्रमाण लगभग 4,000 साल पहले का मिला है, लेकिन शायद इसकी परंपरा और भी पुरानी है।

एक मोटे अनुमान से आजकल के बच्चे एक मील दौड़ने में जितना वक्त लगाते हैं , उनके माता-पिता अपने बचपन में उससे औसतन 10 सेकंड कम वक्त में एक मील दौड़ लेते थे , यानी अंदाजन बच्चों की रफ्तार में प्रति किलोमीटर एक मिनट बढ़ गया है। अध्ययन करने वाले लोगों का कहना है कि इसकी मुख्य वजह बच्चों में बढ़ता मोटापा है। ज्यादा खाना, फास्ट फूड का चलन और व्यायाम की कमी इस बात के लिए जिम्मेदार हैं। बचपन में फिटनेस की कमी वयस्क होने पर जीवनशैली की बीमारियां पैदा होने का खतरा बढ़ा देती है। दुनिया भर में फास्ट फूड के खिलाफ काफी जोरदार अभियान छिड़ा है , लेकिन उसका आकर्षण कम नहीं हो रहा। फास्ट फूड जितना चटपटा और स्वादिष्ट होता है, वह उतना पौष्टिक आहार नहीं हो सकता। उसका स्वादिष्ट होना ही सेहत के लिए उसके ठीक न होने का कारण है, क्योंकि उसे चटपटा बनाने के लिए उसमें नमक, चीनी और फैट जरूरत से ज्यादा मात्र में इस्तेमाल किए जाते हैं। इससे भी बड़ी समस्या व्यायाम की कमी है। जानकार बताते हैं कि व्यायाम का अर्थ जिम जाना या स्कूल की किसी खेल टीम का हिस्सा होना नहीं है। उनका कहना है कि इस तरह के व्यायाम के मुकाबले बच्चे दौड़-भाग करें , खुले में खेलें और ज्यादा देर बैठे न रहें , तो बचपन के मोटापे से और फिटनेस की कमी से मुकाबला किया जा सकता है। एक तथ्य यह है कि इंसान की औसत लंबाई बढ़ रही है। उन्नीसवीं शताब्दी के मुकाबले इंसान की औसत लंबाई अब लगभग छह इंच ज्यादा है। उन्नीसवीं शताब्दी में साढ़े पांच फीट की लंबाई अच्छी-खासी मानी जाती थी। लंबाई के साथ औसत वजन भी बढ़ा है और खासकर बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बाद दुनिया के कई हिस्सों में समृद्धि के बढ़ने व फास्ट फूड उद्योग के पनपने की वजह से मोटापा बढ़ा है। इन सब वजहों से भी फिटनेस पर असर हुआ है। परिवहन के साधनों की वजह से चलना और दौड़ना कम हो गया है। टेक्नोलॉजी ने वजन उठाने की जरूरत कम कर दी है। इसीलिए मध्ययुग के साढ़े पांच फीट के लोग जिन हथियारों से लड़ सकते थे , उनमें से कई आज के साढ़े छह फीट के हट्टे-कट्टे लोग उठा नहीं पाते। इनमें से कुछ बातों का तो कोई उपाय नहीं है , पर बच्चों को घर में टीवी व वीडियो गेम से हटाकर खुले में खेलने भेजना तो मुमकिन है। पुराने जमाने के लोगों में फिटनेस का स्तर बेहतर था, लेकिन चिकित्सा सुविधाएं न होने से औसत उम्र कम थी। अब अगर कोई व्यक्ति अपनी दो-तिहाई उम्र किसी लंबी बीमारी के साये में परहेज करते हुए और दवाएं खाते गुजारे , तो यह कितना कष्टप्रद होगा। आधुनिक विज्ञान ने बीमारियों के इलाज तो ढूंढे हैं , किंतु फिटनेस के तरीके वही पुराने हैं। अब खुली जगह भी कम है , सड़कें भी सुरक्षित नहीं , इसलिए बच्चों के खेलने और दौड़ने के लिए खुली जगहें छोड़ना शहरी नियोजन में अनिवार्य किया जाना चाहिए। साथ ही स्कूलों के लिए बच्चों की फिटनेस पर ध्यान देना जरूरी किया जाना चाहिए। बच्चा जिंदगी की राह पर तंदुरुस्ती के साथ चल सके , इसलिए बचपन में उसे दौड़ने-कूदने के लिए प्रोत्साहित करना जरूरी है। तालिबान ने एक वीडियो के जरिये पाकिस्तानी मीडिया को धमकाया है कि वह सचिन तेंदुलकर की तारीफ करना बंद करे। तालिबान का कहना है कि सचिन कितने ही बड़े खिलाड़ी हों, आखिरकार वह भारतीय हैं और उन्हें पाकिस्तानी टीवी और अखबारों में इतनी जगह नहीं दी जानी चाहिए। तालिबान ने क्रिकेट के अपने ज्ञान का परिचय देते हुए बताया है

क्षमा करें आज कौनसी ऐसी बात हुई कि अचानक मुझे उसकी याद आ गई? मैं आपको बताऊंगा कि आज वास्तव में हुआ क्या ? मेरा एक मित्र है , जिसका नाम है प्योंग-हो वन। आपने शायद उसका नाम सुना होगा। वह पक्षी-विद्या-विशेषज्ञ है। इस देश में वह पक्षियों के विषय में अधिकारी व्यक्ति है। उसका नाम नहीं सुना ? खैर, हम दोनों हाई स्कूल में सहपाठी थे। एक दिन मै उसका हालचाल जानने के लिए उसके घर गया क्यों कि मुझे बहुत दिनों से उसका कोई समाचार नहीं मिला था।

उसकी पत्नी ने बताया कि उसकी तबीयत ठीक नहीं है ,वह बिस्तर में पड़ा है। मैनें सोचा कि चलो , उससे मिलता चलूं। उसकी बीमारी गंभीर नहीं थी। यही फ्ल्यू या और कुछ था।

उस पक्षी-विशेषज्ञ मित्र ने कहा कि सालों से उसकी दिलचस्पी इस बात में रही है कि एक खास किस्म के प्रवासी पक्षी किस तरह अपने को बांट कर उड़ते हैं , घर बनाते हैं, प्रवास की उनकी दिशा क्या होती है और उनके स्वभाव की विशेषताएं क्या हैं, इस शोध के लिए पक्षियों के पैरों में डाला जा सके। आप पूछते हैं कि जापान से क्यों बनावाये? इसलिए कि वे इस देश में नहीं बनते थे।

एक दिन उसने छल्ला डालकर एक प्रवासी चिड़िया को उड़ाया।. उसका नाम उसने बताया था , पर मैं भूल गया। वह घुमंतू चिड़िया थी। उसने कहा कि जब कभी छल्लेवाली कोई चिड़िया किसी देश के पक्षी-विशेषज्ञ द्वारा पकड़ी जाती थी तो विद्वान के रूप में उस व्यक्ति का कतर्व्य होता था कि सारी जरूरी जानकारी इक्ठ्ठी करके उस प्रयोग के मूल प्रारंभ कर्ता को भेज दे। आपको याद है कि कुछ साल पहले यहां इस देश में बत्तख जैसी एक चिड़िया पकड़ी गयी थी , जिसे आस्टिया के एक व्यक्ति ने छोड़ा था।

इसी तरह से यह मामला चलता था। जो हो , मेरे मित्र ने जो चिड़िया छोड़ी , कल्पना करो, वह कहां पहुंची? आप कल्पना नहीं कर सकते ? वह उत्तरी कोरिया में जा पहुंची। उसने 38 वीं पैरेलल अपने नन्हें-से डैनों से पार कर ली और प्योंग्यांग में जाकर पकड़ी गई। फिर हुआ क्या ? सुनिये।चिड़िया प्योंग्यांग में पक्षी-विद्या-विशारद डा० बन द्वारा पकड़ी गई। इन डा० बन ने सारी आवश्यक सूचनाएं इक्ठ्ठी कीं और जापान में सांके संस्थान को भेजते हुए बदले में पूछा कि उस प्रयोग का आरंभ करने वाला कौन है? क्या आप सोच सकते हैं कि यह डा० बन कौन थे?

वह विख्यात पक्षी-विद्याविद डा० हांग-गूवन मेरे मित्र प्योंग-हों बन के पिता। कह सकते हैं कि पुत्र द्वारा छोड़ी गई चिड़िया उड़कर पिता के सीने से जा लगी। विश्वास नहीं होता? जी, यह घटना सच है। संयोग होगा? हो सकता है लेकिन आदमी यह भी तो सोच सकता है कि सारी घटनाओं में संयोग से अधिक भी कुछ हो सकता है। इन अकल्पनीय घटना का हाल कुछ ही दिन पहले सांके-संस्थान के डाइरेक्टर डा० इन्यू ने मेरे मित्र को भेजा।

इस तरह मेरे मित्र को पता चला कि उसके पिता जीवित थे। मेरे मित्र ने बताया कि डा० इन्यू ने चिट्ठी में लिखा , हम इंसान निमार्ण करते हैं और इस प्रकार की त्रासदियों के शिकार हो जाते हैं , क्योंकि हम इंसान हैं। उन्होंने गहरी हमदर्दी दिखाई और उस दिन की आशा व्यक्त की जब हम ऐसी

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने यरुशलम को इस्राइल की राजधानी के तौर पर मान्यता देकर न केवल मध्य एशिया की स्थिति को और विस्फोटक बना दिया है , साथ ही अमेरिका को भी भारी जोखिम में डाल दिया है। यद्यपि वर्ष 1980 में इस्राइल ने पूर्वोत्तर हिस्से पर कब्जा जमाने के साथ ही यरुशलम को अपनी सनातन राजधानी करार देने में देरी नहीं की थी लेकिन न सिर्फ संयुक्त राष्ट्र बल्कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने भी इस्राइल के इस कदम के प्रति कभी सहमति नहीं दी थी।

संयुक्त राष्ट्र ने यरुशलम के पूर्वी हिस्सों को हड़पने पर आपत्ति जताई थी और इस विकल्प को एक सिरे से खारिज कर दिया था कि आंशिक या पूर्ण रूप से यह इलाका कभी इस्राइल की राजधानी भी बन सकता है। तब संयुक्त राष्ट्र ने इस्राइल को चेतावनी तक दी थी कि ऐसा कोई भी दावा अवैध करार दिया जाएगा। इस गंभीर मुद्दे पर ट्रंप ने एकतरफा ऐलान करके पूरी दुनिया से चुनौती मोल ले ली है।

फलस्तीन में लोग इसे जंग की शुरूआत के तौर पर देख रहे हैं और चरमपंथी समूह हमास पहले ही कह चुका है कि वह हिंसा के लिए तैयारी कर रहा है। तुर्की के नेता कह रहे हैं कि यह इलाका रिंग ऑफ फायर में तब्दील हो चुका है। मौजूदा संघर्ष के चलते मध्य एशिया अब एक ऐसे बम का सामना कर रहा है जिसकी पिन निकाली जा चुकी है। विश्व के सबसे दुर्दान्त आतंकी संगठन आईएस ने खून की नदियां बहाने की धमकी दे डाली है।

फ्रांस और ब्रिटेन भी यरुशलम को बतौर राजधानी मान्यता देने के ट्रंप के फैसले की आलोचना कर रहे हैं जबकि अमेरिका का खास दोस्त सऊदी अरब भी इसे गैर-जिम्मेदाराना बता रहा है। इराक और ईरान समेत अरब लीग इस फैसले को मुसलमानों को उकसाने वाला कदम मान रहे हैं। वे मानते हैं कि इसके चलते कट्टर और हिंसात्मक प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलेगा।

स्थिति बहुत विस्फोटक हो चुकी है , शांति प्रक्रिया की आवाज खामोश हो चुकी है। यरुशलम को लेकर विवाद बहुत पुराना है। उसके मशहूर होने की दो वजह हैं। एक धार्मिक वजह है और दूसरी राजनीतिक। धार्मिक वजह यह है कि यह तीन धर्मों के लिए असीम श्रद्धा का केन्द्र है। यहूदी , ईसाई और इस्लाम।

टेम्पल माउंट पर ही सुलेमानी मन्दिर बना है , जिसे यहूदी भी काफी पवित्र मानते हैं , कई बार उसे ध्वस्त किया गया। उसके अवशेष ही बचे हैं तो मुसलमानों की अल अक्सा मस्जिद भी यहीं बनी है। मुसलमानों का मानना है कि मोहम्मद साहब का अन्तिम समय इसी शहर में बीता और यहीं से वो जन्नत गए थे।

सुन्नी मुस्लिमों के लिए मक्का और मदीना के बाद दुनिया की तीसरी सबसे पवित्र जगह है। दूसरे यहूदी मन्दिर को गिराकर बनाया गया डोम आॅफ रॉक भी इस्लाम मानने वालों के लिए श्रद्धा का केन्द्र है। यरुशलम में 73 मस्जिदें हैं तो 158 चर्च हैं। ईसाई मानते हैं कि यही वो शहर है जहां कभी ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया गया था।